अलेक्सान्द्र पुश्किन

चुनी हुई रचनाएं
दो खण्डों में

खण्ड १

काव्य-कानन

" ... पुश्किन ... महान रूसी जन-कवि, सुन्दरता और सूझ-बूझ से मन मोह लेनेवाली कथाओं के स्रष्टा, प्रथम यथार्थवादी पद्य उपन्यास 'येव्गेनी ओनेगिन' के लेखक, हमारे सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक नाटक 'बोरीस गोदुनोव' के रचयिता, ऐसे कवि थे, जिनसे अभी तक न तो कोई काव्य-सौन्दर्य और न ही भावनाओं-विचारों की अभिव्यक्ति की शक्ति की दृष्टि से बराबरी कर पाया है, पुश्किन ही महान रूसी साहित्य के आदि प्रवर्तक थे।"

म० गोर्की

अलेक्सांद्र सेर्गेयेविच
पुश्किन

अलेक्सान्द्र पुश्किन

चुनी हुई रचनाएं दो खण्डों में

खण्ड १

काव्य-कानन

प्रगति प्रकाशन
मास्को

अनुक्रम

खण्ड-काव्य

कथाएं

नाटिकाएं

भूमिका

पुश्किन के बारे में कुछ शब्द

जीवन और सृजन के चरमोत्कर्ष पर मारे जानेवाले पुश्किन अपने सभी अनुगामियों और उस महान साहित्य के सभी साधकों-महारथियों के लिये, जिनमें लेव तोलस्तोय भी शामिल हैं, मूर्धन्य और सबसे अधिक मेधावी बने रहे, चाहे उन्होंने उनसे कितना ही अधिक लम्बा जीवन क्यों न पाया हो। हम सबके लिये भी वे आज ऐसे ही हैं। सच कहा जाये तो कुछ बढ़कर ही हैं, क्योंकि हमारे समय के पुश्किन उस पुश्किन से अधिक महान हैं जिनसे हमारे पहले की पीढ़ियां उनसे परिचित थीं।

विस्सारिओन बेलीन्स्की ने लिखा है –

"पुश्किन उन चिरजीवी और चिर गतिशील व्यक्तियों में से हैं, जो उसी बिन्दु पर स्थिर होकर नहीं रह जाते, जिसपर मृत्यु उन्हें छीन ले जाती है, बल्कि जो समाज की चेतना में निरन्तर विकासमान रहते हैं।"

जिस महान रूसी साहित्य के विश्वव्यापी महत्व को बहुत पहले ही स्थायी तथा निर्विवाद रूप से स्वीकार कर लिया गया है, उसके जन्मदाता और प्रवर्तक, ऐसे कलाकार, जिनकी सृजन प्रतिभा का अब हमारे शत्रु भी कम मूल्यांकन करने का प्रयास नहीं करते, हमारे महान बहुजातीय देश के सबसे लोकप्रिय, चहेते और सबसे अधिक पढ़े जानेवाले कवि हैं।

पुश्किन का चमत्कार तो इस बात में भी है कि वह बुरा लिख ही नहीं सकते थे – उनकी प्रारम्भिक, अनुकरणात्मक कवितायें भी ऐसे स्तर पर रची गयी हैं, बहुधा उन साधनों की सीमा से कहीं आगे हैं, जो रूसी काव्यकला को उस समय उपलब्ध थे।

पुश्किन-साहित्य के स्वर्णकोश में क्या कुछ भरा हुआ है, इसका अनुमान लगाना आसान नहीं है। इसमें केवल 'येव्गेनी ओनेगिन', 'बोरीस गोदुनोव', 'तांबे का घुड़सवार', प्रेम तथा दार्शनिक विचारों से ओतप्रोत कविताएं, लघु त्रासदियां, लोक कथायें, 'कप्तान की बेटी' और अन्य गद्य-रचनायें ही नहीं, बल्कि समालोचनात्मक लेख और यात्रा-विवरण, इतिहास-सम्बन्धी शब्द-चित्र और बहुत ही श्रेष्ठ शैली में लिखे गये पत्रों के अलावा न जाने और क्या कुछ सम्मिलित है।

जब हम पुश्किन के कृतित्व की चर्चा करते हैं, तो "पारंगतता" शब्द का उपयोग भी अटपटा प्रतीत होता है, "जादू" कहीं अधिक उपयुक्त लगता है, यद्यपि हम भली भांति यह जानते हैं कि "कला देवियों के इस प्रेम-पात्र" को हमें स्तम्भित कर देनेवाली कला-पराकाष्ठा प्राप्त करने के लिये निरन्तर कितना अधिक श्रम एवं कड़ी साधना करनी पड़ी होगी।

जब हम पुश्किन की सर्वश्रेष्ठ रचनाओं से रस-विभोर होते हैं, तो सचमुच हमारे लिये यह कल्पना करना कठिन होता है कि उन्हें लिखा गया है, अर्थात् वे अलग-अलग बिखरे हुए ऐसे शब्द और पंक्तियां हैं, जो किसी कलाकार की इच्छा से ही एक स्थान पर खिंच आये हैं और उन्होंने ऐसा सुन्दर रूप धारण कर लिया है। नहीं, हमें ऐसा लगता है मानो ये रचनायें स्वयं जीवन और प्रकृति में इसी तरह से विद्यमान थीं और उन्हें ज्यों का त्यों वहां से ले लिया गया है।

पुश्किन की आत्मा का वर्तमान की तुलना में, भविष्य से कुछ कम सूत्र नहीं जुड़ा हुआ था, वह भविष्य की ओर ललकती थी। वह अपने समय में, अपने समकालीनों और अपने वातावरण में जिये, किन्तु साथ ही दूसरी पीढ़ियां के साथ भी जीते रहे, हमारे साथ भी जी रहे हैं और उनके साथ भी जियेंगे, जो हमारा स्थान लेंगे।

पुश्किन की साहित्यिक धरोहर का मूल्यांकन कठिन है। यह अकेली, बेशक बहुत भव्य ही चोटी नहीं, बल्कि अनेक शिखरों तथा असंख्य ऊंचे उभारोंवाली शक्तिशाली शृंखला है।

अलेक्सान्द्र त्वार्दोव्स्की

कविताएं

चादायेव के नाम

बहला सके न बहुत समय तक
प्यार, ख्याति के भ्रम औ' आशा,
ये यौवन के रंग लुटे यों
जैसा सपना, भोर-कुहासा।
किन्तु निठुर-निर्मम सत्ता के
जुए तले भी हृदय धधकता,
उत्कट चाह, लिये विह्वलता
वह आह्वान राष्ट्र का सुनता।
बेचैनी से राह देखते
आज़ादी के पावन क्षण की,
जैसे करे प्रतीक्षा प्रेमी
प्रिय से निश्चित मधुर मिलन की।
हममें जब तक मुक्ति-ज्वाल है
मन में गौरव का स्पन्दन है,
मेरे मित्र, कहें अर्पित सब
राष्ट्र, तुम्हें, जीवन, तन-मन है!
साथी, तुम विश्वास करो यह
चमक उठेगा सुखद सितारा,
रूस नींद से जागेगा ही,
खंडहर पर तानाशाही के
लोग लिखेंगे नाम हमारा।
१८१८

* * *

धीरे-धीरे लुप्त हो गया दिवस उजाला,
नील कुहासा सन्ध्या का छाया सागर पर,
आये आये पवन झकोरा, लहर उछाला
औ' लहराओ तुम उदास-से विह्वल सागर।
दूर कहीं पर साहिल नज़र मुझे है आता,
मुझपर जादू करनेवाली दक्षिण धरती,
मैं अनमन बेचैन उधर ही बढ़ता जाता,
स्मृतियों की सुख-लहर हृदय को व्याकुल करती।
अनुभव होता मुझे – भरी हैं आंखें फिर से
हृदय डूबता और हर्ष से कभी उछलता,
मधुर कल्पना चिर परिचित फिर आयी घिर के
वह उन्मादी प्यार पुराना पुनः मचलता,
आती याद व्यथायें, मैंने जो सुख पाला,
इच्छा-आशाओं की छलना, पीड़ित अन्तर...
आये आये पवन झकोरा, लहर उछाला,
औ' लहराओ तुम उदास-से विह्वल सागर।
उड़ते जाते पोत, दूर मुझको ले जाना
इन कपटी, सनकी लहरों को चीर भयंकर,
किन्तु न केवल करुण तटों पर तुम पहुंचाना
मातृभूमि है जहां, जहां है धुंध निरन्तर,
वहीं कभी तो धधक उठी थी मेरे मन में
प्यार-प्रणय, भावावेशों की पहली ज्वाला,
कला-देवियां छिप-छिप मुस्कायीं आंगन में
था यौवन को मार गया तूफ़ानी पाला,
जहां ख़ुशी तो लुप्त हुई थी कुछ ही क्षण में
हृदय चोट ने दर्द सदा को ही दे डाला।
तभी-तभी तो मातृभूमि तुमसे भागा था
नये-नये अनुभूति-जगत का मैं दीवाना,
भागा तुमसे दूर हर्ष-सुख के अनुगामी
यौवन, मित्रों से था जिनको कुछ क्षण जाना,

जिनकी खुशियों, रंग-रलियों के चक्कर में पड़
अपना सब कुछ, प्यार हृदय का चैन लुटाया,
खोयी अपनी आज़ादी, यश, मान गंवाया
छला गया जिन रूपसियों से, उन्हें भुलाया,
मेरे स्वर्णिम यौवन में जो लुक-छिप आयीं
उन सखियों की स्मृतियों का भी चिह्न मिटाया...
किन्तु हृदय तो अब भी पहले सा घायल है
मिला न कोई मुझको दर्द मिटानेवाला,
मरहम नहीं किसी ने रखा, इन घावों पर
आये आये पवन झकोरा, लहर उछाला
औ' लहराओ तुम उदास-से विह्वल सागर।
१८२०

* * *

उड़ते हुए जलद , दल-बादल बिखरे जाते सारे
ओ संतप्त, उदास सितारे, ओ संध्या के तारे!
रजत-रुपहले मैदानों को किरण तुम्हारी करती
काले शृंगों में, खाड़ी में रंग रुपहला भरती।
ऊंचे नभ में तेरी मद्धिम लौ है मुझे सुहाती
सोये हुए हृदय में मेरे चिन्तन, भाव जगाती,
याद उदय-क्षण मुझे तुम्हारा, नभ दीपक पहचाने
उस धरती पर जहां हृदय बस, सुख-सुषमा ही जाने,
जहां घाटियों में अति सुन्दर, सुघड़ चिनार खड़े हैं
जहां ऊंघती कोमल मेंहदी, ऊंचे, सरो बड़े हैं,
जहां दुपहरी में लहरों का मन्द, मधुर कोलाहल
वहीं, कभी पर्वत पर अपना हृदय लिये अति आकुल,
भारी मन से मैं सागर के ऊपर रहा टहलता
नीचे, घाटी के प्रकाश को तम जब रहा निगलता,
तुम्हें ढूंढ़ने को उस तम में युवती दृष्टि घुमाये
तुम उसके हमनाम यही वह सखियों को बतलाये।
१८२०

बन्दी

बन्द सीखचों के पीछे हूं जहां तमस, सीलन
बन्दी घर में बड़ा हुआ मैं, हुआ यहीं पालन,
औ' उदास वह साथी मेरा डैने फैलाता
खिड़की के नीचे शिकार को नोच-नोच खाता।

तनिक नोचकर, उसे छोड़ फिर, खिड़की से झांके
मानो मेरे ही भावों को वह मन में आंके,
चीत्कार भी, उसकी नज़रें जैसे यही कहें
वह मानो अनुरोध कर रहा, "आओ संग उड़ें!

हम तुम तो आज़ाद विहग, उड़ने का क्षण आया
चलें, जहां मेघों के पीछे धवल शृंग-छाया,
वहां, जहां पर नीला-नीला सागर लहराता
वहां, जहां पर पवन और बस, मैं ही मंडराता!"

१८२२

रात

तेरे लिये रसीली, प्रेम-पगी वाणी मेरी
अर्ध-रात्रि का मौन, निशा जो भेदे अंधेरी,
निकट पलंग के मोम गल रहा, जलती है बाती
झर-झर झर-झर निर्झर-सी कविता उमड़ी आती,
डूबी हुई प्रणय में तेरे, बहती सरितायें
चमक लिये तम में दो आंखें सम्मुख आ जायें,
वे मुस्कायें, और चेतना सुनती यह मेरी
मेरे मीत, मीत प्यारे तुम... प्यार करूं... मैं हूं तेरी... हूं तेरी।

१८२३

सागर से

ओ, आज़ाद तरंगित सागर, विदा, विदा!
मुझे दिखाते हो तुम अन्तिम रूप-छटा,
अपनी नीली लहरें मेरी ओर बढ़ा
झलमल करते हो गर्वीली सुन्दरता।

एक मित्र की तरह दुखी तेरी मरमर
और विदा क्षण में मानो मनुहार मधुर,
शोकाकुल कोलाहल, तेरा शोर सबल
बार आख़िरी सुनता हूं यह गरज प्रबल।

अपने मन में मैं असीम-सी चाह लिये
तीर-तटों पर तेरे घूमा हूं अक्सर,
धुंधले-धुंधले भावों से ले व्याकुल उर
और कसकते सपनों की पीड़ा लेकर।

बहुत भली लगती थीं तेरी हुंकारें
दबी-घुटी-सी ध्वनियां औ' स्वर अतल गहन,
सन्ध्या के घिर आने पर नीरवता भी
और क्रोध में आने पर गर्जन-तर्जन।

मामूली-सी नाव किसी मछियारे की
तेरी इच्छा औ' अनुकम्पा के बल पर,
बड़े मज़े से बहे तरंगों में, जल में,
पर सहसा यदि मचलो ग़ुस्से में आकर
कितने ही जलयान डुबो डालो पल में।

चाहा तेरे सूने, इस निश्चल तट को
छोड़ूं सदा सदा को, किन्तु न कर पाया,
तुझे बधाई दूं मन के उद्‌गारों से,
तेरी तुंग तरंगों को शोभित कर दूं
अपनी कविता, रचना के उपहारों से।

तू ने देखी राह, पुकारा ... मैं ज़ंजीर न तोड़ सका
बहुत हृदय ने चाहा व्यर्थ हृदय हुलसा,
किसी प्रबल अनुराग मोह में बंधा-बंधा
मैं तो सागर तट पर ही बस, खड़ा रहा।

मैं इसका अफ़सोस करूं क्यों? और किधर
अब मेरी आज़ाद, मस्त किस ओर डगर?
तेरे इस नीले-नीले वीराने में
एक चीज़ ने बांधा मेरा हृदय, मगर।

है इसमें चट्टान, समाधि है एक अमर
जहां सो रहीं शीतल निद्रा में दबकर,
वे स्मृतियां जो छू आयी थीं ख्याति-शिखर
हुआ जहां पर नेपोलियन का ख़त्म सफ़र।

वहां यातनाओं में उसने दम तोड़ा
और कुछ समय बाद घिरा तूफ़ान नया,
एक अन्य मेधावी ने हमको छोड़ा
एक बड़ा युग-चिन्तक जग से चला गया।

उसके शव पर बेहद रोई आज़ादी
विजय-मुकुट वह जग में छोड़ गया नायक,
ऊंचा क्रन्दन करो, व्यथित होकर चीखो
ओ सागर, वह तेरी लहरों का गायक।

तेरा बिम्ब हृदय पर उसके अंकित था
और आत्मा उसने तेरी थी पाई,
तेरी तरह प्रबल, वह बन्धन-मुक्त रहा
तेरे जैसी मिली खिन्नता, गहराई।

शून्य हुआ संसार ... कहां तुम अब मुझ को
बोलो सागर, कहां मुझे ले जाओगे?
लोगों का है भाग्य एक-सा सभी जगह,

जहां कहीं कुछ भला, वहीं बन्दूक लिये
किसी निरंकुश को तुम बैठा पाओगे।

विदा, विदा ओ सिन्धु! रहेगी सदा बसी
यह गम्भीर तुम्हारी सुषमा इस मन में,
और सुनूंगा बहुत दिनों तक गूंज गहन
तुम से होकर दूर, कहीं सन्ध्या क्षण में।

मुझे वनों में, औ' नीरव वीरानों में
अनुभव होगा तेरी स्मृतियों का स्पन्दन,
देखूं तेरी जलग्रीवायें, चट्टानें
मैं प्रकाश-तम, सुनूं तरंगों का गुंजन।

१८२४

बाख़्चीसराय महल का फ़व्वारा

ओ फ़व्वारे प्रणय-प्यार के, जिसमें है स्पन्दन, धड़कन
दो गुलाब के फूल तुम्हारे पास आज लाया उपहार,
मुझे मधुर लगता तेरा स्वर, जो गूंजा करता हर क्षण
प्यारी लगती काव्यमयी यह मुझको तेरी आंसू धार।

रजत-रुपहले बिन्दु तुम्हारे शबनम से प्यारे-प्यारे
मुझको छूते, उनसे होता शीतलता का सुख-संचार,
झर-झर-झर झरते जाओ, ओ फ़व्वारे, ओ फ़व्वारे...
और निहित जो तुम में गाथा, बतलाओ उसका आधार...

ओ फ़व्वारे प्रणय-प्यार के दुख में डूबे फ़व्वारे!
तेरे सुन्दर पत्थर से मैं पूछ रहा हूं बारंबार,
दूर-दूर तक फैल चुके हैं, मधुर प्रशंसा गान तुम्हारे
किन्तु मारीया के बारे में क्यों तुम बैठे चुप्पी मार...

धुंधला-धुंधला हरम हुआ था रौशन औ' उजला जिससे
क्या उसको भी गया भुलाया, दिया गया है यहां बिसार?
या कि मारीया, ज़ारेमा के बिल्कुल झूठे हैं क़िस्से
या कि रचा था उन्हें किसी ने मधुर कल्पना पंख-पसार?

या कि सुखद सपने ने मानो अन्धकार के मरुथल में
कोई बिम्ब बनाया, कोई कल्पित चित्र किया तैयार,
कोई परछाईं या छाया जिसको मिटना हो पल में
वह धुंधला आदर्श रूप था जिसमें कोई सत्य न सार?

१८२४

*** के नाम

मुझे याद है वह अद्भुत क्षण
जब तुम मेरे सम्मुख आईं,
निर्मल, निश्छल रूप छटा-सी
जैसे उड़ती-सी परछाईं।

घोर उदासी, गहन निराशा
जब जीवन में कुहरा छाया,
मन्द, मृदुल तेरा स्वर गूंजा
मधुर रूप सपनों में आया।

बीते वर्ष, बवंडर टूटे
हुए तिरोहित स्वप्न सुहाने,
किसी परी-सा रूप तुम्हारा
भूला, वाणी, स्वर पहचाने।

सूनेपन, एकान्त-तिमिर में
बीते, बोझिल, दिन निस्सार,
बिना आस्था, बिना प्रेरणा
रहे न आंसू, जीवन, प्यार।

पलक आत्मा ने फिर खोली
फिर तुम मेरे सम्मुख आईं,
निर्मल, निश्छल रूप छटा-सी
मानो उड़ती-सी परछाईं।

हृदय हर्ष से फिर स्पन्दित है
फिर से झंकृत अन्तर-तार,
उसे आस्था, मिली प्रेरणा
फिर से आंसू, जीवन, प्यार।

१८२५

जाड़े की शाम

नभ को ढकता धुंध, तिमिर से
बर्फ़ उड़ाता, अंधड़ आता,
शिशु-सा कभी मचलता, रोता
कभी दरिन्दे-सा चिल्लाता,
टूटे-फूटे छप्पर का वह
सहसा सूखा फूस हिलाता,
और कभी भटके पंथी-सा
आ खिड़की का पट खटकाता।

जर्जर, टूटा हुआ झोंपड़ा
सूना, जहां अंधेरा छाया,
बैठी हुई निकट खिड़की के
क्यों तुम चुप हो बूढ़ी आया?
क्या इस अंधड़, कोलाहल ने
मेरी प्यारी तुम्हें थकाया?
या चरखे की घूं-घूं ने ही
लोरी देकर तुम्हें सुलाया?

मेरे इस सूने यौवन की
मात्र संगिनी, लाओ प्याला,
सब दुख-दर्द डुबोयें उसमें
और हृदय हर्षाये हाला,
सागर पार शान्ति से चिड़िया
रहती थी, यह गीत सुनाओ,
कैसे प्रातः पानी लाने
जाती थी युवती यह गाओ।

नभ को ढकता धुंध, तिमिर से
बर्फ़ उड़ाता, अंधड़ आता,
शिशु-सा कभी मचलता, रोता
कभी दरिन्दे-सा चिल्लाता,
मेरे इस सूने यौवन की
मात्र संगिनी, लाओ प्याला,
सब दुख-दर्द डुबोयें उसमें
और हृदय हर्षाये हाला।

१८२५

बाख़ुस * का स्तुति-गान

मूक हुए क्यों ख़ुशी भरे स्वर?
आओ, बाख़ुस के गुण गायें।
युग-युग जियें सुघड़ ललनायें,
वे संगिनियां, वे प्रमदायें
जो नित हमपर प्यार लुटायें!
अपने जाम लबालब भर लो!
मदिरा ढालो
जाम सम्भालो,
औ' मुन्दरियां उनमें डालो!

* बाख़ुस – सुरा-देवता। — अनु०

आओ, अपने जाम उठायें, एक साथ उनको खनकायें,
चिर जीवी हों कला-देवियां, बुद्धि अमर हो, यह चिल्लायें।

प्रतिभा सूर्य चमकते जाओ!
जैसे भोर, उषा आने पर,
ज्योति दीप की फीकी पड़ती
वैसे ही जब
अमर बुद्धि का सूर्य गगन में
चमक दिखाता, छद्म बुद्धि का
फीका पड़ता रंग प्रखर,
जय हो, जय हो सूर्य तुम्हारी
रहे न जग में
तमस, तिमिर!

१८२५

पैग़म्बर

दिव्य-ज्योति की विफल तृषा ले
मैं था मरु में भटक रहा,
देवदूत तब पंखोंवाला
सहसा सम्मुख प्रकट हुआ;
सपने-सी हल्की अंगुलियां
दी नयनों से तनिक छुआ,
भीत गरुड़-सा मैं तब चौंका
औ' भविष्य जगमगा उठा।
कान छुए जब उसने मेरे
गूंज हुई, ज्यों वज्र गिरा,
नभ दूतों के पंखों का स्वर
सुना, गगन कांपा सिहरा,
मुझे सुनाई दी सागर की
हलचल, जलचर जहां चलें,

घाटी में अंगूर लतायें
रस खींचें औ' बढ़ें, फलें।
देवदूत ने झुक मुझपर तब
जीभ निकाली पाप भरी,
भय से मेरे होंठ सुन्न थे
मुंह से लोहू धार झरी,
उस झूठी, कपटी जिह्वा की
जगह सांप की जीभ धरी।
ले कटार छाती को चीरा
हृदय धड़कता काट दिया,
और दहकते अंगारे को
दिल कारा में बन्द किया,
शव-सा पड़ा हुआ था मरु में
गूंजा तब प्रभु का आह्वान –
"ओ पैग़म्बर, उठो, सुनो तुम
दो मेरे शब्दों पर कान,
मेरी इच्छा को लेकर तुम
सभी जगह जग में जाओ,
दहक रहे शब्दों से अपने
सब के अन्तर धधकाओ।"
१८२६

जाड़े में सड़क पर

लहर-लहरिया कुहरा नभ में छाया है
उसे चीर शशि अपनी राह बनाता है,
औ' उदास-से वन-आंगन, वन-प्रांगन में
वह उदास-सी चन्द्र-छटा फैलाता है।
सूना-सूना बर्फ़-ढका पथ सम्मुख है
और त्रोइका* उसपर भागी जाती है,

* तीन घोड़ों की बर्फ़ पर फिसलनेवाली गाड़ी। – **अनु०**

सम स्वर में उसपर बजती टन-टन घण्टी
मन में व्याकुल तड़प, ऊब उपजाती है।

कोचवान के लम्बे गीतों-गानों में
मुझको मानो कुछ अपना-सा लगता है,
कभी ख़ुशी से मस्त-तरंगित हो उठता
कभी व्यथा-पीड़ा से हृदय कसकता है...

कहीं झोंपड़ा-झुग्गी, कोई दीप नहीं...
बस, सुनसान, बर्फ़ का ही है राज यहां,
धारीदार मील के खम्भे ही केवल
मुझको जब-तब पड़ें दिखाई जहां-तहां।

ऊब, उदासी मन को घेरे... कल, नीना!
कल मैं प्यारी, पास तुम्हारे आऊंगा,
मगन-हृदय से बैठ निकट अंगीठी के
तुमको ही देखूंगा, नहीं अघाऊंगा।

टिक-टिक करती नियत चक्र पर चल सूई
बीती आधी रात – हमें बतलायेगी,
निकट न कोई रहे पराया, वह तब भी
हम दोनों को अलग नहीं कर पायेगी।

घोर उदासी, नीना! पथ है ऊब भरा
कोचवान भी अब तो चुप हो ऊंघ रहा,
समस्वर में बस घण्टी बजती जाती है
और चांद के मुख पर छाया है कुहरा।

१८२६

आया के प्रति

मेरे बुरे दिनों की साथी, मधुर संगिनी
बुढ़िया प्यारी, जीर्ण-जरा!
सूने चीड़ वनों में तुम ही राह देखतीं
कब से मेरी, नज़र टिका।
पास बैठकर खिड़की के भारी मन से
तुम पहरेदारी करतीं,
और सिलाइयां दुर्बल हाथों में तेरे
कुछ क्षण को धीमी पड़तीं।
टूटे-फूटे फाटक से अंधियारे पर
दृष्टि तुम्हारी जम जाती,
और किसी बेचैनी, चिन्ता, शंका से
हर पल धड़क उठे छाती,
कभी तुम्हें लगता है जैसे छाया-सी
सहसा है सम्मुख आती।

१८२६

* * *

साइबेरिया की उन गहरी खानों में भी
तुम गर्वीला धीरज अपना नहीं गंवाना,
व्यर्थ न जायेंगे ऊंचे आदर्श तुम्हारे
ऐसे खटना, पिसना, यों श्रम-स्वेद बहाना।

दुख-दर्दों के बाद इसे तुम निश्चय मानो
आस-किरण की ज्योति तमस में आयेगी ही,
होगा तब संचार हृदय में सुख, साहस का
वह मनवांछित घड़ी संग में लायेगी ही।

अनुभव होगी तुम्हें दोस्ती बन्दीघर में
प्यार हमारा और हृदय का जो नाता है,

जैसे निर्वासित जीवन के तहख़ानों में
मेरा स्वर आज़ाद पहुंच तुम तक जाता।

निश्चय ही ज़ंजीरें सारी टूट गिरेंगी
बन्दीघर भी खण्ड-खण्ड हो ढहें, गिरेंगे,
हुलस खुशी से आज़ादी तब गले मिलेगी
और बन्धुजन खड्ग स्नेह से भेंट करेंगे।

१८२७

* * *

अरी रूपसी, मेरे सम्मुख मत गाओ
करुण जार्जिया गीत,
किसी दूसरे तट, जीवन की याद दिलायें
भूला हुआ अतीत।

क्रूर तराने तेरे मुझपर ज़ुल्म करें
मुझको स्मरण करायें,
रात चांदनी, स्तेप, दुखी-सी वह युवती
स्मृतियां घिर घिर आयें।

देख तुझे उस प्यारी, दुख की छाया को
भूल तनिक मैं जाता,
लेकिन जब तुम गाती हो, उसको फिर से
बरबस सम्मुख पाता।

अरी रूपसी, मेरे सम्मुख मत गाओ
करुण जार्जिया गीत,
किसी दूसरे तट, जीवन की याद दिलायें
भूला हुआ अतीत।

१८२८

अंतजर

सूने मरुथल में मुरझाया, औ' सूखा-सा
जहां बरसती आग, दहकती जहां धरा है,
उस पूरे सुनसान जगत में एक अंतजर
क्रूर सन्तरी जैसा वह विष-वृक्ष खड़ा है।

प्यासे, जलते मैदानों में उसे प्रकृति ने
एक दहकते हुए कुदिन में जन्म दिया था,
उसकी शाखाओं की मुर्दा हरियाली को
और जड़ों को उसने विषमय तभी किया था।
दोपहरी की गर्मी से जब तप उठता है
ज़हर छाल से उसकी टप-टप तब झरता है,
और शाम को जिस क्षण ठण्डा हो जाता है
रूप राल का बिल्लौरी तब वह धरता है।

नहीं डाल पर उसकी कोई पक्षी बैठे
और बाघ भी पास न उसके कोई जाये,
केवल काली आंधी ही इस मृत्यु-वृक्ष पर
झपटे, भागे दूर, हवा में ज़हर बसाये।

और अगर भूले से कोई बादल आकर
ऊंघ रहे उसके पत्तों की प्यास बुझाता,
उसकी गीली डालों से तब बूंद बूंद बन
विष ही तपती बालू पर नीचे गिर जाता।

किन्तु किसी राजा ने अपने दास विवश को
इसे खोजने को जाने का हुक्म सुनाया,
वह बेचारा शीश झुका चुपचाप चल दिया
और ज़हर ले अगले दिन वापस घर आया।

लाया घातक राल और वह शाखायें भी
जिन पर पत्ते सूखे-सूखे, मुरझाये थे,
और दास के पीले-पीले विकृत मुख पर
ठण्डे स्वेद कणों के झरने बह आये थे।

ले आया, लेकिन दुबलाया और कुटी में
फटी दरी पर, जा बिल्कुल बेजान गिरा वह,
चरणों में ही उस अजेय स्वामी के अपने
तड़प-तड़प कर ऐसे ही असहाय मरा वह।

उस राजा ने, उस स्वामी ने, उसी ज़हर से
ज़हरीले औ' आज्ञाकारी तीर बनाये,
और मृत्यु के दूत बने थे जो शर घातक
निकट, दूर, सब ओर, सभी वे तीर चलाये।

१८२८

* * *

जार्जिया के गिरि-टीलों को रात्रि-तिमिर ने घेरा है
औ' अरागवा नदी सामने कल-छल शोर मचाती है,
बेशक दुख में डूबा-डूबा, पर हल्का मन मेरा है
क्योंकि तुम्हारी याद उदासी लाती, मन तड़पाती है।
एक तुम्हारे, सिर्फ़ तुम्हारे कारण व्यथा उदासी है
और न कोई पीड़ा मुझको, चिन्ता नहीं सताती है,
फिर से मेरी तप्त आत्मा पुनः प्यार की प्यासी है
क्योंकि प्यार के बिना रह सके, हाय, न यह कर पाती है।

१८२९

जाड़े की सुबह

पाला भी है, धूप खिली है, अद्भुत दिन है!
पर तू मेरी रानी अब तक नींद मगन है–
जागो, जागो, मधुरे, अब तो जाग उठो तुम
निद्रा सुख में डूबे अपने नयन उघारो,
स्वयं उत्तरी तारे-सी बन ज्योति अनूठी
जाग, उत्तरी विभा-प्रभा की छटा निहारो।

याद तुम्हें, कल कैसा था तूफ़ान भयंकर
घुप्प अंधेरा-सा छाया था धुंधले नभ पर,
पीला-पीला धब्बा-सा बन चांद गगन में
झांक रहा था धूमिल-धूसर मेघ सघन से,
तुम उदास-सी बैठी थीं, आकुल-व्याकुल हो
किन्तु आज ... प्रिय देखो तो तुम वातायन से:

कैसा निर्मल, कैसा नीला-नीला अम्बर
उसके नीचे अति सुन्दर क़ालीन बिछाकर,
सुख से लेटी बर्फ़ चमकती रवि-किरणों में
काली-सी छाया है अब झलमले वनों में,
पाले की चादर ओढ़े फ़र वृक्ष हरा है
और बर्फ़ के नीचे नाला चमक रहा है।

पीत-स्वर्ण कहरुबा चमक कमरे में छायी
चट-चट जलती लकड़ी, अंगीठी सुखदायी,
बैठ इसी के निकट और कुछ चिन्तन करना
भला लगेगा स्वप्न-जगत में मुक्त विचरना,
किन्तु न क्या यह अच्छा, स्लेज इधर मंगवायें
भूरी घोड़ी उसमें हम अपनी जुतवायें?

और सुबह की इसी बर्फ़ पर स्लेज बढ़ायें
मेरी प्यारी, ख़ूब तेज़ घोड़ी दौड़ायें,
जायें हम सूने खेतों में, मैदानों में
कुछ पहले जो बहुत घने थे, उन्हीं वनों में,
पहुंचें ऐसे वहां, जहां है नदी-किनारा
मेरे मन की ललक, मुझे जो बेहद प्यारा।

१८२९

* * *

मैंने प्यार किया है तुमको और बहुत सम्भव है अब भी
मेरे दिल में इसी प्यार की सुलग रही हो चिंगारी,
किन्तु प्यार यह मेरा तुमको और न अब बेचैन करेगा
नहीं चाहता इस कारण ही अब तुम पर गुज़रे भारी।

मैंने प्यार किया है तुमको, मूक-मौन रह आस बिना
हिचक, झिझक तो कभी जलन भी मेरे मन को दहकाये,
जैसे प्यार किया है मैंने सच्चे मन से डूब तुम्हें
हे भगवान, दूसरा कोई, प्यार तुम्हें यों कर पाये!

१८२९

* * *

चाहे घूमूं मैं सड़कों पर कोलाहल में
चाहे जाऊं मैं गिरजे में भीड़ जहां पर,
चाहे बैठूं मस्त युवाजन की टोली में
कुछ विचार तो सदा किये रहते मन में घर।

मैं कहता हूं ख़ुद से वर्ष उड़े जाते हैं
लोग यहां पर हमको जितने पड़ें दिखाई,
सबको ही तो जाना होगा यम के द्वारे
और किमी की घड़ी निकट है अन्तिम आई।

चाहे देखूं मैं बलूत को कहीं विजन में
यही सोचता – तुमने लम्बा जीवन पाया,
मैं विस्मृत हो जाऊंगा, तुम बने रहोगे
मेरे पिता-पितामह को ज्यों गया भुलाया।

अगर किसी प्यारे बच्चे को सहलाता हूं
"विदा, विदा!" – सोचा करता हूं अपने मन में,
रिक्त तुम्हारे लिये स्थान कर मैं चलता हूं
मुरझाना है मुझे, तुम्हें खिलना यौवन में।

इसी तरह के भावों और विचारों में मैं
अपना हर दिन, ऐसे ही हर वर्ष बिताता,
और इन्हीं के बीच मृत्यु के भावी क्षण का
कब वह आयेगा – ऐसा अनुमान लगाता।

मेरा भाग्य कहां पर अन्तिम क्षण लायेगा?
कहीं युद्ध में, दूर सफ़र में या सागर में?
या कि अस्थियां मेरे तन की ठंडी-ठिठुरी
पड़ी रहेंगी कहीं निकट घाटी के उर में?

कहां गलेगा बिना चेतना के शव मेरा
मेरे लिये समान सभी, कुछ फ़र्क न, अन्तर,
फिर भी अच्छा घर-आंगन के निकट रहे वह
ऐसी मन की साध, हृदय यह कहे निरन्तर।

और कामना यही, क़ब्र के पास सदा ही
हुमके यौवन, नाचे-गाये नित्य जवानी,
उदासीनता भूल, मुक्त हो प्रकृति वहां पर
करे वसन्ती रंग-छटा की चिर अगवानी।

१८२९

काकेशिया

खड़ा हुआ हूं फेन उगलती पर्वत-सरिता के तट पर
मेरे नीचे हिम-आच्छादित काकेशस के शृंग-शिखर,
किसी दूर की चोटी से ऊंचा उक़ाब नभ में उड़कर
मेरे बहुत निकट मंडराता निज पंखों को निश्चल कर।,
स्रोत दिखाई देते जिनसे निकलें नद, नाले, निर्भर
टूट गिरें चट्टानें नीचे, बड़े-बड़े भारी पत्थर।

मेरे नीचे बड़े चैन से, सुख से तैर रहे बादल
जल-प्रपात का उनमें से ही गूंज रहा है कोलाहल,
उनके नीचे नग्न-निपत्ती चट्टातें हैं बड़ी-बड़ी
सूखे झाड़ खड़े कुछ नीचे, है काई की परत चढ़ी,
वहां कुंज, झुरमुट-वृक्षों के, छाया, हरियाली अभिनव
हिरन मस्त हो भरें चौकड़ी, वहां खगों का रव-कलरव।

नीचे, वहीं पहाड़ों में ही घर हैं जिनमें लोग रहें
हरी-भरी ढालों पर चरतीं, मानो रेंग रही भेड़ें,
वह देखो, सुन्दर घाटी में चला जा रहा चरवाहा
छायादार तटों में बंधकर जहां बह रही अरागवा,
कोई निर्धन घुड़सवार, नीचे, दर्रे में जाता है
तेरेक दरिया जहां उछलता, भारी शोर मचाता है।

उछल-कूद वैसे ही करता, वैसे ही चिल्लाता है
देख मांस, बन्दी हिंसक-पशु, सब्र न ज्यों कर पाता है,
व्यर्थ क्रोध से पागल होकर, वह तट से टकराता है
भूखी लहरों से चट्टानें चाट लौट वह आता है...
क्षुधा-तृप्ति से रहे अपरिचित, वह खुशियों से वंचित है
उसके चारों ओर मूक-चट्टानों का बल संचित है।

इसी तरह मस्ती, आज़ादी को क़ानून दबाते हैं
विद्रोही जन दमन-चक्र से सत्ता की पिस जाते हैं,
इसी तरह से आज मौन काकेशस पीड़ा सहन करे
और पराया जुआ विवश अपने कन्धों पर वहन करे।

१८२६

शोक-गीत

रंग-रलियों के वे उन्मादी वर्ष न अब तो शेष रहे
उतरा नशा खुमार बचा, मन पर बस, बोझ अशेष रहे,
किन्तु पुरानी मदिरा जैसे और तेज़ हो जाती है
उसी तरह बीते अतीत की पीड़ा अधिक सताती है,
है उदास जीवन-पथ मेरा, दुख-दर्दों से नाता है
अधिक भयानक बन भविष्य का सागर झलक दिखाता है।

सुनो दोस्तो, किन्तु न फिर भी, करूं मृत्यु का मैं वन्दन
जीना चाहूं, ताकि सहूं दुख, करूं हृदय मन्थन, चिन्तन,
और जानता हूं मैं इतना, व्यथा, कष्ट, चिन्ताओं में
हर्ष और सुख मुझे मिलेगा, जीवन की विपदाओं में,
और अभी सुख-स्नात कभी हो मैं मस्ती में गाऊंगा
मधुर कल्पना-स्वप्न संजोकर, उनपर नीर बहाऊंगा,
यह सम्भव है, करुण अन्त जब निकट बहुत आ जायेगा
मुझे विदा कहने को फिर से प्रेम-प्रणय मुस्कायेगा।

१८३०

* * *

सुघड़ सुडौल सुन्दरी तुमको
मैं जब बांहों में भरकर,
हुलस प्यार के शब्द मधुरतम
कहता हूं भावुक होकर,

मूक-मौन रह, भुज-बन्धन से
मुक्त लचीला तन करतीं,
व्यंग्यपूर्ण मुस्कान लिये तब
दूर तनिक मुझ से हटतीं।
बहुत बेवफ़ा कभी रहा हूं
क़िस्से ऐसे तुमको ज्ञात,
बड़ी बेरुख़ी से सुनती हो
इसीलिये तुम मेरी बात...
कोसे बिना न मैं रह पाता
अपना अपराधी यौवन,
गुप-चुप रातों, बाग़ीचों में
विकल प्रतीक्षा, मधुर मिलन।
मैं रहस्यमय काव्य-सुरों को
कोसूं धीमे प्रेमालाप,
भोले मन की बालाओं का
प्रेम, अश्रु, फिर पश्चाताप।

१८३०

* * *

क्या रखता है अर्थ तुम्हारे लिये नाम मेरा?
डूबा हुआ उदासी में लहरों का विह्वल स्वर
कहीं दूर के तट पर जैसे जाता हहर, बिखर,
सूने वन में रात्रि समय ध्वनि खो जाती जैसे
मेरा नाम तुम्हारी स्मृति में मिटे कभी वैसे

लिखे गये हों स्मृति के पट पर जैसे कुछ अक्षर
उस भाषा में जिसे समझना, पढ़ना हो दुष्कर,
उसी तरह से मुड़े-मुड़ाये, जर्जर काग़ज़ पर
चिह्न नाम छोड़ेगा मेरा धुंधला-सा नश्वर।

क्या रखा है उसमें? जिसको विस्मृति ने निगला
नयी भावना, नये प्यार का जब हो कुसुम खिला,
ला न सकेगा तेरे मन में वह स्मृतियां प्यारी
जल न सकेगी उससे कोमल, पावन चिंगारी।

किन्तु उदासी और व्यथा जब मन को आ घेरे
नाम याद कर लेना मेरा तुम धीरे-धीरे,
कहना खुद से – याद किसी को मैं अब भी आती
किसी हृदय में मैं बसती, स्मृति मेरी धधकाती।

१८३०

भूत-प्रेत

उमड़ें बादल, घुमड़ें बादल
रजनी धुंधली, नभ धुंधला,
उड़ते हिम को कुछ चमकाती
धुंधली-धुंधली चन्द्रकला।
घोड़ा-गाड़ी दौड़ी जाती
घण्टी बजती है टन-टन ...
इन अनजाने मैदानों में
कांप-कांप उठता है मन!

"वाहक, घोड़े तेज़ करो तुम ..."
"साहब, इनमें शक्ति नहीं,
आंखें हिम से मुंदती मेरी
मार्ग न दिखता मुझे कहीं,
मैं बेबस हूं, हम पथ भटके
नहीं समझ में कुछ आता,
लगता कोई भूत-प्रेत ही
हमें सताता, भटकाता।

"वह देखो, वह करे तमाशे
फूंक मार, थूके मुझ पर,
जहां खड्ड, बिदका घोड़े को
ले जाता है वही उधर,
वह पथ का खम्भा विशाल बन
क्षण भर को सम्मुख आया,
चिंगारी-सा चमका, तम में
लुप्त हुआ बनकर छाया।"

उमड़ें बादल, घुमड़ें बादल
रजनी धुंधली, नभ धुंधला,
उड़ते हिम को कुछ चमकाती
धुंधली-धुंधली चन्द्रकला।
चक्कर काट-काट हम हारे
बन्द हुआ घण्टी का स्वर,
घोड़े रुके... "वहां क्या सम्मुख?" —
"कौन कहे, वह ठूंठ, भेड़िया?
काम न करती ज़रा नज़र।"

खीझे, रोये वात-बवंडर
घोड़े नथुने फिरकायें,
भूत भागता, तम में उसके
जलते नयन नज़र आयें,
घोड़े फिर से लगे दौड़ने
घण्टी टन-टन बजती है,
लगता यह विस्तार बर्फ़ का
बस, भूतों की बस्ती है।

क्षीण चांदनी में चन्दा की
वे सब चीखें-चिल्लायें,
पतझर के उड़ते पत्तों सम
भूत-प्रेत चक्कर खायें...

बेहिसाब वे! किधर जा रहे?
करुण स्वरों में क्यों गाते?
शादी करने को चुड़ैल की
भुतना दफ़नाने जाते?

उमड़ें बादल, घुमड़ें बादल
रजनी धुंधली, नभ धुंधला,
उड़ते हिम को कुछ चमकाती
धुंधली-धुंधली चन्द्रकला।
दल के दल भूतों के उड़ते
नभ जैसी ऊंचाई पर,
अपनी दर्दभरी चीखों से
चीर रहे मेरा अन्तर...

१८३०

उनींदी रात में

नींद दूर मेरी आंखों से, कहीं न
कोई दीप जले,
छाया चारों ओर अंधेरा
और उनींदी रात खले,
बंधी-बंधायी लय में केवल
घड़ी यहां टिक-टिक करती,
एक यही आवाज़ निरन्तर मुझे
सुनायी है पड़ती,
और कहीं पर होती मानो
धीमी-धीमी-सी सरसर
जैसे दो बुढ़ियां करती हों
धीरे-धीरे खुसुर-फुसुर,
चूहे जैसी कूद-फांद-सा,
दौड़-दौड़-धूप-सा यह जीवन...

क्यों मुझको ऐसी बेचैनी,
क्यों है ऐसा आकुल मन?
सूनी, ऊब भरी फुस फुस का
क्या मतलब है बतलाओ,
क्या बीते दिन की चुगली या
निन्दा, इतना समझाओ;
क्या कुछ चाह रही हो मुझसे
क्या अनुरोध तुम्हारा है?
यह पुकार-आह्वान, कि भावी
कल की ओर इशारा है?
चाह यही है केवल मेरी, मैं
तो समझ तुम्हें पाऊं,
अर्थ निहित है जो कुछ तुममें
मैं उसकी तह तक जाऊं...

१८३०

विदा

मन ही मन दुलरा लूं मैं प्रिय बिम्ब तुम्हारा
ऐसा साहस करता हूं मैं अन्तिम बार,
हृदय-शक्ति से मैं अपनी कल्पना जगाकर
सहमे, बुझे-बुझे वे सुख के क्षण लौटाकर,
मधुरे, मैं करता हूं याद तुम्हारा प्यार।

वर्ष हमारे भागे जाते, बदल रहे हैं
बदल रहे वे हमको, सब कुछ बदल रहा,
अपने कवि के लिये प्रिये तुम तो ऐसे
मानो किसी क़ब्र का ओढ़े तम जैसे,
और तुम्हारा मीत तमस में लुप्त हुआ।

तुम अतीत को मित्र करो, स्वीकार करो
मेरे मन की कर लो अंगीकार विदा,
विदा जिस तरह से हम विधवा को करते
बांहों में चुपचाप मित्र को ज्यों भरते,
निर्वासन से पहले लेते गले लगा।

१८३०

कवि से

लोक-प्यार की ओर न देना तुम, मेरे कवि, कोई ध्यान
बहुत समय तक नहीं रहेंगे ऐसे मधुर प्रशंसा-क्षण,
नीरस जन-उपहास सुनेंगे, कटु बातें भी तेरे कान
किन्तु तुम्हें तो दृढ़ रहना है, रखना है स्थिर अपना मन।

तुम तो हो सम्राट – अकेले रहो, राह पर मुक्त बढ़ो
उसी दिशा में, जिधर बुद्धि आज़ाद तुम्हारी ले जाये,
अपनी प्यारी सूझ-बूझ के अद्भुत, ऊंचे शिखर चढ़ो
तुम उदात्त श्रम का फल पाओ, भाव न यह मन में आये।

पुरस्कार-फल तेरे भीतर और पारखी तुम्हीं बड़े
तेरे श्रम पर तेरी ही तो सबसे पैनी नज़र पड़े,
ओ कठोरतम कलाकार, क्या तुमको ख़ुद से है सन्तोष?

तुमको है सन्तोष? बला से, कला तुम्हारी अगर खले
कोई उस वेदी पर थूके, दीप तुम्हारा जहां जले,
या फिर कोई चंचल मन से व्यर्थ तुम्हें ही दे कुछ दोष।

१८३०

प्रतिध्वनि

सूने वन-जंगल में कोई रोये-चीखे जब हैवान
गूंज उठे यदि तुरही कोई या आये भारी तूफ़ान,
कहीं किसी टीले के पीछे गाये युवती मधुमय गान –
सब ध्वनियों का शून्य पवन में
निर्मल-निर्मल नील गगन में,
तुम देतीं उत्तर, प्रतिदान।

गूंज-गरज मेघों की सुनतीं, जिनसे बहरे होते कान
वात-बवंडर को सुनती हो, लहरों की हलचल, तूफ़ान,
तुम गांवों के चरवाहों की हांक, शोर, सुनती आह्वान –
तुम सबको ही देतीं उत्तर
किन्तु नहीं पातीं प्रत्युत्तर,
तेरा, कवि का भाग्य समान!

१८३१

पतझर

कुछ अंश

क्या क्या भाव न तब आते हैं ऊंघ रहे मेरे मस्तक में?

देर्झाविन

१

अक्तूबर आरम्भ हो गया, पातहीन शाखाओं से
गिरा रहे हैं अन्तिम पत्ते वृक्षों के झुरमुट, जंगल,
छोड़ी ठण्डी सांस शिशिर ने, राह-बाट ठिठुरी, सिकुड़ी
चक्की के पीछे नद-नाला, अब भी बहता है छल-छल,
किन्तु जम गयी ताल-तलैया, और पड़ोसी अब मेरा
जल्दी-जल्दी तैयारी कर, वह शिकार को है जाता,
दूर-दूर तक धरती कांपे, इस उन्मादी क्रीड़ा से
शोर, भूंक से कुत्तों की जगता बलूत-वन, थर्राता।

२

यह मेरे मन की ऋतु प्यारी; नहीं मुझे मधुमास रुचे
जब हिम गलता, जब बदबू औ' सभी ओर कीचड़ फैले,
मैं रोगी-सा, अति उदास-सा, सूनेपन की तुलना में
जाड़े की सुखमय स्मृतियों में बरबस मन मेरा डूबे,
मुझे धवल हिम अच्छा लगता और चांदनी खिली हुई
साथ स्लेज में बैठी प्रेयसी, घोड़ा हो मानो उड़ता,
फ़र में लिपटी, नर्म-गर्म-सी देह सटी प्यारी-प्यारी
और कांपता हुआ दहकता हाथ स्पर्श उसका करता!

३

बड़ा मज़ा आता है तब तो स्केट पहन नद-नदियों की
दर्पण जैसी सतहों पर जब मुग्ध भाव से हम फिसलें,
सचमुच बड़ी अनूठी, सुखमय शान-बान है जाड़ों की
फिर भी अच्छा होगा मन से हम स्वीकार अगर कर लें,
बर्फ़ रहे छः मास, मांद का भालू भी उससे ऊबे
नहीं निरन्तर सैर-सपाटे सुन्दरियों संग कर सकते,
या कि दोहरे शीशोंवाली खिड़की के पीछे बैठे
तापें अंगीठी औ' मन में सूनापन अनुभव करते।

४

अरी, ग्रीष्म ऋतु सुन्दर! तुझको मैंने प्यार किया होता
अगर न होती उमस, धूल, मक्खी-मच्छर के दल-बादल,
दिल-दिमाग़ की सभी शक्तियों का रस सोख सकल लेतीं
हमें सतातीं, जैसे प्यासी धरती पीड़ित हो बिन जल,
प्यास बुझा लें किसी तरह, कर लें अपने को ताज़ादम
केवल भाव यही हमको करता रहता विह्वल प्रतिपल,
आता जाड़ा याद, सुरा, पूड़ों से जिसको विदा किया
आइसक्रीम खा, ठण्डा जल पी, श्राद्ध मनाते तृषा-विकल।

५

अन्तिम शिशिर दिनों को बहुधा लोग-बाग कोसा करते
मेरे प्यारे पाठक मुझको, पर प्यारी लगती पतझर,
शान्त-शान्त सौन्दर्य और हल्की-हल्की-सी रूप छटा
किसी कुटुम के बाल उपेक्षित-सी लगती मुझको मनहर,
साफ़-साफ़ कहता मैं तुमसे, मुझे वर्ष की ऋतुओं में
केवल पतझर ही रुचती है बहुत सुखद है, वह सुखकर,
मैं तारीफ़ों के पुल बांधूं, नहीं मुझे इसकी आदत
किन्तु पा लिया मैंने इसमें कुछ मन के अनुरूप, मधुर।

६

यह ऋतु क्यों है मुझे सुहाती कैसे यह समझाऊं मैं?
शायद जैसे कभी यक्ष्मा की रोगी लड़की जंचती,
निश्चित उसकी मृत्यु, मगर वह क्रोध-रोष के बिना सतत
चुप रह अपने अन्त समय की मानो राह रहे तकती,
उसके मुरझाये होंठों पर स्मित-रेखा भी खिल उठती
मुंह बाये कर रही प्रतीक्षा, क़ब्र, न वह अनुभव करती,
उसके गालों पर तो हमको अब भी है लाली दिखती
वह ज़िन्दा है आज, अचानक अगले दिन, लेकिन, मरती।

७

मौसम ऊब-उदासी के तुम! तुम नयनाभिराम बड़े!
तेरी मधुर विदा-सुषमा यह मेरे मन पर छा जाती,
प्यारी लगती मुझे विपुल मुरझाती जाती प्रकृति छटा
लाल-सुनहरे परिधानों में वन-शोभा मन भरमाती,
पवन-झकोरे वन छाया में और ताज़गी सांसों की
लहर-लहरियेदार कुहासा, जब सारे नभ को ढकता,
विरली किरण सूर्य की दिखती, जब पहला पाला पड़ता
दूर अभी जो जाड़ा उसका भय कुछ आतंकित करता।

८

हर पतझर में मानो मैं तो फिर नव-जीवन पाता हूं
रूसी ठण्डक हितकर मेरे लिये, स्वस्थ मुझको करती,
जीवन की दिनचर्या में फिर से उमंग, चाहत भरती
नींद मुझे मीठी आती है और भूख मेरी बढ़ती,
रक्त धमनियों में तब मेरी बाधा बिन दौड़ा करता
चाहें फिर से पलकें खोलें, फिर यौवन का रंग चढ़ता,
पुनः हुमकता मुझमें जीवन – ऐसी मेरी तन-रचना
इतनी नीरस बात कही है, पाठक क्षमा मुझे करना।

९

लाया जाता मेरा घोड़ा और खुले मैदानों में
मुझको ले उड़ने लगता है, वह अयाल लहराता है,
चमकें उसके सुम औ' उनके नीचे जमी हुई धरती
ज़ोर-ज़ोर से गूंजे, घोड़ा बर्फ़ कहीं चटकाता है,
पर छोटा दिन जल्दी ढलता, बुझी हुई अंगीठी को
फिर से गर्माया जाता है, कभी रोशनी तेज़, प्रखर,
और कभी धीमी हो जाती, मैं पढ़ता पुस्तक लेकर
और डूबता मैं चिन्तन में, जाता मन में गहन उतर।

१०

सुध-बुध मुझे न जग की रहती सुखद, मधुर नीरवता में
अपने स्वप्न, कल्पना के मीठे जादू में बंध जाता,
मेरे अन्तर में तब कविता बरबस पलक खोलती है
हृदय गीतिमय विह्वलता से तप्त, विकल खुद को पाता,
वह तब स्पन्दित, गुंजित होता, खोज नींद में ज्यों करता
औ' अबाध गति से फिर आख़िर धारा बनकर बह चलता,
तब अदृश्य अतिथियों का दल मेरी ओर उमड़ पड़ता
मैं जिनसे चिर परिचित, जिनको रहा कल्पना में रचता।

११

साहस से तब भाव उमड़ कर आन्दोलित मस्तिष्क करें
और तुकें भी उनसे मिलने को मानो दौड़ी आतीं,
अंगुलियां लेखनी ढूंढ़तीं और लेखनी काग़ज़ को
बीते क्षण औ' काव्य-पंक्तियां मानो धारा बन जातीं,
ऐसे ही गतिहीन पोत गतिहीन तरंगों में ऊंघे,
किन्तु, अरे लो! सहसा हलचल नाविक वहां दौड़ आये,
दौड़-धूप हो नीचे-ऊपर, पाल हवा में लहराये
और चीरता प्रबल तरंगें पोत सतत बढ़ता जाये।

१२

बढ़ता जाये। हम लेकिन किस ओर बढ़ें?..

१८३३

* * *

मेरी प्यारी, वह क्षण आया, चैन चाहता मेरा मन,
बीत रहे घण्टों पर घण्टे, सतत उड़े जाते हैं दिन,
और इन्हीं के साथ हमारा, खत्म हो रहा है जीवन,
हम दोनों जीने को उत्सुक, किन्तु आ रहा निकट निधन,
इस जग में सुख-खुशी नहीं है, किन्तु चैन है, चाह यहां,
एक ज़माने से मन मेरा, मुझे खींचता दूर, वहां –
जहां बैठकर सृजन करूं मैं और चैन मन का पाऊं,
दास सरीखा थका हुआ मैं, सोचूं, भाग कहीं जाऊं।

१८३४

बादल

वात-बवंडर बिखर चुका है, गगन हुआ निर्मल,
नीले नभ में दौड़ रहे अब एक तुम्हीं बादल,
हर्षमगन हो उजला-उजला दिन है मुस्काया,
उसपर केवल डाल रहे हो, तुम ही दुख-छाया।

कुछ पहले नभ ओर-छोर तक, तुम ही थे छाये
कड़क, कौंध बिजली की तेरी तुमको धमकाये,
थी रहस्य से भरी हुई तब तेरी घन-वाणी
तप्त धरा की प्यास बुझायी, बरसाकर पानी।

बस, काफ़ी है, अब तुम जाओ! वह क्षण बीत गया
धरती सरस हुई, झंझा का, अब बल रीत गया,
और पवन जो मन्द-मन्द, तरु, पत्ते सहलाये
शान्त गगन से तुझे उड़ा निश्चय ही ले जाये।

१८३५

* * *

खोया-खोया-सा ख़्यालों में दूर नगर से जब जाता
क़ब्रिस्तान आम लोगों का, नज़र सामने तब आता,
जंगले, स्मरण-शिलायें, दिखतीं वहां कई सुन्दर क़ब्रें
जहां राजधानी के मुर्दे, धीरे-धीरे गलें, सड़ें,
और पास ही दलदल में हैं, जैसे-तैसे सटे हुए
मानो थोड़े से भोजन पर ढेरों पेटू डटे हुए,
व्यापारी, नौकर सरकारी, वहां मक़बरे हैं उनके
घटिया-सी नक़्क़ाशी, सज्जा ऐसे लक्षण हैं जिनके,
उनके ऊपर गद्य-पद्य में लिखा हुआ विस्तृत वर्णन
उनके काम-काज, पद-रुतबे, उनकी नेकी का अंकन,
कामदेव की मूर्त्ति बहाती नीर नारियों के छल पर
वहां कलश ग़ायब स्तम्भों से, हुए चोर चम्पत लेकर,
और पास में नूतन क़ब्रें, राह देखतीं मुंह बाये
अगले दिन कोई अवश्य ही, उनमें रहने को आये,
देख सभी यह, धुंधले-धुंधले भाव हृदय में कुछ आते
घोर उदासी, शोक-रोष यों हावी मुझपर हो जाते –
जी में आता थूक यहां पर, दूर कहीं मैं जाऊं भाग...
किन्तु दूसरी ओर मुझे है तब कितना अच्छा लगता

पतझर की सन्ध्या में छाई होती है जब नीरवता,
तभी घूमने मैं जाता हूं, जहां गांव का क़ब्रिस्तान
मृतक चैन से वहां सो रहे, पाकर चिर निद्रा वरदान,
बिना सजावट की क़ब्रें हैं और वहां पर है विस्तार
रात्रि-तिमिर में सहमे-सहमे, वहां न आते चोर-चकार,
काई ढके पुराने पत्थर, पाषाणों के निकट, पास से
गुज़रे जब देहाती कोई, करे प्रार्थना औ' उसांस ले,
वहां सजावट, नहीं कलश भी लेख-शिला के आडम्बर
बिना नाक की कला-देवियां, परी-मूर्त्ति टूटी, जर्जर,
उनकी जगह बलूत बड़ा-सा, छाया क़ब्रों के ऊपर
मन्द पवन में हिलता-डुलता, करता रहता है सरसर...

१८३६

* * *

Exegi monumentum*

निर्मित किया स्मारक अपना, नहीं रचा, पर हाथों से
इसकी ओर सदा लोगों की भीड़ उमड़ती आयेगी,
बड़ी शान से वह गर्वीला अपना शीश उठाये है
और विजय-मीनार सिकन्दर की उससे शर्मायेगी।

नहीं पूर्णतः कभी मरूंगा, मेरी पावन वीणा में
जीवित रहे आत्मा मेरी, तन, मिट्टी सड़ जाने पर,
जब तक होगा इस दुनिया में, कहीं एक कवि या शायर
तब तक मेरी ख्याति रहेगी, इस धरती पर अजर-अमर।

विस्तृत रूस देश में मेरी, दूर-दूर चर्चा होगी
और यहां की हर भाषा में, गूंज उठेगा मेरा नाम,
गर्वीले स्लावों के बेटे, फ़िन, औ' अब अनपढ़ तुंगुस
याद करेंगे मुझको कलमिक, स्तेपी में जिनका घर, धाम।

---

* "स्मारक बनाया मैंने" (लातीनी)। – सं०

इसीलिये होगा युग-युग तक लोगों में मेरा सम्मान
क्योंकि सदा अपनी वीणा पर छेड़ी प्रेम-प्यार की तान,
क्योंकि हमारे निर्मम युग में गाया आज़ादी का गान
और किया निर्दोषों के हित क्षमा-याचना का आह्वान।

विजय-माल की चाह न करना, आघातों से मत डरना
केवल ईश्वर की इच्छा पर केन्द्रित करना अपना ध्यान,
लोक-प्रशंसा और भर्त्सना, मत इस चक्कर में पड़ना,
मूढ-मूर्खों की बातों पर कभी न देना अपना कान।

१८३६

खंड-काव्य

जिप्सी

एक भीड़-सा शोर मचाता जाता है
बेसाराबिया में, वह यायावर जिप्सी-दल,
फटे तम्बुओं में सब डेरा डालेंगे
वहां, जहां पर नदी बह रही है कल-कल।
आज़ादी-सा खुशी भरा यह रात्रि-शिविर
नींद शान्त है इनकी नीले गगन तले,
क़ालीनों से अर्ध-ढकी गाड़ियां खड़ीं
और उन्हीं के बीचोंबीच अलाव जले,
यहां बड़ा परिवार जमा, भोजन पकता
घोड़े चरते, वहीं, निकट मैदान हरा,
तम्बू के ही पास पालतू भालू भी
आज़ादी से, मस्त धूल में लोट रहा।
स्तेपी में तो जैसे जीवन धड़क रहा
यहां सुखी जिप्सी परिवारों की हलचल,
सुबह बढ़ें ये आगे, ललनायें गायें,
बच्चे चंचल शोर मचाते जायेंगे
ठोक-पीट कुछ होगी, घन गुंजायेंगे,
किन्तु अभी ख़ानाबदोश इन लोगों पर
हुआ नींद का जादू, सन्नाटा बढ़ता,
गहरी नीरवता में कुत्तों की भौं-भौं
और हिनहिनाना घोड़ों का सुन पड़ता।
नहीं कहीं पर दीप एक भी अब जलता
सब कुछ शान्त, गगन में केवल शशि चलता,

नभ की ऊंचाई से वह एकाकी ही
शान्त शिविर को इस क्षण आलोकित करता।
एक वृद्ध ही जागे अपने तम्बू में
अंगारों के सम्मुख है वह तो बैठा,
कम होती उनकी गर्मी से तन गर्मा
ताक रहा मैदान, दूर तक नज़र टिका,
रात्रि भाप से जो है मानो ढका-ढका।
है जवान बेटी ज़ेम्फ़ीरा बूढ़े की
वह स्वतन्त्रता, आज़ादी की दीवानी,
दूर, देर तक वीराने में वह घूमे
और हमेशा करती अपनी मनमानी,
आयेगी वह वापिस, रात घिरी लेकिन
शीघ्र चांद भी छिपे दूज का छोड़ गगन,
ज़ेम्फ़ीरा तो नहीं, अभी तक कहीं नहीं
ठण्डा होता जाता बूढ़े का भोजन।

लो, वह आई, पर उसके पीछे-पीछे
एक युवक भी तेज़ी से बढ़ता आये,
बूढ़ा जिप्सी उसे न जाने-पहचाने
किन्तु तभी बेटी यह उसको बतलाये –
"बापू मेरे, साथ इसे अपनी इच्छा से लाई हूं
टीले के पीछे, स्तेपी में मिलन हुआ,
रात बिताने को डेरे में लिया बुला,
बनना चाहे हमीं जिप्सियों जैसा यह
इसने तोड़े हैं कुछ क़ानूनी बन्धन
बहुत कठिन है, मुश्किल में इसका जीवन,
साथी इसे बनाया, साथ निभाऊंगी
होगी मुझको ख़ुशी, काम यदि आऊंगी,
मेरे संग रहेगा, यह मेरा बनकर
बना रहेगा मेरा साथी, जीवन भर।"

बूढ़ा

मैं ख़ुश, रात बिताओ तुम इस तम्बू में
सुबह, भोर तक, यहीं, हमारे ही संग में,
फिर तुम जैसा भी चाहो, निर्णय करना
रहना चाहो रहना, जाना तुम वरना।
रूखा-सूखा जो हम खायें, तुम खाओ
मिले हमें जो कपड़ा-लत्ता, तुम पाओ,
हो यदि निर्णय रहो हमारे ही बन के
हो जाना अभ्यस्त हमारे जीवन के
निर्धनता, आवारापन, बिन बन्धन के,
किन्तु सुबह, कल, पौ फटते हम चल देंगे,
साथ हमारे, तुम भी सब के संग चलना,
जो भी चाहो, तुम अपना धंधा चुनना,
गाने गाओ, कूट-कूट लोहा गढ़ना
या ले भालू गांव-गांव में तुम फिरना।

अलेको

साथ रहूंगा तुम लोगों के, यह निर्णय।

ज़ेम्फ़ीरा

मेरा बनकर सदा रहेगा अब यह तय
नहीं छीन पायेगा कोई प्रियतम, मीत, प्रणय,
किन्तु हो चुकी देर... दूज का चांद ढला,
मैदानों के ऊपर सब दिशि तम फैला,
और नींद अब मुझको बरबस रही सुला...

सुबह हो गयी। दबे-दबे पांवों बूढ़ा
गिर्द शान्त तम्बू के वह था घूम रहा।
"जागो बेटी, सूरज ऊपर को उठता,
जागो तुम मेहमान कि इसका वक़्त हुआ!..
बच्चो, आलस-तन्द्रा को दो दूर भगा!.."
शोर मचाते जिप्सी अब निकले बाहर
तम्बू गये समेटे, घोड़े जोत दिये,
चलने को तैयार कि सारे लोग हुए।
एक साथ चल पड़ा कारवां लोगों का
ख़ाली मैदानों में जमघट लोगों का।
दोनों ओर गधों के टोकरियां लटकें
जिनमें बच्चे खेल रहे, मन बहलायें,
पति-पत्नी औ' भाई-बहनें, वृद्ध, युवा
इनके पीछे, सब पैदल चलते जायें,
हल्ला-गुल्ला, शोर-शराबा और धुनें
जिप्सी-गीतों की भी उनमें गूंज रहीं,
भालू की जंजीर बड़ी बेचैनी से
खनके, गूंजे भालू की चिंघाड़ यहीं,
रंग-बिरंगे, चटकीले चिथड़े पहने
अध-नंगे हैं बच्चे भी, सब बूढ़े भी,
भौंकें कुत्ते, मश्कबीन करती पीं-पीं
और गाड़ियों के पहिये करते चीं-चीं,
गड़बड़, बेढंगा सब, उल्टा-टेढ़ा है
फिर भी इनमें हलचल धड़कन, स्पन्दन है
नहीं हमारी तरह बुझा इनका मन है,
दास-गीत-सा नीरसता में पगा हुआ
नहीं एक ढर्रे सा इनका जीवन है!

निर्जन जो मैदान हुआ था अब फिर से
उसे अलेको ताक रहा था दुखी-दुखी,
क्यों उदास मन उसका, दुख का क्या कारण
पूछे ख़ुद से, किन्तु न यह हिम्मत उसकी,
कृष्णलोचनी ज़ेम्फ़ीरा थी संग उसके
वह बिल्कुल आज़ाद, मुक्त था बन्धन से,
प्यारा-प्यारा सूर्य रश्मियां मधुर, सुखद
लुटा रहा था ऊपर से, नभ-आंगन से,
क्यों उदास है क्यों व्याकुल उसका मन है?
किस चिन्ता में डूबा, वह यों अनमन है?

विहग रहे आज़ाद, न चिन्ता, श्रम करता
जहां देर तक बसे, न ऐसा घर रचता,
लम्बी रातें, सो शाखा पर सुख पाता
और सुबह जब सूर्य गगन में आ जाता,
तब मानो आदेश ईश का वह सुनकर
चौंक जागता और चहक गाना गाता।
जब वसन्त की सुन्दरता, सुषमा लुटती
लुप्त ग्रीष्म की तपिश, उमस जब हो जाती,
कुहर-कुहासा, बूंदा-बांदी, धुंध, घटा
मौसम बुरा-बुरा, जब पतझर ले आती –
लोग उदासी, सूनापन अनुभव करते
किन्तु विहग तब दूर कहीं उड़ जाता है,
नील समुन्दर पार, क्षेत्र में गर्म कहीं
वह वसन्त आने तक समय बिताता है।

वह स्वतन्त्र, निश्चिन्त विहग के ही जैसा
वह मौसम का पक्षी, वह निर्वासित था,
नहीं कहीं पर पाया नीड़ भरोसे का
बंधे, टिके जीवन से रहा अपरिचित था।
जिधर चल पड़ा, उसी दिशा में राह बनी
जहां रात आ घिरी, बसेरा वहीं किया,

सुबह हुई, जागा तो ईश्वर इच्छा को
उसने अपना वह सारा दिन सौंप दिया,
उसके मन का चैन और आलस उर का
जीवन-चिन्ता से अनजाना बना रहा,
किन्तु कभी तो दूर कहीं जगमग करता
ख्याति-सितारा, प्यारा मन भरमाता था,
कभी-कभी सुख-वैभव का, रंग-रलियों का
बरबस भाव उमड़कर मन में आता था।
लेकिन उसके एकाकी जीवन-नभ पर
मेघ, बवंडर भी घिर आते थे अक्सर,
पर वह बरखा-बारिश में भी उसी तरह
सोता था निश्चिन्त कि जब निर्मल अम्बर,
वह क़िस्मत की अंधी, कपटी ताक़त की
करता हुआ उपेक्षा, जीता जाता था;
पर मेरे भगवान, आत्मा में उसकी
चाहों का कैसा रेला बल खाता था,
उसके व्यथित हृदय में, उसके अन्तर में
आवेशों का था कैसा तूफ़ान भरा!
बहुत समय से, बहुत दिनों तक क्या उनको
वश में किया? नहीं, जागेंगे, ठहर ज़रा!

ज़ेम्फ़ीरा

मेरे मित्र, कहो, क्या तुमको रंज नहीं
उसका, जो कुछ सदा-सदा को छोड़ दिया?

अलेको

लेकिन मैंने क्या छोड़ा?

ज़ेम्फ़ीरा

अपना वतन, लोग अपने, औ' शहर-नगर
यह सब कुछ ही, कम है क्या?

अलेको

दुख इसका क्या हो सकता?
काश, जान तुम यह सकतीं,
काश, कल्पना कर सकतीं!
कैसी घुटन वहां पर है, उन नगरों में!
रेल-पेल लोगों की, औ' भारी जमघट,
नहीं पहुंचता उन तक मधुमय मधुर पवन
पुष्प-सुरभि जब फूलें सुन्दर वन-उपवन,
उन्हें प्यार से लज्जा, चिन्तन से डरते
और तिजारत आज़ादी की वे करते,
अपने आराध्यों के सम्मुख झुक जायें
बदले में धन-दौलत, ज़ंजीरें पायें,
क्या कुछ छोड़ा और तजा है क्या मैंने?
बस, विश्वासघात की पीड़ा, मन-बन्धन
दौड़-धूप का, धका-पेल का पागलपन,
चमक-दमक से ढका हुआ लज्जित जीवन।

ज़ेम्फ़ीरा

किन्तु वहां पर ऊंचे-ऊंचे महल खड़े
रंग-बिरंगे, जहां-तहां, क़ालीन पड़े,
खेल-तमाशे वहां, दावतें क्या कहने!
वहां लड़कियां कपड़े भी बढ़िया पहने!..

अलेको

ऐसे जशनों और ख़ुशी के क्या माने ?
मज़ा भला क्या, लोग प्रेम से अनजाने,
और लड़कियां ... तुम तो हो सबसे बढ़कर,
बिना हार-सिंगार, बिना भूषण सुन्दर
बिना मोतियों के तुम मोती-सी मनहर।
मेरे मन की मीत, दगा तुम मत करना
बस, इतना अनुरोध, कपट, छल से डरना,
सुख-दुख, प्यार-मुहब्बत में साथी रहना
सहज बनेगा निर्वासन का दुख सहना।

बूढ़ा

बेशक तुमने धन-दौलत में जन्म लिया
फिर भी हममें रमे, प्यार करते हमको,
किन्तु चैन के, सुख के होते आदी जो
नहीं रास आती आज़ादी, उन सब को।
क़िस्सा एक सुना, वह तुम्हें सुनाता हूं :
गर्म देश से निर्वासित कोई आया
"छोड़ो देश" यही राजा ने फ़रमाया,
नाम भला-सा था, पर याद न अब आता
याद अगर आ जाता, वह भी बतलाता।
था वह बूढ़ा, उसकी ख़ासी उम्र ढली
पर जवान दिल, और आत्मा बहुत भली,
गाने का गुण उसे मिला अद्भुत, अनुपम
थी आवाज़ कि जैसे निर्झर स्वर, सरगम।
यहां, इसी डेन्यूब नदी पर रहता था
कभी न कड़वी, बुरी बात वह कहता था,
लोग हमारे, सभी प्यार उसको करते
उसकी बातों पर, क़िस्सों पर वे मरते,

नहीं किसी को कभी सताया, ठुकराया
बच्चे-सा भोला, झेंपू, दुर्बल काया,
लोग पराये उसे खिलाते, बहलाते
उसके लिये शिकार, मछलियां ले आते,
जाड़ा आता और नदी जब जम जाती
तेज़ हवा चलती, हिम-आंधी जब आती,
रोयोंवाली खालें उसको पहनाते
देव-तुल्य बूढ़े को ऐसे गर्माते,
किन्तु न इस जीवन का आदी हो पाया,
नहीं रास निर्धनता का जीवन आया,
हुआ सूखकर कांटा, मुख भी मुरझाया,
और यही कहता, कुछ मैंने बुरा किया
इसीलिये ईश्वर ने दिन यह दिखलाया,
आशा करता रहा, मिलेगी मुक्ति उसे
मुक्त कभी होगा निर्वासित जीवन से,
रहा तड़पता, याद वतन को वह करता
अश्रु बहाता रहा और आहें भरता,
इस डेन्यूब नदी-तट पर दुख बहुत सहे
याद वतन की कभी न भूले, बनी रहे,
कहा मृत्यु से पहले – मेरा व्याकुल शव
दुखी हड्डियां दक्षिण को तुम ले जाना
वहीं, गर्म धरती में उनको दफ़नाना,
नहीं परायी धरती उसको रुची कभी
क्या जीने की बात, न चाहा मरना भी।

अलेको

बुरा भाग्य था ऐसा तेरे बेटों का
अरे रोम, जिसका दुनिया में नाम बड़ा,
जिसने गीत मुहब्बत, देवों के गाये
अर्थ ख्याति का क्या, यह कोई बतलाये!

यह गिरजों की गूंज, प्रशंसा के गाने
जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी जाते पहचाने?
क़िस्सा या यह लोग सताये कभी गये
धुएं भरे तम्बू में जिप्सी जिसे कहे?

बीत गये दो साल घूमते यों इनके
बहुत चैन जिप्सी जीवन में था मन को,
लोगों के मन खिलते, जब जिप्सी आते
बीत मज़े से इनके भी यों दिन जाते,
तोड़ सभ्यता की सब कड़ियां, सब बन्धन
था स्वतन्त्र, आज़ाद अलेको का जीवन,
पश्चाताप न कोई चिन्ता थी मन में
बड़ा लुत्फ़ था मस्त, घुमक्कड़ जीवन में,
वह था पहले जैसा, औ' परिवार वही
मन अतीत के लिये न होता दुखी कभी,
बंजारों के जीवन का अभ्यस्त हुआ
डेरों, रैन-बसेरों में मन मस्त हुआ,
नहीं हड़बड़ी यहां न थी अफ़रा-तफ़री
चैनभरी ज़िन्दगी बड़ी इनकी सफ़री,
भाषा इनकी थी विपन्न, संगीतमयी
वह भी अब उसके मन के अनुकूल हुई।
भालू, मांद, गुफ़ा का जो रहनेवाला
उसके संग ही अब उसने डेरा डाला,
मोल्दावी लोगों के घर के पास कहीं
किसी गांव में, या स्तेपी में दूर कहीं,
बज उठती डुगडुगी, भीड़ होती विह्वल
वहां नाचता मोटा भालू उछल-उछल,
बीच-बीच में गला फाड़ चिल्लाता वह
गुस्से में आकर ज़ंजीर चबाता वह,

लाठी टेके, बूढ़ा क़दम बढ़ाता था
धीरे-धीरे डफली संग जाता था,
ले भालू को साथ अलेको भी गाये
ज़ेम्फ़ीरा इस बीच गांव में हो आये,
झोली में जो लोग उसे दें, वह लाये,
रात घिरे, कुछ नाज पतीली में डालें,
उसे उबालें और साथ तीनों खा लें।
सोता बूढ़ा, शान्त तभी होता डेरा
तम्बू में ख़ामोशी छाती, अंधेरा...

बैठ धूप में बूढ़ा तन गर्माता था
ठण्डे ख़ून रक्त-मांस में गर्मी लाता था,
निकट पालने के बैठी बेटी गाये
सुने अलेको, चेहरे का रंग उड़ जाये।

ज़ेम्फ़ीरा

मेरे बुड्ढे खसम, मेरे बूढ़े मियां,
आग में झोंक दो
चाहे टुकड़े करो,
        आग से न डरूं
        घाव हंसकर सहूं
        बात खुलकर कहूं,
बन्द होगी नहीं मेरी अब तो ज़बां,
मेरे बुड्ढे खसम, मेरे बूढ़े मियां।
        तुझसे करती घृणा,
        तू पराया बना
        लाख कर तू मना,
        दूसरे से मुहब्बत,

मैं ख़ुद भी वहां
मेरा बांका जहां,
मेरे बुड्ढ़े खसम, मेरे बूढ़े मियां।

अलेको

चुप रहो, गीत ऐसे न भायें मुझे
बोल फूहड़ तुम्हारे जलायें मुझे।

ज़ेम्फ़ीरा

तुम को भाते नहीं? तो बताती हूं यह –
गीत अपने लिये मैं तो गाती हूं यह।

आग में झोंक दो
चाहे टुकड़े करो,
मैं तो कुछ न कहूं
मैं तो चुप ही रहूं,
कौन है वह, न होगा तुम्हें यह गुमां,
मेरे बुड्ढ़े खसम, मेरे बूढ़े मियां।

है बहारों से उसमें अधिक ताज़गी
गर्म दिन से अधिक दिल में गर्मी रमी,
उसमें साहस बहुत, वह तो बांका जवां
प्यार उस जैसा मुझको मिलेगा कहां?
मेरे बुड्ढे खसम, मेरे बूढ़े मियां
रात ख़ामोश थी
प्यार करती रही,
अपनी बांहों में मैं उसको भरती रही
तेरी, खूसट की खिल्ली भी उड़ती रही,
फब्तियां तुझपर हमने कसी थीं वहां,
मेरे बुड्ढे खसम, मेरे बूढ़े मियां।

अलेको

बस, ख़ामोश रहो ज़ेम्फ़ीरा! बहुत हो चुका...

ज़ेम्फ़ीरा

अर्थ गीत का मेरे तुमने समझ लिया क्या?

अलेको

ओ ज़ेम्फ़ीरा!

ज़ेम्फ़ीरा

बुरा मनाओ, अगर चाहते बुरा मनाना,
तेरे ही बारे में गाती हूं यह गाना।

(जाते हुए गाती है: "मेरे बुड्ढे खसम, मेरे बूढ़े मियां", आदि)

बूढ़ा

हां, हां, मुझको याद आ गया, याद आ गया
वक़्त हमारे में यह गाना रचा गया था,
लोगों का दिल इससे बहलाया जाता
जहां-तहां पर यह यों ही गाया जाता,
रहते थे हम तब कागूला के तट पर
और रात जब जाड़े की आती घिर कर,
मारीऊला मेरी, गीत यही गाती
बिटिया को भी संग झुलाती वह जाती,

बीते वर्ष अनेक समय ने अपना रंग दिखाया है
बुद्धि मन्द कर डाली मेरी, उसने मुझे बुढ़ाया है,
किन्तु गीत यह मन पर अब भी है अंकित
शब्द अभी तक इसके स्मृति में हैं संचित।

रात, बड़ी नीरवता छाई चांद, चांदनी
निर्मल, दक्षिण नभ में चमकें, मधुर यामिनी,
ज़ेम्फ़ीरा ने बूढ़े को झकझोर जगाया
"हुआ अलेको को क्या, देखो", यह बतलाया,
"सुनो, नींद में वह कैसे आहें भरता
वह रोता है, देख, जिया मेरा डरता।"

बूढ़ा

इसे न छेड़ो, अच्छा है चुप ही रहना।
मैंने सुना रूसियों का ऐसा कहना –
अर्धरात्रि को भूत-प्रेत कोई आता
सुप्त व्यक्ति की छाती पर वह चढ़ जाता,
पौ फटने से पहले भागे दूर बला
बैठी रहो यहीं तुम, ऐसा ठीक, भला।

ज़ेम्फ़ीरा

बापू मेरे! वह फुसफुसा रहाः "ज़ेम्फ़ीरा!"

बूढ़ा

सपने में भी वह तो केवल तुम्हें ढूंढ़ता
सबसे प्यारी तुम्हीं, हृदय में नाम गूंजता।

ज़ेम्फ़ीरा

आग प्यार की बुझी, न वह अब मुझे सुहाये
अनुभव होती ऊब, हृदय आज़ादी चाहे,
मैं तो... लेकिन चुप! क्या तुमने ध्यान दिया है?
किसी और का उसने अब तो नाम लिया है...

बूढ़ा

किसका नाम लिया है उसने?

ज़ेम्फ़ीरा

तुम सुनते हो? वह कैसे आहें भरता है
दांत पीसता!.. तोबा मेरी, जी डरता है!..
मैं तो उसे जगा देती हूं...

बूढ़ा

नहीं, नहीं, मत उसे जगाओ
भूत-प्रेत को नहीं भगाओ,
अपने आप चला जायेगा...

ज़ेम्फ़ीरा

लेकिन उसने करवट ली है, जाग गया है
मुझे बुलाया, मुझे पुकारा नाम लिया है,
मैं जाती हूं पास उसी के, तुम सो जाओ
है थकान दिन भर की, सोकर उसे मिटाओ।

अलेको

बतलाओ, तुम कहां गयी थीं?

ज़ेम्फ़ीरा

बापू के संग बैठी थी मैं, पास, यहीं थी।
भूत-प्रेत था शायद जिसने तुम्हें सताया
निद्रा में था जिसने तुमको विकल बनाया,
दांत पीसते और रहे तुम मुझे बुलाते
अपनी बेचैनी से मुझको रहे डराते।

अलेको

तुमको ही देखा सपनों में,
ऐसे लगा कि बीच हमारे...
क्या बतलाऊं, बहुत बुरे थे सपने सारे!

ज़ेम्फ़ीरा

सपने झूठे होते, मत विश्वास करो तुम।

अलेको

मेरे तो विश्वास सभी डगमगा चुके हैं—
सपनों से क्या, मीठी बातों से मैं डरता
नहीं भरोसा तेरे दिल का भी मैं करता।

बूढ़ा

मेरे भोले मित्र, सदा क्यों आहें भरते?
किस कारण, किसलिये दुखी अपने को करते?
लोग यहां आज़ाद, बहुत है निर्मल अम्बर,
ख्याति नारियों की फैली, वे बेहद सुन्दर
मत रोओ, दुख से मुरझा जाता है अन्तर।

अलेको

बापू, मुझको अब वह प्यार नहीं करती है।

बूढ़ा

वह बच्ची है, धीरज से तुम काम तनिक लो
नहीं घुलाओ तुम अपने को व्यर्थ दुखी हो,
आग प्यार की तेज़ तुम्हारे दिल में जलती
नारी चंचल, चपल तबीयत रहे मचलती,
देखो, दूर गगन में कैसे मुक्त वहां पर
चांद अकेला बड़े मज़े से घूम रहा है,
सभी जगह पर प्रभा, चांदनी को छिटका कर
धरती के कण-कण को मानो चूम रहा है।
झांक एक बदली में जगमग उसे कर दिया
बदली आई और, अंक में उसे भर लिया,
नभ में उसकी जगह, कौन उसको दिखलाये—
"यहीं रुके रहना", यह उसको कौन बताये!
इसी तरह युवती को कोई कह दे कैसे
प्रेम इसी से करना, मत तुम और किसी से?
काम तनिक लो, तुम धीरज से।

अलेको

कितना प्यार मुझे करती थी!
सिर्फ़ मुहब्बत का मेरी ही दम भरती थी,
बड़े प्यार से मेरे साथ चिपक जाती थी,
शून्य रात में, वीराने में इसी तरह से
घण्टों जाते बीत, नहीं वह उकताती थी,
उमग-उमग कर, वह बच्चों-सी मचल मचलकर
मुझसे प्यारी बातें करती रहती अक्सर,

या बौछार चुम्बनों की मुझपर कर देती
मेरे मन की पीड़ा, सब चिन्ता हर लेती,
क्या सचमुच? मेरी ज़ेम्फ़ीरा रही न वैसी
आग प्यार की बुझी, नहीं वह पहले जैसी!

बूढ़ा

सुनो ध्यान से – क़िस्सा तुमको एक सुनाऊं
क़िस्सा ही क्या, अपनी बीती तुम्हें बताऊं।
बात पुरानी, मास्को का डेन्यूब क्षेत्र में
नहीं ज़रा भी डर था, तनिक न भय मंडराता,
(देखो, बीता हुआ दर्द-दुख
याद पुनः अब आता जाता।)
तुर्की का सुलतान, उसी से हम घबराते
उससे बेहद डरते थे, हम दहशत खाते,
राज उस समय था बुजाक पर पाशा करता
ऊंचे अकरमान से वह था हुक्म चलाता।
मैं जवान था और आत्मा में तब मेरी
बड़ी उमंगों, ख़ुशियों का सागर लहराता,
काले-काले मेरे घुंघराले बालों में
नहीं सफ़ेदी नज़र ज़रा भी तब आती थी,
थीं सुन्दरियां बहुत, एक तो मेरे दिल पर
ऐसे करती घाव, छुरी ज्यों चल जाती थी,
बहुत समय तक रहा दूर से जान छिड़कता
रहा याद में उसकी घुलता और तड़पता,
किसी तरह भी दिल उसका मैं जीत न पाया
लेकिन मेरी बनी कि आख़िर वह दिन आया...

हाय, जवानी जल्दी से यों मेरी बीती
आसमान में चमक दिखा ज्यों टूटे तारा!

और प्यार ने कहीं अधिक जल्दी की मुझसे
अपना नाता तोड़ लिया, औ' किया किनारा,
मारीऊला एक वर्ष में ही उकतायी
लहर प्यार की ऊपर उठकर नीचे आयी।

एक बार क्या हुआ कि हम कागूला तट पर
अपने डेरे डाले थे, जब लोग पराये,
वहीं पहाड़ी के दामन में वे भी आये
जिप्सी ही थे, तम्बू-डेरे निकट लगाये,
साथ-साथ दो रातें हमने वहां बितायीं
रात तीसरी आयी तो जैसे परछाईं,
लुप्त हुए वे, मेरी मारीऊला प्यारी
छोड़ लाड़ली बिटिया, उनके संग सिधारी,
सोता रहा रात भर सुख से, हुआ सवेरा
आंख खुली, तो पत्नी बिन था सूना डेरा,
ढूंढ़ा, उसे पुकारा, लेकिन चिह्न न पाया
बेटी रोये, नीर नयन में मेरे आया,
उस दिन से बस, प्यार-प्रणय से नाता टूटा
जीवन भर के लिये साथ नारी का छूटा,
तब से अपना नहीं किसी को, कभी बनाया
एकाकी रहकर ही अपना समय बिताया,
नहीं किसी को अपने दिल का दर्द बताया।

अलेको

किन्तु नीच का तुमने पीछा नहीं किया क्यों?
दुश्मन से भी बदला तुमने नहीं लिया क्यों?
खंजर उसके सीने में क्यों नहीं उतारा?
छोड़ दिया क्यों, नहीं जान से उसको मारा?

बूढ़ा

यह किसलिये? विहग से भी आज़ाद जवानी
क़ैद प्रेम ने किसकी और कहां पर मानी?
यह वह सुख, जो समय-समय पर सबको मिलता
मुरझाने पर फूल नहीं यह फिर से खिलता।

अलेको

लेकिन मैं वह नहीं कि यह अधिकार छोड़ दूं
अपने जीवन-सुख का यों आधार छोड़ दूं,
और नहीं कुछ, तो बदले का सुख तो लूंगा
तड़पाऊंगा मैं दुश्मन को, दुख तो दूंगा।
मिल जाता यदि दुश्मन मुझको सागर तट पर
सोया हो गहरी निद्रा में सुध-बुध खो कर,
तो सच मानो, ध्यान न आये दया-धर्म का
दुविधा पास न फटके, कहता तुम्हें कसम खा,
सोते को ही मैं पानी में धक्का देता
वह चिल्लाता सहसा, खूब मज़ा मैं लेता,
और विषैले, क्रुद्ध ठहाके मैं गुंजाता
उसके मन को बींधे, ऐसे तीर चलाता,
बहुत समय तक दृश्य याद ये मुझको आते–
ग़ोते खाना, चिल्लाना, सब मन बहलाते।

जवान जिप्सी

एक और ... चुम्बन बस दे दो ...

ज़ेम्फ़ीरा

समय हो गया – जलन, आग है बहुत मियां में, तुम यह समझो।

जिप्सी

चुम्बन एक, बड़ा लम्बा-सा, और विदा लो।

ज़ेम्फ़ीरा

यही ख़ैर, जो अभी न आया, तुम जाने दो।

जिप्सी

अब कब होगा मिलन हमारा?

ज़ेम्फ़ीरा

आज रात को, जब शशि चमके प्यारा-प्यारा,
वहां क़ब्र के पीछे, टीले पर आ जाना...

जिप्सी

धोखा मत दे देना! बुद्धू नहीं बनाना।

ज़ेम्फ़ीरा

आऊंगी, विश्वास करो तुम! नहीं करूंगी तुमसे कोई कपट, बहाना।

निद्रामगन अलेको था, उसके मस्तक में
स्वप्न भयानक घूम रहा था धुंधला-धुंधला,
अन्धकार में चीख़ा, जागा घबराया-सा
हाथ बढ़ाने लगा तिमिर में, चकराया-सा,
किन्तु हाथ रुक गया वहीं पर बढ़ा-बढ़ाया
उसने जब बिस्तर को सूना, ठण्डा पाया,
नहीं निकट थी, पास कहीं, पत्नी की छाया...

उठा तड़प कर औ' ध्वनियों पर कान लगाया...
सभी ओर सन्नाटा – उसपर दहशत छाई
छुटे पसीने और भुरभुरी उसको आई,
उठा, और अपने डेरे से आया बाहर
सभी ओर छकड़े थे, बहुत विकल था अन्तर,
थी नीरवता; खेत पड़े थे सोये-सोये
था अंधेरा; चांद-चांदनी तम में खोये,
तारे हल्का-सा प्रकाश बस दिखलाते थे
नज़र ओस पर चिह्न पांव के कुछ आते थे,
बेचैनी से उसी दिशा में क़दम बढ़ाता
वह टीले की ओर विकल था बढ़ता जाता।

जहां डगर का अन्त, वहीं पर एक क़ब्र थी
दूरी पर बस, वहीं सफ़ेदी-सी दिखती थी,
टांगें देती थीं जवाब, थे ख़्याल बुरे-से
घुटने कांप रहे थे, उसके होंठ कांपते,
बढ़ता जाये, लेकिन देखो... यह क्या, यह क्या
यह सच्चाई या फिर कोई स्वप्न बुरा-सा?
दो परछाइयां उसे पास ही पड़ीं दिखाई,
खुसर-फुसर भी उसे निकट ही पड़ी सुनाई
हाय, क़ब्र की ऐसी दुर्गति शर्म न आई।

पहली आवाज़

वक़्त हो गया...

दूसरी आवाज़

ज़रा ठहर जा!

पहली आवाज़

वक़्त हो गया, मेरे प्यारे।

दूसरी आवाज़

नहीं, नहीं, कुछ रुक जाओ तुम,
सूरज निकले,
औ' छिप जायें चांद, सितारे।

पहली आवाज़

अच्छा नहीं, देर अब करना।

दूसरी आवाज़

प्यार करो, तो फिर क्या डरना,
रुको ज़रा तो!

पहली आवाज़

नहीं कहीं की रह जाऊंगी, इतना समझो।

दूसरी आवाज़

ज़रा रुको तो!

पहली आवाज़

जाग गया पति, तब क्या होगा?
इतना सोचो!

अलेको

जाग गया मैं, अब तुम बोलो!
किधर भागना चाह रहे, चल दिये कहां
यह भी अच्छा, इसी जगह है क़ब्र, यहां।

ज़ेम्फ़ीरा

भागो, मेरे मीत, भाग जल्दी से जाओ...

अलेको

रुको, न अपना क़दम बढ़ाओ!
मेरे बांके दोस्त, नहीं, अब तुम बच पाओ!
लो, धरती को गले लगाओ!

(छाती में छुरा भोंक देता है)

ज़ेम्फ़ीरा

अलेको, यह क्या किया!

नौजवान जिप्सी

हाय, मैं मरा...

ज़ेम्फ़ीरा

कैसा तुमने जुल्म किया, क्या ग़ज़ब किया है!
रंगे ख़ून से हाथ, कि इसको मार दिया है!
कैसा तुमने सितम किया है?

अलेको

कोई बात नहीं,
अब इससे इश्क लड़ाओ।

ज़ेम्फ़ीरा

बहुत डर चुकी अब तक तुमसे, नहीं डराओ!
व्यर्थ धमकियां ये सब तेरी, ज़रा न डरती
तू हत्यारा, बहुत घृणा मैं तुझसे करती...

अलेको

मरना होगा अब तुमको भी!

(वार करता है)

ज़ेम्फ़ीरा

जान मुहब्बत में मैंने दी।

पौ फटती थी, पूरब में हो रहा उजाला
टीले से कुछ दूर, ख़ून से लथपथ खंजर
लिये हाथ में वहीं क़ब्र पर
बैठा रहा अलेको बुत-सा बना रात भर।
दो शव अब निर्जीव पड़े थे उसके सम्मुख
बहुत भयानक हत्यारे का लगता था मुख,
सहमे-सहमे जिप्सी, आते थे बंजारे,
घबराये से उसको ताकें, दुख के मारे
क़ब्र खोदते जाते थे वे एक किनारे।

दुख में डूबी हुई बीवियां उनकी आयें
दोनों मृतकों की आंखों से होंठ छुआयें,
बाप अकेला ही बैठा था शीश झुकाये
उन दो लाशों पर ही अपनी नज़र टिकाये।
भारी दुख ने पत्थर मानो उसे बनाया
वह गुमसुम, गतिहीन, मौन, सकते में आया।
लोगों ने दोनों लाशों को साथ उठाया
दो जवानियों को धरती में संग लिटाया,
दूर-दूर से यह सब तकता रहा अलेको
कैसे मिट्टी डाल, बन्द कर रहे क़ब्र को,
पड़ी आख़िरी मुट्ठी, सिर तब तनिक झुकाया
वह पत्थर से लुढ़क घास पर नीचे आया।
बूढ़े ने तब आकर उसके पास कहा यह:
"ओ गर्वीले जाओ, हम से तोड़ो नाता
हम जंगल के लोग, तुम्हारा ढंग न आता,
हम क़ानून, यातना, कोई दण्ड न जानें
ख़ून बहायें, बदला लें, यह कभी न मानें,
दर्द, वेदना, हमें नहीं भाती हैं आहें
हत्यारे के साथ नहीं हम रहना चाहें...
जंगल की आज़ादी जीना तुम्हें न आये
केवल तुम ख़ुद मुक्त रहो, यह तुम्हें सुहाये,
हमको तो आवाज़ तुम्हारी भी अखरेगी
उसको सुनने से मन पर भारी गुज़रेगी,
हम उदार मन, हम विनम्र, हम भोले-भाले
तुम हो क्रोधी, साहस से लड़ मरनेवाले,
कहता हूं इसलिये, नहीं है साथ हमारा
माफ़ी चाहूं, मगर रास्ता अलग तुम्हारा।"

उसने इतना कहा और बस, ख़ेमे उखड़ गये,
डेरे, रैन-बसेरे सब कुछ क्षण में उजड़ गये,
शोर मचाते बंजारे, घाटी से दूर चले

और बहुत जल्दी ही वे स्तेपी में जा निकले।
क़िस्मत की मारी घाटी में, छकड़ा एक बचा
जिसके ऊपर फटा-पुराना-सा क़ालीन पड़ा।
उसी तरह से, जैसे, जब जाड़ा आने को हो
बचे-बचाये कुछ सारस भी उड़ते दक्षिण को,
सुबह-सुबह ही, धुंध-कुहासे में वे दूर उड़ें
सर-सर पंख हवा में उनके ऊंचे स्वर गूंजें।
गोली लगे किसी को सहसा, और पंख टूटे
घायल हो गिर जाये नीचे, संग, साथ छूटे,
टूटा पंख, विवशता की मानो ज़ंजीर बने
दुख, एकाकीपन ही उसकी अब तक़दीर बने।
रात घिरी, लेकिन छकड़े में छाया अंधेरा
आग न जलती, दीप न जलता, था तम का घेरा,
छकड़े में हर सांस, सांस हर सुधि थी व्यथा पगी
और सुबह तक नहीं किसी की उसमें आंख लगी।

उपसंहार

शायद उन गीतों-गानों में जादू है ऐसा
जो मेरी स्मृतियों के धुंधले-धुंधले मानस पर
दुख के काले-काले, सुख के उजले दिवस, पहर
यों सजीव-सा कर देता है, जब-तब, रह रहकर।

याद देश, उस धरती की मुझको आ जाती है
रहा गूंजता जहां सतत युद्धों का कोलाहल,
जहां रूसियों ने तुर्कों को लोहा मनवाया
और किया था विस्तृत अपनी सीमा का आंचल,
दो सिर के उक़ाब का अब भी डंका बजे जहां
उन सीमाओं में, स्तेपी में, मेरा मिलन वहां,
हो जाता था बंजारों से, उनके छकड़ों से
वे जो चैन, अमन के बन्दे, डरते झगड़ों से,

वे प्रकृति-से मुक्त, मस्त हैं, बच्चों-से चंचल
अलस, शान्ति से प्यार उन्हें, स्वीकार नहीं हलचल,
निर्जन में उनके पीछे बहुधा चल देता था
जो मामूली-सा वे देते, खा-पी लेता था,
निकट अलावों के उनके ही मैं सो जाता था
कूच समय, उनके गीतों का लुत्फ़ उठाता था,
प्यारा-प्यारा मारीऊला, सुन्दर, नाम मधुर
बहुत दिनों तक रटा, रहा वह मेरी जिह्वा पर।

किन्तु प्रकृति के तुम स्वतन्त्र, तुम ऐ निर्धन बेटो
तुमको भी सुख-चैन नहीं जीवन में मिलते हैं!..
तार-तार हो रहे तुम्हारे तम्बू, ख़ेमों में
बहुत यातना देनेवाले सपने पलते हैं,
हर दिन चलती-फिरती डेरों की ये छायायें
वीरानों में भी वे दुख से मुक्ति नहीं पायें,
इनको घेरे हुए उमंगें, आशायें, चाहें
कैसे सम्भव, भाग्य-थपेड़ों से ये बच जायें।

१८२४

तांबे का घुड़सवार

पीटर्सबर्ग का एक क़िस्सा

कुछ शब्द

इस क़िस्से में बयान की गयी घटना सच्चाई पर आधारित है। इसकी सारी तफ़सीलें तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं से ली गयी हैं। जिज्ञासु पाठक व० न० बेर्ख़ की इतिहास-पुस्तक से इनकी तुलना कर सकते हैं।

प्रस्तावना

खड़ा था शून्य तट पर **वह** निकट सुनसान लहरों के,
बहुत-से ख़्याल मन में, स्वप्न थे ऊंचे विचारों के,
नज़र थी दूर तक जाती नदी के पाट चौड़े पर
दिखाई दे रही थी नाव एकाकी जहां जर्जर
नदी थी तेज़ तूफ़ानी, किनारों पर जमी काई
कहीं थे झोंपड़े-झुग्गी, कहीं दलदल, कहीं खाई,
घरौंदों, झोंपड़ों में थे ग़रीबों के लगे डेरे
कुहासे से ढके जंगल, वनों के दूर तक घेरे,
न किरणें घुस सकें जिनमें, न सूरज रास्ता पाये
जहां सब ओर सरसर, सब तरफ़ वन गूजता जाये।

अचानक ख़्याल यह आया –
स्वीडन को यहां से दे चुनौती हम डरायेंगे,
नया, अब इस जगह पर शहर हम अपना बसायेंगे
बड़े दम्भी पड़ोसी का यहां से मुंह चिढ़ायेंगे,

किया निर्णय प्रकृति ने, यह उचित, हम मान उसको लें
कि यूरोप के लिए हम एक खिड़की अब यहां खोलें,
समन्दर के किनारे पांव हम अपने जमायेंगे
नयी इस राह, लहरों पर अनेकों पोत आयेंगे,
बहुत मेहमान होंगे और झण्डे फड़फड़ायेंगे
बड़ा विस्तार होगा, खूब मौजें हम मनायेंगे।

अभी सौ साल बीते पर, निखर यह तो गया कैसा
बहुत कम शहर दुनिया में कि जिनका रूप है ऐसा,
अंधेरे थे वनों के, जिस जगह थीं दलदलें गहरी
वहीं पर गर्व से ऊंचा खड़ा है रूप का प्रहरी,
जहां नीचे तटों पर जाल टूटे फ़िन बिछाते थे
बहुत ही भाग्य-वंचित जो बुरा जीवन बिताते थे,
वहीं पर, उन तटों पर ज़िन्दगी अब जगमगाती है
वहां निर्माण की शोभा छटा अनुपम दिखाती है,
वहां पर महल अब ऊंचे खड़े हैं, बुर्ज, मीनारें,
धनी तट, विश्व भर के पोत अब लंगर वहां डालें,
कि नेवा पर चढ़ाया जा चुका है कवच पाषाणी
अनेकों पुल बने, बस में हुआ, धीरे बहे पानी,
अनेकों द्वीप थे, इसमें जज़ीरे थे कई बिखरे
वहां उपवन हरे उभरे चमन सुन्दर, नये, निखरे,
निराली शान है सचमुच, नयी इस राजधानी की
नहीं तुलना किसी से हो सके इस राज-रानी की,
पुराने मास्को का रंग बिल्कुल पड़ गया फीका
बुढ़ापे पर विजय मानो हुई थी यह जवानी की।

प्यार तुम्हें बेहद करता हूं, ओ तुम पीटर की रचना,
प्यारा मुझको रूप तुम्हारा सुघड़ धीर-गम्भीर बना,
नेवा की संयत धारा भी
प्यारी पत्थर तट-कारा भी,
प्यारे लोहे के जंगले भी, जिनपर नक़्क़ाशी सुन्दर,
चिन्तन में डूबी रातें भी

पारदर्श झुटपुटे शाम के
तम-प्रकाश की, मृदु घातें भी,
और चांद के बिना चमक जो छाई रहती है नभ पर,
अपने कमरे में मैं इससे बिना दीप के भी पढ़ता
ऊंचे-ऊंचे भवन ऊंघते, सड़कें निर्जन, नीरवता,
मुझे स्पष्ट सब कुछ दिखता
और "एडमिरल्टी" के ऊपर इस्पाती छड़-डंड चमकता।
स्वर्णिम नभ पर तम की चादर, छाये तो कैसे छाये,
अपना चोला, रूप बदलती, उषा यहां आये, जाये
सिर्फ़ आध घण्टे तक नभ में रात यहां रहने पाये।
मैं कठोर तेरे जाड़े का, मैं ठण्डक का मतवाला
ठहरा-ठहरा पवन चले जब और कटे कसकर पाला,
चौड़े नेवा तट पर स्लेजें तेज़ी से दौड़ी जायें
गाल युवतियों के गुलाब से भी बढ़कर रंगत पायें,
नाच-रंग की शामें, उनकी चमक-दमक प्यारी लगती
किसी छड़े के यहां मज़े की महफ़िल जब बढ़िया जमती,
झाग उड़ाते शेम्पेनों के जाम सामने जब आते
"पंच मेली" के नीले शोले जब सब को रंग में लाते,
यह सेना का नगर, यहां का जीवट भी मुझको प्यारा
अच्छा लगता मुझे मार्स मैदान, वहां का नज़्ज़ारा,
घुड़सवार भी जहां, जहां पर आयें पैदल सेनायें
एक ढंग की सभी पेरेडें, फिर भी वे मन को भायें,
वहां कतारें लगातार यों उनकी आगे बढ़ती हैं
जैसे लहरें ऊपर चढ़ती, नीचे कभी उतरती हैं,
क़दम मिलाकर सैनिक चलते, और विजयध्वज फहराते,
शिरस्त्राण उनके तांबे के चमक अनोखी दिखलाते
उनपर चिह्न लड़ाई के, सूराख नज़र ढेरों आते।
प्यारी लगती है तू मुझको, जंगी, युद्ध-राजधानी
रुचें धुएं के बादल तेरे, तोप गरज भी तूफ़ानी,
बेटा राजमहल में जिस दिन जनती है प्यारी रानी
या कि विजय पा आनेवाली सेना की हो अगवानी,

उस दिन रूस हमारा सारा फिर से जशन मनाता है
सभी जगह पर हंसी-खुशी का तब आलम छा जाता है,
या वसन्त आ गया निकट, नेवा यह अनुभव करती है
तोड़ बर्फ़ की नीली परतें, वह सागर को बढ़ती है,
मस्ती में आ जाना इसका यह भी मुझे सुहाता है,
तरह-तरह से नगर तुम्हारा मेरा हृदय लुभाता है।

ओ पीटर के शहर और भी तुम चमको, संवरो, निखरो
जैसा है दृढ़ अटल रूस, बस, तुम भी वैसे अटल रहो,
रहे तुम्हारी ही मुट्ठी में क़ुदरत की अंधी ताक़त
कभी न टूटे आसमान से कोई बिजली या आफ़त,
नहीं पुराना गाना अब तो फ़िनलैंडी लहरें गायें
राग शत्रुता, बन्दीजन का, भूल सदा को वे जायें,
गहरी, मीठी निद्रा में इस जगह सो रहा है पीटर!
शान्त रहे यह शहर, नगर!

किन्तु घटी थी एक कारुणिक घटना इसके जीवन में
याद अभी तक बिल्कुल ताज़ा है सजीव इसकी मन में...
प्यारे मित्रो, लिखूं इसे, मैं अपनी क़लम उठाता हूं,
बेशक दर्द भरा यह क़िस्सा, फिर भी तुम्हें सुनाता हूं।

पहला भाग

बुझा-बुझा था नगर, उदासी का सा आलम छाया था
मास नवम्बर, पतझर की ठण्डक ने रंग दिखाया था,
नेवा की लहरें पाषाणी घाटों से टकराती थीं
ग़ुस्से से फुंकार रही थीं, भीषण शोर मचाती थीं,
नेवा थी बेचैन इस तरह जैसे बिस्तर में रोगी
दायें-बायें करवट बदले जैसे व्याकुल दुख-भोगी।
रात लगी थी ढलने, था सब ओर अंधेरा तमस-तिमिर,
बरखा ग़ुस्से से हमले करती थी मानो खिड़की पर
हवा ज़ोर से चीख़ रही थी, दर्द भरा था उसका स्वर।
इसी समय येव्गेनी दावत से वापस घर में आया...

इस जवान नायक का मेरे मन को नाम यही भाया,
प्यारा लगता है कानों को और नाम यह चिर जाना,
मेरी क़लम जानती इसको, यह उसका चिर पहचाना।
नहीं ज़रूरत मैं उसका कुलनाम आपको बतलाऊं
बेशक इसके बारे में मैं फिर भी इतना कह पाऊं,
शायद इसने किसी समय में ऊंचा नाम कमाया था
करामज़ीन की पुस्तक में कुलनाम कभी यह आया था,
लेकिन अब ऊंचे समाज ने यह कुलनाम भुलाया है
इसके ऊपर पड़ी हुई अब तो विस्मृति की छाया है।
कोलोम्ना में रहता है वह
कहीं नौकरी करता है वह,
ऊंचे बड़े-बड़े लोगों से कन्नी काटे, कतराये,
कभी बड़ा था कुल उसका, यह शोक नहीं दिल में लाये
वह अतीत पर गर्व न करता और न उसपर इतराये।

तो घर पर आया येव्गेनी,
झाड़ा अपना कोट, उतारे कपड़े, लेटा बिस्तर में,
किन्तु देर तक किसी तरह भी नींद नहीं उसको आयी
तरह-तरह के ख़्याल उमड़ते आते थे मस्तक, उर में।
लेकिन वह क्या सोच रहा था?
सोच रहा था यही – ग़रीबी, निर्धनता का है मारा,
कठिनाई से, बड़े जतन से, उसने कुछ आदर पाया
और ग़रीबी से भी उसने पाया है कुछ छुटकारा,
भाव कभी यह भी आता था, कृपा ईश की हो जाती –
बुद्धि अधिक यदि वह पा जाता, मिल जाता ज़्यादा पैसा
आख़िर तो कुछ नहीं अजब यह होता जीवन में ऐसा,
ढेरों काहिल, सुस्त बहुत से, पर जिनकी तक़दीर चढ़ी,
अक़्ल नाम की चीज़ गांठ में कम है, फिर भी भाग्य-कड़ी
चमक रही, उनके जीवन में सुख-वैभव है, मौज बड़ी।
सोच रहा था साल सिर्फ़ दो हुए काम उसको करते
देख रहा था घबराहट से तेवर मौसम के चढ़ते,

आता था यह ख़्याल – नदी में शायद पानी बहुत बढ़ा
नेवा के ऊपर से शायद लिये गये पुल सभी उठा।
अपनी प्रिय पराशा से अब भेंट नहीं हो पायेगी
कुछ दिन विरह-वेदना उनको अब तो, हाय, सतायेगी,
बरबस निकली आह हृदय से, ख़्याल जिस समय यह आया,
कवि की तरह उड़ानों में तब मन को उसने उलझाया:
"शादी कर लूं? या कि नहीं मैं? करूं न क्यों ऐसा आख़िर?
यह सच ऐसा करने से कुछ गुज़रेगी भारी मुझपर,
लेकिन क्या है, मैं जवान हूं, ताक़त, हिम्मत रखता हूं
दिन से लेकर बहुत रात तक मैं मेहनत कर सकता हूं,
जैसे-तैसे, मामूली-सा बन जायेगा घर-डेरा
वहां पराशा के संग रहकर सुख पायेगा मन मेरा,
साल एक-दो बीतें शायद मुझे नौकरी और मिले
पांव कहीं पर जमें ढंग से, जीवन में सुख-कुसम खिले –
सौंपूं तभी पराशा को मैं घर भर की ज़िम्मेदारी
पाले-पोसे बच्चों को, हो उसकी यह चिन्ता प्यारी...
अन्त समय के आने तक हम इसी तरह जीते जायें,
रहे हाथ में हाथ प्यार का हम जीवन भर सुख पायें
जब दुनिया से कूच करें तो पोते हमको दफ़नायें..."

ऐसे सपने रहा सजाता, और बहुत था भारी मन
ऐसी थी यह रात कि उसको अखर रहा था सूनापन,
चाह रहा था यही – न ऐसे हवा दर्द से चिल्लाये
और न ग़ुस्से में खिड़की से ऐसे बारिश टकराये...
नींद भरी थीं भारी पलकें, आंख लगी उसकी आख़िर
धीरे-धीरे छंटा अंधेरा, रात बुरी बीती आख़िर,
फीका-फीका, दिन निकला मुरझाया-सा...
बहुत भयानक, दुख की गहरी छाया-सा।
नेवा सारी रात रही थी तूफ़ानों से टकराती
किसी तरह पहुंचे सागर को, पार न, पर, वह तो पाती,
जीते प्रबल थपेड़ों को वह ऐसा उससे नहीं हुआ...

उलझे, जूझे झंझा से यह कस-बल उसमें नहीं रहा...
सुबह लोग बहुतेरे आये
सभी, तटों पर भीड़ लगाये,
देख रहे छींटे, फ़व्वारे,
टीलों-सी उठती लहरों के
बल खाते जल के नज़्ज़ारे।
किन्तु दिशा से खाड़ी की झंझा का ऐसा ज़ोर बढ़ा
मार थपेड़े नेवा को, अब उसने पीछे दिया हटा,
उबल रही गुस्से से नेवा पीछे हटती जाती थी
द्वीपों को जलमग्न करे अपना उन्माद दिखाती थी।
मौसम ने कुछ और बिगड़कर अब अपने तेवर बदले
उफन पड़ी मानो नेवा भी उछले, कूदे, वह उबले,
और अचानक किसी दरिन्दे-सी गुस्से से पगलाकर
झपट पड़ी वह शहर, नगर पर बुरी तरह से झल्लाकर।
नेवा यों दीवानी-सी हो बढ़ती आती थी आगे
लोग डरे, घबराये, सिर पर पांव सभी रखकर भागे,
नेवा के तट निर्जन, सारे बदल गये वीरानों में
सभी ओर पानी ही पानी, पानी था तहख़ानों में,
पानी ऐसे चढ़ा कि उसमें डूब गयीं सारी नहरें
कैसे निज अस्तित्व बचायें, जब हों तूफ़ानी लहरें,
पेत्रोपोल मगन पानी में, नज़र इस तरह से आये,
ज्यों जलदेव कमर तक डूबा पानी में तैरा जाये।

सभी ओर पानी का घेरा, निर्मम लहरें, जल रेला
वह चोरों सा तोड़ ख़िड़कियां घुसा, घरों में खुल खेला,
छोटी-छोटी नावें दौड़ें, वे शीशों से टकरायें
उनको तोड़ें, दूर-दूर तक वे तो उनको बिखरायें।
जहां-जहां तक दृष्टि जा सके दृश्य नज़र ऐसे आयें —
कहीं झोंपड़े टूटे-फूटे या छप्पर बहते जायें,
बहें कहीं शहतीर, कहीं पर गोदामों के माल बहें
कहीं ग़रीबों की कुछ चीज़ें, जो उनकी दुख-कथा कहें,

ग़ज़ब किया तूफ़ान, बाढ़ ने, पुल भी सभी बहाये हैं
क़ब्रों से ताबूत और शव उनके संग बह आये हैं,
कोप ईश्वर का वे देखें, लोग दिलों में सभी डरें
दण्ड अभी क्या और मिलेगा, क्या दुर्गति प्रभु और करें,
चारा, नष्ट अनाज हो रहा, हाय! कहां ये पायेंगे?
उजड़ रहे घर-दर जो इतने भला, कहां से आयेंगे?
बात भयंकर उसी वर्ष की। ज़ार कि अब जो नहीं रहा,
दुख में डूबा; परेशान-सा, छज्जे में आ खड़ा हुआ,
और कहा उसने लोगों से – "ईश्वर जैसा, जो चाहें
उनकी इच्छा के सम्मुख तो नहीं ज़ार कुछ कर पायें।"
बैठ गया ख़्यालों में खोया, दूर दृष्टि थी दर्द भरी
देख रहा था। सभी ओर से कैसी दुख की घटा घिरी,
जितने थे मैदान दूर तक, वे सब बने बड़ी झीलें
सड़कें नद-नालों में बदलीं, जो झीलों से कहीं मिलें,
एक द्वीप-सा घिरा हुआ जल में था केवल महल खड़ा
वह एकाकी, सूना-सूना, शोकग्रस्त-सा दुखी बड़ा,
देखा ऐसा दृश्य ज़ार ने निर्णय मन में तुरत किया
बड़े अफ़सरों और जनरलों को उसने झट हुक्म दिया,
जहां बाढ़ का ज़ोर अधिक था, वे ख़ुद पानी में उतरें
जहां-जहां जोखिम, ख़तरा था, वे लोगों की मदद करें,
जो बैठे थे छिपे घरों में, बाहर आते डरते थे
उन्हें बचाने वे बढ़ते थे, उनकी रक्षा करते थे।

इसी समय की बात, चौक पीटर में घटना यही घटी
जहां एक कोने में ऊंची, नयी इमारत एक खड़ी,
और बग़ल में जिसकी केवल थोड़ी-सी ऊंचाई पर
पंजे ऊपर किये, खड़े दो सन्तरियों से शेर-बबर,
एक शेर पर पत्थर के था येव्गेनी बैठा चढ़कर
सीने पर हाथों को बांधे था बेचारा, नंगे सिर,
चेहरे का रंग उड़ा हुआ था और न वह तो हिले-डुले
किन्तु न अपनी चिन्ता उसको, अपने दुख में नहीं घुले,

उसे नहीं थी इतनी सुध भी, कैसे भूखी लहर उछल
सराबोर कर गयी कभी की, उसके जूते, उनके तल,
उसके मुंह पर बारिश कैसे कोड़े-से बरसाती थी
हवा थपेड़े मार रही थी, ग़ुस्से से चिल्लाती थी,
टोप उड़ा कब हवा ले गयी, उसे न यह भी पता चला
इसकी क्या चिन्ता हो सकती, क्या इसकी परवाह भला।
उसकी परेशान नज़रें थीं एक दिशा में जमी हुई
बांध टकटकी देख रही थीं आंखें मानो थमी हुई,
वहां धधकती गहराई से जैसे टीलों-सी लहरें
ऊपर उठें गरजती मानो वे ग़ुस्से से उबल पड़ें,
था तूफ़ान वहां पर भारी, थे मकान गिरते जाते
उनके टुकड़े जहां-तहां थे पानी में बहते आते,
हे प्रभु मेरे, हे ईश्वर!
अत्याचार न इतना कर!
हाय, निकट पागल लहरों के, हाय, निकट उस खाड़ी के
जहां बाड़ है बिना रंग की,
निकट बेद की झाड़ी के,
है छोटा-सा एक घरौंदा, रहती वहीं पराशा है
वही कल्पना, उसका सपना, उसकी जीवन आशा है,
विधवा मां, बेटी उस घर में... यह सब सच है या सपना
या कि हमारा जीवन ही है मानो झूठा स्वप्न बना?
इस धरती पर व्यंग्य गगन का यह तो जैसे कोप-जना?

येव्गेनी पर तो जैसे था, जादू-टोना किया गया
उसे संगमरमर में जैसे गाड़ा या जड़ दिया गया,
वह बुत बना हुआ बैठा था, नदी कर रही मनमानी
उसके चारों ओर न कुछ भी, था केवल पानी, पानी,
लेकिन उसकी ओर पीठ कर, अडिग, अटल ऊंचाई पर
जहां न नेवा पहुंच पा रही ग़ुस्से से उन्मत्त, बिफर,
तांबे के घोड़े पर अपना हाथ उठाये बैठा था
भला देवता को क्या चिन्ता, यदि था पानी चढ़ा हुआ।

दूसरा भाग

सभी ओर बरबादी करके तृप्त हुई नेवा आखिर
बेशर्मी के हंगामों से चूर हुई वह तो थककर,
खुश होती अपने गुस्से पर वापिस वह लौटी जाये
माल लूट का जहां-तहां पर बेदर्दी से बिखराये,
जैसे क्रूर, लुटेरे-डाकू, किसी गांव में घुस आयें,
तोड़ें-फोड़ें, मारें-काटें, गले दबायें, चिल्लायें,
गाली बकें, डरायें सबको, जुल्म करें वे धमकायें,
माल लूट का लेकर भागें, किन्तु हृदय में घबरायें
पीछा करनेवाले पहुंचें, कहीं न वे पकड़े जायें,
इसीलिये हड़बड़ी करें औ' भागे जायें ताबड़ तोड़,
माल लूट का जो गिर जाये, देते उसे वहीं पर छोड़।

उतर गया जब थोड़ा पानी, सड़क लगी कुछ-कुछ दिखने
येव्गेनी तब जल्दी-जल्दी, लगा नदी तट को बढ़ने,
आशा और निराशा मन में, थी शंका, दिल धड़क रहा
हालत क्या मां-बेटी की है, क्या दोनों ने वहां सहा?
नदी शान्त कुछ हुई, किन्तु थी अभी विजय से मदमाती
अभी क्रुद्ध लहरों में वह थी अपना गुस्सा दिखलाती,
लहरों के नीचे तो जैसे अब भी ज्वाला जलती थी
अब भी आपे से बाहर थी, ढेरों झाग उगलती थी,
बुरी तरह से हांफ रही थी, सांस न टिककर ले पाये
उस घोड़े-सा दम फूला था, भाग युद्ध से जो आये।
सभी ओर येव्गेनी देखे, नाव नज़र उसको आई
भागा उसकी ओर कि जैसे कोई निधि उसने पाई,
तुरत पुकार लिया मांझी को, जो दिलेर था मस्त, निडर
दस कोपेक ले नाव बढ़ा दी उसने पागल लहरों पर।
बहुत अनुभवी मांझी ने, तूफ़ानी लहरों से डटकर,
बड़ी देर तक लिया मोर्चा, उसे भरोसा था खुद पर
नाव कभी लहरों में दबती, आती ऊपर कभी उभर,

उसे निगलने को व्याकुल था, हर क्षण, हर पल, उर्मि-उदर
किन्तु नाव, नाविक, येव्गेनी पहुंच गये तट पर आख़िर।

परिचित सड़क सामने उसके, दौड़ा वह दुख का मारा
जानी-पहचानी जगहों को, देखे, घूरे बेचारा,
वह उनको पहचान न पाये, सचमुच दृश्य भयानक था
खण्डहर और तबाही में, सब बदला यहां अचानक था,
कुछ पानी के साथ बह गया, कुछ था इधर-उधर बिखरा
कोई घर था टेढ़ा-मेढ़ा, कोई बिल्कुल टूट गिरा,
कुछ तो बिल्कुल लुप्त हो गये, शेष न उनका नाम-निशान
खिसक गये कुछ तो नींवों से, कैसे हो उनकी पहचान,
सभी ओर शव पड़े हुए थे, जैसे हो यह रण-आंगन
येव्गेनी को होश न कुछ भी, बहुत विकल था उसका मन,
व्यथित यातना से था इतना, वह सन्नाटे में आया
मूक, मौन, सुध-बुध बिसराये, भागा जाये घबराया,
उसी दिशा में, जहां भाग्य ने रेखा गुप्त बनायी थी
मुहरबन्द ख़त में क्या जाने कैसी ख़बर छिपायी थी,
नगर-छोर पर जो बस्ती थी उसी तरफ़ भागा जाये
यह खाड़ी, घर यहीं निकट था, नज़र न लेकिन वह आये...
कहां गया वह?.. कोई इतना बतलाये...
रुका ठिठककर
पीछे गया, लौटकर आया वह तो इसी जगह पर फिर,
यहां-वहां देखे... बढ़ जाये... फिर से देखे इधर-उधर
यही जगह है, ठीक यही है, जहां खड़ा था उनका घर;
सरपत की झाड़ी तो यह है। फाटक था इस जगह, यहां
शायद वह बह गया बाढ़ में, पर मकान भी गया कहां?
सभी तरह के उलटे-सीधे ख़्याल बुरे मन में आयें
इधर-उधर वह चक्कर काटे लिये हृदय में चिन्तायें,
ऊंचे-ऊंचे मन समझाये, किसी तरह से बेचारा
सहसा माथा ठोंका उसने, हंसा ज़ोर से दुखियारा।
सहमे हुए नगर पर रजनी की काली चादर छाई

किसी तरह भी नींद न लोगों को लेकिन जल्दी आई,
जो कुछ बीत चुका था दिन में, उसकी चर्चा करते थे
जो बीती थी उसे याद कर डरते और सिहरते थे।

फीके, थके-थके मेघों से किरण सुबह की जब निकली
शान्त नगर पर फैला दी जब उसने ज्योति, प्रभा उजली,
पिछले दिन के दुख के मानो चिह्न हुए सब अनजाने
लाल उषा ने उन्हें ढक दिया, बुने अरुण ताने-बाने।
पहलेवाले ढर्रे पर ही लौट ज़िन्दगी फिर चल दी
दिखने लगी गली, सड़कों पर पहले जैसी हलचल भी,
किये कठोर कलेजे अपने, लोग घरों से अब निकले
बाबू और कर्मचारी भी, सब दफ़्तर की ओर चले,
व्यापारी लोगों ने भी तो अब हिम्मत से काम लिया
गोदामों को खोला, जो था बचा माल वह जमा किया,
जो कुछ घाटा हुआ, उसे वे पूरा जल्दी पुनः करें
बेचें महंगा माल तिजोरी अपनी ख़ाली पुनः भरें।
लोग अहाते लांघ रहे थे कहीं किश्तियों में चढ़कर
बैरन ख़्वोस्तोव, कवि, प्रभु-प्यारा, करता था कुछ और, मगर,
वह अपने ख़्यालों में खोया, रचता था बस, काव्य अमर
उसने छन्दों में कह डाला, जो बीती नेवा तट पर।

लेकिन वह येव्गेनी मेरा, हां, येव्गेनी बेचारा...
दिल पर ऐसी चोट पड़ी, अब पागल था दुख का मारा,
नेवा की विद्रोही लहरें, उनका ऊंचा कोलाहल
तेज़ पवन के प्रबल थपेड़े, सर्राटे औ' उथल-पुथल,
यह सब कानों में बजता, वह गुमसुम चलता जाता था
कोई स्वप्न भयानक मानो हर क्षण उसे सताता था।
बीत गया सप्ताह एक, फिर बीता ऐसे पूरा मास
लौटा कभी न घर येव्गेनी ख़ाली पड़ा रहा आवास।
गृह-स्वामी ने यह देखा, तो झटपट निर्णय और किया

निर्धन कवि को भाड़े पर घर उसने अपना चढ़ा दिया।
लेने को सामान वहां से कभी न येव्गेनी आया
वह अजनबी बना जग के हित, सब ने उसको ठुकराया।
पैदल इधर-उधर वह दिन भर आवारा घूमा करता
सोता कहीं घाट पर, टुकड़े मांग पेट अपना भरता।
तन पर फटे-पुराने कपड़े चिथड़े होते जाते थे
नीच, दुष्ट बच्चे पीछे से पत्थर भी बरसाते थे,
कहां चला जाता सड़कों पर, ध्यान न उसको रहता था
कोचवान, गाड़ीवानों के वह चाबुक भी सहता था,
बाढ़ और तूफ़ान भयानक दिल में बैठा था जो डर
वही निरन्तर शोर गूंजता, उसे न जग की तनिक ख़बर।
किसी तरह से बीत रहे थे बहुत दुखी थे उसके दिन
नहीं दरिन्दों का जीवन था और न मानव का जीवन,
वह दुनिया से दूर नहीं था, किन्तु न था जग का वासी
वह जीवित, मृत, भूत-प्रेत भी और नहीं था संन्यासी...

एक बार क्या हुआ, घाट पर नेवा के था नींद मगन
वह येव्गेनी। गर्मी बीती, पतझर के दिन, तेज़ पवन,
एक बड़ी दीवार कि लहरें ऐसे तट से टकरायें
चढ़ें घाट पर, करें शिकायत और झाग वे बिखरायें,
चिकनी-चिकनी घाट-पैड़ियां उनसे यों मारें टक्कर,
जैसे कोई सिर पटके न्यायालय के निर्मम दर पर
किन्तु अदालत ध्यान न दे, न ले दुखिया की सार, ख़बर।
जागा येव्गेनी बेचारा। थे मौसम के चिह्न बुरे
घोर उदासी, पानी टपके और हवा भी बैन करे,
रात्रि-तिमिर में कहीं दूर से, पवन-रुदन के उत्तर में
पहरेदार, सन्तरी कोई, चिल्लाता ऊंचे स्वर में...
जगा चौंककर जब येव्गेनी, स्मृतियां सभी सजीव हुईं
बड़ी भयानक यादें आंखों के सम्मुख सब घूम गयीं,
जल्दी से उठ खड़ा हुआ, वह चला क़दम ले चले जिधर
किन्तु देखने लगा ध्यान से एक जगह सहसा रुककर,

धीरे-धीरे घुमा रहा था सभी ओर वह दृष्टि, नज़र,
भय की बड़ी भयानक छाया अंकित थी उसके मुख पर।
भवन सामने वही, स्तम्भ भी, वही सन्तरी शेर-बबर
जो सचमुच के लगते थे, था उठा हुआ पंजा ऊपर,
निकट वही चट्टान, स्मारक, सभी ओर था अंधेरा
लोहे के जंगले ने जिसको सभी ओर से था घेरा,
तांबे के घोड़े पर अपना आसन देव जमाये था
दूरी पर वह एक दिशा में अपना हाथ बढ़ाये था।

सहसा सिहर उठा येव्गेनी, उसे झुरझुरी-सी आई
पर्दा-सा हट गया, भयानक व्यथा-कथा मन पर छाई,
यही जगह है, जहां बाढ़ ने अपना रंग दिखाया था
हिंसक लहरों ने गुस्से में ज़ुल्म बहुत-सा ढाया था,
यही जगह है, यही चौक है, शेरों को भी पहचाना
ऊंचाई पर जो निश्चल था, बुत-सा, उसको भी जाना,
तांबे का सिर वही, अटल है जिसके चारों ओर तिमिर
वही, वही, जिसकी इच्छा से बसा नगर सागर-तट पर...
बड़ा भयानक वह लगता है अंधकार में घिरा हुआ!
कौन कहे, उसके मस्तक में ख़्याल समाये हैं क्या-क्या!
उसके मन में, उसके भीतर कैसी शक्ति धड़कती है!
उसके घोड़े में भी जाने कैसी आग धधकती है।
बतलाओ गर्वीले घोड़े जाते सरपट उड़े किधर
कहां टिकाओगे सुम अपने, उतरोगे किस धरती पर?
ओ लोगों के भाग्य-विधाता, महाप्रतापी, बोलो तो
क्या यह नहीं किया था तुमने? राज़ तनिक यह खोलो तो,
लोहे की डाली लगाम औ' ऊपर रूस उठाया था
इस घोड़े की तरह उसे भी ऊंचे शिखर चढ़ाया था?

इसी देवता की चौकी के गिर्द बेचारे पागल ने
चक्कर एक लगाया, उसने विह्वलता से, व्याकुल ने,
उसके चेहरे पर भी उसने दौड़ाई वहशी नज़रें

जिसने अपने भुज-बल से कर ली आधी दुनिया वश में।
उसे सांस मुश्किल से आये, लगा कि जैसे दम घुटने
लोहे के ठण्डे जंगले पर माथा टिका दिया उसने,
आंखों में तो उसकी मानो धुंध, कुहासा-सा छाया
और हृदय को जैसे जलते अंगारों ने दहकाया,
ख़ून उबलने लगा, क्रोध से उसका चेहरा लाल हुआ
उस गर्वीले बुत के सम्मुख बड़ा अजब-सा हाल हुआ,
दांत पीसने लगा, उंगलियां सब भींचीं उसने कसकर
ऐसी हालत, भूत-प्रेत हो चढ़ा हुआ जैसे सिर पर,
ग़ुस्से में धीरे से बोला – "बड़े बने हो निर्माता
ज़रा रुको तो, अक्ल ठिकाने हूं लाता!.."
इतना ही बस कहा, भागने लगा पांव सिर पर रखकर,
उसको लगा कि ज़ार भयंकर ग़ुस्से से मानो भरकर
उसकी ओर घुमा चेहरे को, डाले उसपर कड़ी नज़र...
ख़ाली चौक, अकेला ही वह ऐसे भागा जाता था
भाग रहा था अपने पीछे मानो यह सुन पाता था –
घन-गर्जन होता हो या फिर धरती ही थर्राती हो
ऐसे टापें पड़ें ज़ोर से सड़क धसकती जाती हो।
फीकी-सी चांदनी चांद की उसमें वह जगमगा रहा
घुड़सवार तांबे का उसके पीछे अपना हाथ उठा,
बेहद तेज़ी से अपना घोड़ा दौड़ाता आता था
सारी रात जिधर भी वह बेचारा पागल जाता था,
घुड़सवार तांबे का, पीछा सभी जगह पर करता था
सभी जगह पर टापों का भारी-बोझल स्वर बजता था।

इस दिन से, यदि इसी चौक में भूले से वह आ भटका
हाल बुरा हो जाता उसका, रंग उड़ता था चेहरे का,
रख छाती पर हाथ थाम वह दिल को झट अपने लेता
मन की घोर व्यथा को मानो इसी तरह थपकी देता,
अपनी फटी-पुरानी टोपी वह उतारता था सिर से,

सहमा-सहमा, घबराया-सा और नज़र नीची करके
खिसक वहां से जाता था ...

एक द्वीप छोटा-सा बिल्कुल सागर तट पर दिखता था
कभी देर हो जाती कोई मछुआ वहां उतरता था,
आग जलाता औ' बेचारा हंडिया वहीं चढ़ाता था
खाता-पीता और वहीं पर अपनी रात बिताता था,
या फिर छोटा-मोटा बाबू नाव इधर ले आ जाता
छुट्टी के दिन बड़े मज़े से वह अपना दिल बहलाता।
था यह निर्जन द्वीप, यहां पर सभी ओर था वीराना
ऐसी ऊसर भूमि, घास का भी मुश्किल था उग पाना,
घास-फूस का एक झोंपड़ा यहां बाढ़ में बह आया
पानी पर यों लगता जैसे किसी झाड़ की हो छाया,
लाद उसे पिछले वसन्त में ले आये वे बजरे पर
वह था ख़ाली, टूटा-फूटा, बिखरा-बिखराया, जर्जर,
मिला उन्हें उसकी चौखट पर वह दीवाना पड़ा हुआ
नहीं सांस थी, था शव ठण्डा, वह बेचारा मरा हुआ,
इस हालत में उसे वहां से उठवाया
और ख़ुदा के लिये कहीं पर दफ़नाया।

१८३३

कथाएं

क़िस्सा मछली मछुए का

नीले-नीले सागर तट पर
घास-फूस की कुटी बना कर,
तैंतीस वर्षों से उसमें ही
बूढ़ा-बुढ़िया रहते थे,
बुढ़िया बैठी सूत कातती
बूढ़ा जल में जाल बिछाता,
एक बार जो जाल बिछाया
वह बस काई लेकर आया,
बार दूसरी जाल बिछाया
वह बस जल-झाड़ी ही लाया,
बार तीसरी जाल बिछाया
मछली एक फांसकर लाया,
किन्तु नहीं साधारण मछली,
ढली हुई सोने में असली।
मानव की भाषा में बोली –
"बाबा, मुझको जल में छोड़ो
बदले में जो चाहो, ले लो,
क्या इच्छा, तुम इतना बोलो।"
बूढ़ा चकित हुआ, घबराया
इतने सालों जाल बिछाया,

मछली मानव जैसे बोले
नहीं कभी भी वह सुन पाया।
छोड़ दिया उसको पानी में
और कहा मीठी वाणी में –
"भला करें भगवान तुम्हारा
तुम नीले सागर में जाओ,
नहीं चाहिये मुझको कुछ भी,
तुम घर जाओ, मौज मनाओ।"

बूढ़ा जब वापस घर आया,
बुढ़िया को सब हाल सुनाया –
"आज जाल में आयी मछली
नहीं आम, सोने की असली,
हम जैसी भाषा में बोली –
'बाबा, मुझको जल में छोड़ो,
बदले में जो चाहो, ले लो
क्या इच्छा तुम इतना बोलो।'
मांगूं कुछ, यह हुआ न साहस
यों ही छोड़ दिया जल में, बस।"
बुढ़िया बूढ़े पर झल्लायी
उसे करारी डांट पिलायी –
"बिल्कुल बुद्धू तुम, उल्लू हो!
कुछ भी नहीं लिया मछली से
नया कठौता ही ले लेते
घिसा हमारा, नहीं देखते।"

कान दबा वह तट पर आया
कुछ बेचैन उसे अब पाया।
मछली को जा वहां पुकारा
वह तो तभी चीर जल-धारा,

आयी पास और यह बोली –
"बाबा क्यों है मुझे बुलाया ?"
बूढ़े ने झट शीश झुकाया –
"सुनो बात तुम, जल की रानी
तुम्हें सुनाऊं व्यथा-कहानी,
मेरी बुढ़िया मुझे सताये
उसके कारण चैन न आये,
कहे : कठौता घिसा पुराना
लाओ नया, तभी घर आना।"
दिया उसे मछली ने उत्तर –
"दुखी न हो, बाबा, जाओ घर
पाओ नया कठौता घर पर।"
बूढ़ा वापस घर पर आया
नया कठौता सम्मुख पाया।
बुढ़िया और अधिक झल्लायी
और ज़ोर से डांट पिलायी –
"बिल्कुल बुद्धू तुम, उल्लू हो,
मांगा भी तो यही कठौता
कुछ तो और ले लिया होता।
उल्लू, फिर सागर पर जाओ,
औ' मछली को शीश नवाओ,
तुम अच्छा-सा घर बनवाओ।"

बूढ़ा फिर सागर पर आया
कुछ बेचैन उसे अब पाया,
स्वर्ण मीन को पुनः पुकारा
मछली तभी चीर जल-धारा,
आयी पास और यह पूछा –
"बाबा क्यों है मुझे बुलाया ?"

बूढ़े ने झट शीश झुकाया –
"सुनो बात तुम, जल की रानी
तुम्हें सुनाऊं व्यथा-कहानी,
मेरी बुढ़िया मुझे सताये
उसके कारण चैन न आये,
कहती – जाकर शीश नवाओ
जल-रानी की मिन्नत करके
तुम अच्छा-सा घर बनवाओ।"
"दुखी न हो, तुम वापस जाओ
और वहां निर्मित घर पाओ।"

वह कुटिया को वापस आया
नहीं चिह्न भी उसका पाया।
वहां खड़ा था अब बढ़िया घर,
चिमनी जिसकी छत के ऊपर
लकड़ी के दरवाज़े सुन्दर।
बुढ़िया खिड़की में बैठी थी
औ' बूढ़े को कोस रही थी –
"तुम बुद्धू हो, मूर्ख भयंकर
मांगा भी तो केवल यह घर,
जाओ, फिर से वापस जाओ
औ' मछली को शीश नवाओ,
नहीं गंवारू रहना चाहूं,
ऊंचे कुल की बनना चाहूं।"
बूढ़ा फिर सागर पर आया
कुछ बेचैन उसे अब पाया,
मछली को फिर वहां पुकारा
वह तो तभी चीर जल-धारा,
आयी पास, और यह पूछा –
"बाबा, क्यों है मुझे बुलाया?"

बूढ़े ने झट शीश झुकाया –
"सुनो बात तुम, जल की रानी
तुम्हें सुनाऊं व्यथा-कहानी,
मेरी बुढ़िया मुझे सताये
उसके कारण चैन न आये,
नहीं गंवारू रहना चाहे
ऊंचे कुल की बनना चाहे।"
बोली मछली – "जी न दुखाओ
उसको ऊंचे कुल की पाओ।"

बूढ़ा वापस घर को आया
दृश्य देख, वह तो चकराया,
भवन बड़ा-सा सम्मुख सुन्दर
बुढ़िया बाहर दरवाज़े पर,
खड़ी हुई, बढ़िया फ़र पहने
तिल्ले की टोपी औ' गहने,
हीरे-मोती चमचम चमकें
स्वर्ण मुंदरियां सुन्दर दमकें,
लाल रंग के बूट सुहायें
नौकर-चाकर दायें-बायें,
बुढ़िया उनको मारे, पीटे
बाल पकड़कर उन्हें घसीटे।
बूढ़ा यों बुढ़िया से बोला –
"नमस्कार, देवी जी, अब तो
जो कुछ चाहा, वह सब पाया
चैन तुम्हारे मन को आया।"
बुढ़िया ने डांटा, ठुकराया,
उसे सईस बना घोड़ों का
तुरत तबेले में भिजवाया।

बीता हफ़्ता, बीत गये दो,
आग बबूला बुढ़िया ने हो
फिर से बूढ़े को बुलवाया,
उसको यह आदेश सुनाया –
"जा मछली को शीश नवाओ
मेरी यह इच्छा बतलाओ,
बनना चाहूं मैं अब रानी
ताकि कर सकूं मैं मनमानी।"
बूढ़ा डरा और यह बोला –
"क्या दिमाग़ तेरा चल निकला?
तुझे न तौर-तरीक़ा आये
हंसी सभी में तू उड़वाये।"
बुढ़िया अधिक क्रोध में आयी
औ' बूढ़े को चपत लगायी –
"क्या बकते हो ऐसी जुर्रत?
मुझसे बहस करो, यह हिम्मत?
तुरत चले जाओ सागर पर
वरना ले जायें घसीटकर।"
बूढ़ा फिर सागर पर आया
और विकल अब उसको पाया,
स्वर्ण मीन को पुनः पुकारा
मछली तभी चीर जल-धारा,
आयी पास और यह पूछा –
"बाबा, क्यों है मुझे बुलाया?"
बूढ़े ने झट शीश झुकाया –
"सुनो व्यथा मेरी, जल-रानी
तुम्हें सुनाऊं दर्द कहानी,
बुढ़िया फिर से शोर मचाये
नहीं इस तरह रहना चाहे,
इच्छुक है बनने को रानी
ताकि कर सके वह मनमानी।"

स्वर्ण मीन तब उससे बोली –
"दुखी न हो, बाबा, घर जाओ
तुम बुढ़िया को रानी पाओ!"

बूढ़ा फिर वापस घर आया
सम्मुख महल देख चकराया,
अब बुढ़िया के ठाठ बड़े थे
उसके तेवर खूब चढ़े थे,
थे कुलीन सेवा में हाज़िर
होते थे सामन्त निछावर,
मदिरा से प्याले भरते थे
वे प्रणाम झुक-झुक करते थे,
बुढ़िया केक, मिठाई खाये
और सुरा के जाम चढ़ाये,
कंधों पर रख बल्लम, फरसे
सब दिशि पहरेदार खड़े थे।
बूढ़ा ठाठ देख, घबराया
झट बुढ़िया को शीश नवाया,
बोला – "अब तो ख़ुश रानी जी,
जो कुछ चाहा, वह सब पाया
अब तो चैन आपको आया?"
उसकी ओर न तनिक निहारा
इसे भगाओ, किया इशारा,
झपटे लोग इशारा पाकर
गर्दन पकड़ निकाला बाहर,
सन्तरियों ने डांट पिलायी
बस, गर्दन ही नहीं उड़ायी,
सब दरबारी हंसी उड़ायें
ऊंचे-ऊंचे यह चिल्लायें –
"भूल गये तुम कौन, कहां हो?
आये तुम किसलिये, यहां हो?

ऐसी ग़लती कभी न करना
बहुत बुरी बीतेगी वरना।"

बीता हफ़्ता, बीत गये दो,
सनक नयी आयी बुढ़िया को,
हरकारे सब दिशि दौड़ाये
ढूंढ़, पकड़ बूढ़े को लाये,
बुढ़िया यों बोली बूढ़े से –
"फिर से सागर तट पर जाओ
औ' मछली को शीश नवाओ,
नहीं चाहती रहना रानी,
अब यह मैंने मन में ठानी
करूं सागरों में मनमानी,
जल में हो मेरा सिंहासन
सभी सागरों पर हो शासन,
स्वर्ण मीन ख़ुद हुक्म बजाये
जो भी मांगूं लेकर आये।"

हुई न हिम्मत कुछ समझाये
वह बुढ़िया को अक़्ल सिखाये,
लौटा वह नीले सागर पर
सागर में तूफ़ान भयंकर,
लहरें ग़ुस्से से बल खायें
उछलें, कूदें, शोर मचायें,
स्वर्ण मीन को पुनः पुकारा
मछली चीर तभी जल-धारा,
आयी पास, और यह पूछा –
"बाबा, क्यों है मुझे बुलाया?"
बूढ़े ने झट शीश नवाया –
"सुनो व्यथा, मेरी जल-रानी
तुम्हें सुनाऊं दर्द-कहानी,

उस बुढ़िया से कैसे निपटूं?
अक़्ल भला कैसे उसको दूं?
नहीं चाहती रहना रानी
बात नई अब मन में ठानी,
चाहे, हुक्म चले पानी पर
सागर और महासागर पर,
जल में हो उसका सिंहासन
सभी सागरों पर हो शासन,
तुम ख़ुद उसका हुक्म बजाओ
वह जो मांगे, लेकर आओ।"
स्वर्ण मीन ने दिया न उत्तर
केवल अपनी पूंछ हिलाकर,
चली गयी गहरे सागर में
और खो गयी कहीं लहर में।
बूढ़ा तट पर आस लगाये
रहा देर तक नज़र जमाये,
मीन न लौटी, वह घर आया
उसी कुटी को सम्मुख पाया,
चौखट पर बैठी थी बुढ़िया
वह भारी आफ़त की पुड़िया,
सम्मुख था फिर वही कठौता
जिसका टूटा हुआ तला था।

१८३३

सोने का मुर्ग़ा

किसी राज्य में, किसी देश में
किसी अजाने से प्रदेश में,
ज़ार ददोन राज करता था
जिससे हर राजा डरता था,
बड़ा भयंकर था यौवन में
बड़ा सूरमा रण-आंगन में,
बड़े मोर्चे उसने मारे
उससे लड़ सब दुश्मन हारे।
वक़्त बुढ़ापे का जब आया
मिले चैन, यह दिल ने चाहा,
किन्तु तभी तो आस-पास के
राजा दुश्मन जो हताश थे,
हर दिन उसको लगे सताने
अपनी ताक़त, अकड़ दिखाने।
सीमाओं की रक्षा के हित
सेना दौड़ानी पड़ती नित,
सेना-नायक ज़ोर लगाते
फिर भी दुश्मन बाज़ न आते,
लगता रिपु दक्षिण से आये
वह पूरब से फ़ौज बढ़ाये!

यहां अगर वह मुंह की खाता
तो नौसेना ले चढ़ आता,
ज़ार ददोन दुखी हो रोता
और नींद भी अपनी खोता,
लानत है, यह भी क्या जीना
हर दिन घूंट ज़हर के पीना।
एक उपाय ध्यान में आया
तुरत नजूमी को बुलवाया,
वह था ज्ञानी, ज्ञान बहुत था
समझदार, विद्वान बहुत था।

उसने अपना थैला खोला
दायें बायें उसे टटोला
मुर्ग़ निकाला स्वर्ण-सुनहरा
और कहा – "यह देगा पहरा,
इसको ऊंची सी सलाख पर
कहीं बिठा दो ऊंचाई पर,
शान्त रहेगा सब कुछ जब तक
मौन रहेगा यह भी तब तक,
ख़तरा नज़र अगर आयेगा
शत्रु निकट यदि मंडरायेगा,
देखेगा सेनायें बढ़तीं
तेरी सीमाओं पर चढ़तीं,
तत्क्षण वह कलगी सीधी कर
चिल्लायेगा ज़ोर लगाकर,
ख़ूब ज़ोर से पख हिलाये
ख़ुद वह घूम उधर ही जाये।"
ज़ार हुआ बेहद आभारी
कहा – "कृपा यह बड़ी तुम्हारी,

मालामाल तुम्हें कर दूंगा
यह एहसान नहीं भूलूंगा,
मुंह मांगा इनाम पाओगे
वह ही दूंगा, जो चाहोगे।"

सोने का मुर्ग़ा सलाख पर
बैठा, पहरा देता डटकर,
ख़तरा नज़र कहीं जो आता
सजग उसी क्षण वह हो जाता,
हिलता-डुलता, पंख हिलाता
ख़ुद भी घूम उधर ही जाता,
ऊंचे कुकडूं-कूं चिल्लाता
ख़तरा है, वह यह बतलाता।
ज़ार मज़े से अब सोता था
वह बेचैन नहीं होता था,
शान्त पड़ोसी दुश्मन सारे
वे क्या करते अब बेचारे,
किया ज़ार ने ऐसा हीला
हुआ सभी का कस-बल ढीला।

साल दूसरा बीता जाये
कभी न मुर्ग़ा शोर मचाये,
किन्तु अचानक शोर मचा जो
गया जगाया तभी ज़ार को –
"ज़ार उठो तुम पिता हमारे!"
सेनापति यह अर्ज गुज़ारे,
"जागो, जागो, पिता दुहाई
कोई बड़ी मुसीबत आई।"

"क्या है, कौन मुसीबत आई?"
पूछे वह लेता जम्हाई।
सेनापति उसको बतलाये –
"जी, हुज़ूर मुर्ग़ा चिल्लाये,
सभी जगह दहशत, डर छाया",
ज़ार निकट खिड़की के आया,
देखा – मुर्ग़ा पंख हिलाये
वह पूरब की राह दिखाये,
"जल्दी करो न देर लगाओ
झटपट घोड़ों पर चढ़ जाओ।"
भारी सेना दे बेटे को
पूरब में भेजा जेठे को,
मुर्ग़ा फिर से शान्त हो गया
नगर स्तब्ध औ' ज़ार सो गया।

गये बीत इस तरह आठ दिन
ख़बर न कोई, भारी पल, छिन,
हुई कहीं पर झड़प, लड़ाई
नहीं सूचना कोई आई,
पर मुर्ग़ा फिर से चिल्लाये
ज़ार और सेना भिजवाये,
भेजा अब छोटे बेटे को
ताकि मदद दे वह जेठे को।
मुर्ग़ा शान्त हो गया फिर से
मगर न आई ख़बर उधर से।
आठ दिवस यों बीते फिर से
बुरा हाल लोगों का डर से,
मुर्ग़ा फिर से शोर मचाये
ज़ार स्वयं ले सेना जाये,

पूरब में थी उसकी मंज़िल
क्या बीतेगी, डरता था दिल।

चले रात को दिन को लशकर
सैनिक चूर हुई सब थककर,
कहीं न कोई लड़ा मरा था
नहीं किसी का ख़ून गिरा था,
दिया न कहीं पड़ाव दिखाई
क़ब्र एक भी नज़र न आई,
सोचे ज़ार और घबराये
नहीं समझ में कुछ भी आये,
यह था सचमुच अजब तमाशा
कभी न की थी जिसकी आशा।
दिवस आठवां डबे दिनकर
सेना तब पहुंची पर्वत पर,
घाटी में चंदवा रेशम का
दिखा ज़ार को, यह क़िस्सा क्या?
सभी ओर अद्भुत सुन्दरता
गहरा सन्नाटा, नीरवता,
सेना सारी कटी पड़ी थी
यह क्या घटना यहां घटी थी?
जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाये
ज़ार निकट चंदवे के जाये,
और वहां पर उसे अचानक
दिया दिखाई दृश्य भयानक,
दोनों बेटे मरे पड़े थे
तन में बरछे तेज़ गड़े थे,
भाई ने भाई को मारा
एक-दूसरे का हत्यारा।
उनके घोड़े वहीं पास में

घूमें रौंदी हुई घास में...
रोये, आंसू ज़ार बहाये –
"बेटो! तुम किस छल में आये,
खेत रहे, तुम वीर-बांकुरे
आया मेरा अन्त समय रे!"
लोग सभी उसके संग रोयें
दामन अपने सभी भिगोयें,
आह भरे पर्वत, घाटी भी
रक्त सनी उसकी माटी भी,
परदा चंदवे का अति झीना
उठा अचानक और हसीना
शमाखान की वह शहज़ादी
निकली, अरुण उषा मुस्का दी,
जैसे रात्रि-विहग दिनकर को
देख, मौन होता क्षण भर को,
वैसे ही चुप ज़ार हो गया
रूप-छटा में मुग्ध खो गया।
वह बेटों की मृत्यु-व्यथा की
भूल गया यह करुण-कथा भी।
शीश झुका रानी मुस्काकर
बहुत पास ज़ार के आकर,
थाम ज़ार का हाथ, हाथ में
चदवें में ले गयी साथ में,
आदर से उसको बिठलाया
खूब खिलाया, खूब पिलाया,
ज़रीदार बिस्तर लगवाया
करने को आराम लिटाया।
इसी तरह से यों हफ़्ते भर
वह मानो जादू में बंधकर,
मस्त रहा, वह मौज मनाता
और खुशी में वक़्त बिताता।

वक़्त लौटने का तब आया
औ' चलने का हुक़्म सुनाया,
संग लिये शहज़ादी सुन्दर
ज़ार चला वापिस अपने घर।
उसके आगे, पर अफ़वाहें
झूठी सच्ची उड़ती जायें,
बड़ी भीड़ ने नगर-द्वार पर
स्वागत किया, दिखाया आदर,
ज़ार, हसीना थे जिस रथ में
लोग पिसे जायें उस पथ में,
ज़ार करे सब का अभिवादन
बहुत उल्लसित था उसका मन,
नज़र सफ़ेद पगड़ी तब आई
और भीड़ में दिया दिखाई
उसे नजूमी परिचित सहसा
जो लगता था श्वेत हंस सा,
"मैं अभिवादन करूं तुम्हारा
तुमने ही तो मुझे उबारा,
आओ निकट हाल बतलाओ
बोलो, क्या तुम मुझसे चाहो?"
"याद तुम्हें जो वचन दिया था?
वादा मुझसे कभी किया था?
'जो चाहोगे, वह ही दूंगा
पूरा अपना क़ौल करूंगा।'
दो शहज़ादी यह ज़ारीना
लाये हो जो साथ हसीना।"
यह सुन ज़ार बहुत चकराया
वह तो बस सकते में आया,
"क्या कहते हो? बुद्धि बिसारी
नहीं ठिकाने अक़्ल तुम्हारी,
सिर सवार शैतान तुम्हारे

बात कर रहे बिना विचारे,
वचन दिया, यह मैंने माना
किन्तु न तुमने इतना जाना,
तुम किसके यों मुंह लगते हो?
किससे यों बातें करते हो?
हूं मैं ज़ार, न इसे भुलाओ
मत सीमा से बाहर जाओ।
लो धन-दौलत, ऊंची पदवी
चाहे शाही, घोड़ा अरबी,
राज तुम्हें आधा दूं, चाहो
शहज़ादी की बात भुलाओ।"
"मुझे चाहिये सिर्फ़ हसीना
यह शहज़ादी, यह ज़ारीना।"
ज़ार बहुत ग़ुस्से में आया
थूका उसने औ' चिल्लाया –
"यही ज़िद्द, भाड़ में जाओ
और न कुछ भी मुझसे पाओ,
भागो, अपनी जान बचाओ
इस बुड्ढे को दूर हटाओ!"
बहस करे, बूढ़े ने चाहा
ज़ार और भी तब झल्लाया,
लोहे का भुज-दण्ड उठाकर
दे मारा बुड्ढे के सिर पर,
बुड्ढा तो बस वहीं गिर गया
प्राण पखेरू दूर उड़ गया।
भीड़ सहम, कांपी थर्रायी
हंसी हसीना को, पर आयी,
हा – हा – हा – हा – ही – ही – ही – ही
उसे न कुछ भी शर्म-हया थी,
परेशान था ज़ार बहुत ही
किसी तरह मुस्काया फिर भी,

बढ़ा नगर को अब रथ सत्वर
हुई इसी क्षण हल्की सरसर,
देखें सब ही नज़र जमाये
मुर्ग़ा नीचे उड़ता आये,
आया, और ज़ार चंदिया पर
बैठ गया वह पांव जमाकर,
ठोंग मारकर पंख हिलाये
कहां गया वह, कौन बताये?
रथ से नीचे ज़ार गिर गया
आह भरी बस, और मर गया।
लुप्त हुई शहज़ादी ऐसे
था उसका अस्तित्व न जैसे।
क़िस्सा झूठा, गढ़ा गया है
फिर भी इसमें सत्य बड़ा है!

१८३४

नाटिकाएं

कंजूस सूरमा

पहला दृश्य

(बुर्ज में)

(एल्बर्ट और इवान)

एल्बर्ट

चाहे कुछ भी हो जाये, लेकिन मैं तो
प्रतिस्पर्धी से लोहा लेने जाऊंगा,
दिखलाओ तुम शिरस्त्राण मुझको मेरा।

(इवान उसे शिरस्त्राण देता है)

यह तो बिल्कुल टूट गया है
किसी काम का नहीं रहा,
इसे पहनना अब तो सम्भव नहीं रहा,
लेना होगा मुझे नया।
उफ़, था कैसा वार किया
बहुत बुरा हो उसका
काउंट देलोरज का!

इवान

किन्तु आपने कसर न छोड़ी
उसको मज़ा चखा दिया,
घोड़े से ही उसको नीचे दिया गिरा, धूल चटा दी,
दो दिन तक वह मुर्दे जैसा पड़ा रहा,
नहीं ज़रा भी हिला-डुला।

एल्बर्ट

फिर भी वह तो कुछ घाटे में नहीं रहा
कवच वेनिसी
रक्षा उसकी छाती की जो करता है
पूरी तरह सलामत है,
नहीं एक कौड़ी भी उसकी ख़र्च हुई,
नया कवच तो जाकर नहीं ख़रीदेगा।
शिरस्त्राण क्यों उसके सिर से उसी समय
मैंने नहीं उतार लिया?
कर लेता मैं ऐसा ही लेकिन मुझको
शर्म आ गयी,
वहां उपस्थित थीं महिलायें, ड्यूक स्वयं।
बहुत बुरा हो उस काउंट का!
अच्छा होता सिर ही मेरा
टुकड़े-टुकड़े वह कर देता।
शिरस्त्राण ही नहीं, मुझे तो
बढ़िया सी पोशाक एक दरकार बहुत है,
पिछली बार याद है मुझको
सभी सूरमा और सभी सरदार वहां पर
रेशम औ' मख़मल पहने थे,
वहां ड्यूक की दावत में; मैं सिर्फ़ अकेला
पहने हुए कवच बैठा था,

तब यह कहकर
मैंने वहां सफ़ाई दी थी,
मैं केवल संयोग-योग से आ पहुंचा हूं
इस मुक़ाबले के आंगन में। किन्तु कहूंगा क्या अब उनसे?
हाय, ग़रीबी, हाय ग़रीबी!
कैसे वह सम्मान-मान पर
करती है आघात भयानक।
देलोरज ने अपने भारी बर्छे से जब
शिरस्त्राण को मेरे बींधा
और बग़ल से जिस क्षण मेरी
फ़र्राटे से आगे निकला,
मैंने उस क्षण नंगे सिर ही
थी अमीर को एड़ लगायी,
तुफ़ानी गति से तब उसको दौड़ाया था,
बीस क़दम की दूरी तक यों
काउंट को मैंने लुढ़काया
मानो वह छोटा-सा कोई नौकर-चाकर।
तब सारी महिलायें भय से कांप
उठी थीं, उछल पड़ी थीं
और स्वयं क्लोटील्डा भी तो
मुंह ढककर चिल्लायी बरबस।
भाटों और चारणों ने तब मेरे ऐसे प्रबल वार का
जी भरकर गुण-गान किया था।
किन्तु किसी ने शायद उस क्षण
नहीं तनिक भी यह सोचा था,
मेरी अद्भुत शक्ति वीरता की तह में क्या राज़ छिपा था?
राज़ यही था – शिरस्त्राण के बिंध जाने पर
खण्ड-खण्ड हो गिर जाने पर,
ग़ुस्से से हो आग-बबूला मैं झपटा था
मेरी शूर-वीरता में बस,
पैसे ही का मोह छिपा था,

मेरी कंजूसी ने ही तो
मुझको यह बल प्रबल दिया था।
और छूत भी इसकी मुझको कंजूसी की
आसानी से लग सकती है
पास पिता के एकसाथ
घर में रहने पर।
यह बतलाओ, हाल बेचारे घोड़े का
मेरे कैसा है?

इवान

वह तो अब भी लंगड़ाता है।
उसपर नहीं सवारी आप अभी कर सकते।

एल्बर्ट

नहीं रास्ता कोई मुझको अब दिखता है
मैं ख़रीद कुम्मैती लूंगा,
नहीं दाम भी बहुत मांगते!

इवान

यह सच, दाम न बहुत मांगते
किन्तु हमारे पास नहीं हैं बिल्कुल पैसे।

एल्बर्ट

उस नालायक़ सालोमन ने
क्या जवाब में तुम्हें कहा है?

इवान

वह कहता है रहन बिना मैं
और नहीं अब ऋण दे सकता।

एल्बर्ट

रहन चाहिये! भला कहां से
लाऊं मैं वह? शैतान कहीं का!

इवान

मन उसको यह मजबूरी भी बतलायी।

एल्बर्ट

फिर क्या उत्तर में वह बोला?

इवान

हाय-वाय की, रोना रोया,
अपने दुख का पोथा खोला।

एल्बर्ट

नहीं कहा क्यों उससे तुमने
मेरा बाप अमीर बहुत है,
किन्तु यहूदी के समान ही
वह पैसे का पीर बहुत है,
फिर भी देर-सबेर
विरासत में मुझको धन बहुत मिलेगा।

इवान

मैंने यह भी बतलाया था।

एल्बर्ट

क्या उससे उत्तर पाया?

इवान

हाय-वाय की, रोना रोया।

एल्बर्ट

यह तो सचमुच बड़ी मुसीबत!

इवान

वह कहता था—स्वयं यहां पर मैं आऊंगा।

एल्बर्ट

धन्यवाद देता हूं प्रभु को!
हल्की जेब किये बिन नहीं यहां से जाये।

(दरवाज़े पर दस्तक)

कौन वहां है?

(यहूदी भीतर आता है)

यहूदी

मैं विनम्र सेवक हुज़ूर का !

एल्बर्ट

मेरे प्यारे मित्र, अरे तुम !
नीच यहूदी, तुम सम्मानित सालोमन हो,
आओ, आओ ! यह क्या मैंने सुना,
नहीं तैयार मुझे तुम ऋण देने को ?

यहूदी

मेरे मेहरबान सूरमा, मेरे मालिक,
सच कहता हूं
और क़सम भी मैं खाता हूं,
बड़ी ख़ुशी से ऐसा करता ...
यदि होती सामर्थ्य, अगर यह सम्भव होता।
किन्तु कहां से पैसा लाऊं ?
मैं बिल्कुल लुट गया इस तरह
सभी सूरमा-सरदारों की
मदद सदा मन से करता हूं,
मगर न कोई पैसे मेरे लौटाता है,
यही आपसे आज पूछना चाह रहा हूं
नहीं आप लौटा सकते हैं
मेरे ऋण का एक भाग ही ?

एल्बर्ट

चोर, लुटेरे !
जेब भरी यदि मेरी होती,
भला लगाता मुंह मैं तेरे जैसों को तब ? बस, काफ़ी है,

नहीं बनो तुम अड़ियल टट्टू,
मेरे प्यारे सालोमन, अब
सौ मुहरें जल्दी से गिन दो,
नहीं – तलाशी ली जायेगी!

यहूदी

सोने की सौ मुहरें गिन दूं!
कब थीं मेरे पास एक सौ मुहरें, मालिक?

एल्बर्ट

बात सुनो तो, नहीं करोगे
मदद दोस्तों की तुम दुख में,
शर्म न आती?

यहूदी

सच कहता हूं और क़सम भी मैं खाता हूं...

एल्बर्ट

बस, काफ़ी है!
रेहन चाहते हो तुम मुझसे?
यह कैसी बकवास भला क्या!
क्या मैं तुम्हें रेहन दे सकता?
अपने कुल का चिह्न, यही बस?
मेरे पास अगर कुछ होता मूल्यवान तो
बेच कभी का देता उसको!
या फिर वचन सूरमा का ही बहुत नहीं है
तुम जैसे कुत्ते को जो विश्वास दिला दे।

यहूदी

वचन आपका ?
जब तक जीवित आप, बहुत ही मूल्यवान है।
सब से बड़ी तिजोरी भी तो खुल सकती है
उसके जादू सम प्रभाव से,
किन्तु आप यदि मुझ ग़रीब को
दे देते हैं वचन और फिर
इस दुनिया से चल देते हैं
(हे भगवान न ऐसा करना !)
तो यह वचन आपका
कुछ ऐसा ही होगा,
जैसे मंजूषा की चाबी,
जो समुद्र में फेंकी जाये !

एल्बर्ट

तो क्या मेरा बाप बहुत दिन, मुझसे ज़्यादा वक़्त जियेगा ?

यहूदी

कौन भला यह कह सकता है ?
मरना-जीना नहीं हमारे हाथों में है,
जो जवान है आज वही कल मर सकता है
और चार बूढ़े ही उसको
झुके हुए कन्धों पर अपने
लाद क़ब्र में पहुंचाते हैं।
पिता आपके हृष्ट-पुष्ट हैं
ईश्वर ने यदि चाहा,
तो दस, बीस, तीस सालों तक
ज़िन्दा वे तो रह सकते हैं।

एल्बर्ट

अरे यहूदी, झूठ बको मत!
तीस साल के बाद
स्वयं मैं भी पचास का हो जाऊंगा,
उन पैसों का क्या अचार मैं तब डालूंगा?

यहूदी

पैसे? पैसे तो हर वक़्त
उम्र हो चाहे कोई, काम हमारे वे आते हैं,
पर जवान उनको उत्साही सेवक माने
तरस न खाये जहां-तहां उनको दौड़ाये
औ' बूढ़े के लिये भरोसे के वे साथी,
उन्हें आंख की पुतली समझे
बड़े जतन से उन्हें सहेजे!

एल्बर्ट

लेकिन मेरे बाप, पिता के
लिये न वे तो सेवक, साथी,
उसके लिये बने वे स्वामी
और स्वयं वह उनका सेवक।
सो भी कैसा सेवक है वह?
किसी दास-सा, वह गुलाम-सा।
वह ज़ंजीर-बंधे कुत्ते-सा
ठण्डे-ठिठुरे कुत्ताघर में ही रहता है,
पानी पीता, रूखे-सूखे टुकड़े खाता,
सारी-सारी रात जागता,
इधर-उधर भागा करता है
और भौंकता भी रहता है।
लेकिन सोना बड़े मज़े से

सुख की नींद तिजोरी में सोया करता है।
ख़ैर, कभी वह दिन आयेगा,
मेरी सेवा में जब सोना जुट जायेगा,
सुख की नींद भूल जायेगा।

यहूदी

हां, बैरन के मर जाने पर
आंसू से ज़्यादा सोने की बारिश होगी।
जल्दी से भगवान आपको
दौलत यह सारी दिलवाये।

एल्बर्ट

अमीन!

यहूदी

ऐसा करना भी सम्भव है...

एल्बर्ट

क्या सम्भव है?

यहूदी

ऐसा एक उपाय, सोचता हूं सम्भव है।

एल्बर्ट

किस उपाय की बात कर रहे?

एल्बर्ट

तो यह बूढ़ा दोस्त तुम्हारा ज़हर बेचता,
ऐसा ही धंधा करता है।

यहूदी

हां, हां, ऐसा भी करता है।

एल्बर्ट

क्या इसका यह मतलब समझूं,
सोने की मुहरों के बदले
मुझे ज़हर की शीशी का
ऋण देना चाहो? ऐसा ही है?

यहूदी

क्यों मज़ाक़ करते हैं, मालिक?
ऐसा नहीं हुज़ूर सोचिये,
मैंने चाहा... मैंने सोचा, शायद आप...
अब निजात पाये बैरन की रूह,
वक़्त वह शायद आया।

एल्बर्ट

क्या मतलब है? अपने हाथों
ज़हर पिता को अपने दे दूं?
बेटे से ऐसा कहने की
जुर्रत करते... ऐ इवान

पकड़ लो इसको! मुझसे
ऐसा कहने की जुर्रत करते हो!
नीच यहूदी, काले नाग, कमीने कुत्ते!
अभी तुम्हें अपने फाटक पर सूली दूंगा।

यहूदी

मैं कुसूरवार हूं, मेरे मालिक!
हुज़ूर से माफ़ी चाहूं:
यों ही ज़रा मज़ाक़ किया था!

एल्बर्ट

ऐ इवान, ज़रा तुम रस्सी लेकर आओ!

यहूदी

मैंने... मैंने ज़रा मज़ाक़ किया था।
मैं हुज़ूर, पैसे लाया हूं।

एल्बर्ट

भाग, दफ़ा हो नीच, कमीने!

(यहूदी बाहर चला जाता है)

मेरे इस कंजूस बाप ने कैसी हालत कर दी मेरी!
ऐसी हिम्मत करे, कहे यह
मुझसे ऐसा नीच यहूदी!
एक गिलास सुरा का लाओ,
सिर से पैरों तक देखो, मैं कांप रहा हूं।
लेकिन पैसों की आवश्यकता
वह तो फिर भी बनी हुई है,

जाओ, ज़रा भागकर जाओ,
उसी कमीने के पीछे जा
सोने की मुहरें ले आओ!
और सुनो तुम,
क़लम-दवात, मुझे कागज़ दो,
उसी नीच के नाम ज़रा मैं हुंडी लिख दूं,
यहां, सामने मेरे, मत तुम
उसको लाना, नीच यहूदी को भूले से!
लेकिन नहीं, ज़रा तुम ठहरो,
उसकी सोने की मुहरों से
विष की ऐसे बू आयेगी
जैसे उसके पुरखों से
बू चांदी की आया करती थी...
तुम शराब ले आओ, मैंने तुम्हें कहा था।

इवान

किन्तु हमारे यहां नहीं है एक बूंद भी।

एल्बर्ट

कहां गयी वह, जो उपहार रूप में आई यहां स्पेन से,
जिसको भेजा था रेमोन ने?

इवान

अन्तिम बोतल दे आया था
कल लुहार को
मैं, रोगी को।

एल्बर्ट

हां, हां, मुझको याद आ गया
मैंने ही यह कहा तुम्हें था...
अच्छा, तो पानी ही दे दो
ओह, भाड़ में जाये मेरा ऐसा जीवन!
नहीं और अब सहन करूंगा,
न्याय, न्याय की मांग करूंगा,
जाऊंगा मैं पास ड्यूक के और कहूंगा –
वे मजबूर पिता को कर दें
मुझे पुत्र की तरह ढंग से अब वे रखें,
मैं चूहा तो नहीं कि टुकड़ों की ही ख़ातिर
रहूं भागता जहां-तहां मैं कोठरियों में।

दूसरा दृश्य

(तहख़ाना)

बैरन

जैसे कोई इश्क-मुहब्बत का दीवाना
नौजवान यह इन्तज़ार करता रहता है,
किसी शोख़ ऐयाश हसीना के आने की
या उसके छल-छन्दों में फंस जानेवाली किसी मूर्ख की
मुलाक़ात आख़िर कब होगी,
वैसे ही बेचैनी से सारा दिन मैं भी
राह देखता रहा
कि कब जाऊंगा आख़िर
अपने गुप्त, छिपे तलघर में,
वफ़ादार सन्दूक जहां पर बड़े-बड़े हैं।
आज बहुत अच्छा, शुभ दिन है,

अभी न पूरी तरह भरा जो
छठे, बड़े सन्दूक़, उसी में
मुट्ठी भर वह सोना
अब मैं डाल सकूंगा,
जमा किया जो मैंने अब तक।
लगता है, यह बहुत नहीं है
लेकिन थोड़ा-थोड़ा करके ही तो भरें ख़ज़ाने।
याद मुझे आता है, मैंने कहीं पढ़ा था,
एक ज़ार ने कहीं सैनिकों को यह अपने
हुक्म दिया था,
एक जगह पर मुट्ठी भर भर
सभी डालते जायें मिट्टी,
इसी तरह से
टीला एक बना था ऊंचा –
ज़ार बहुत ख़ुश हो तब मन में
उस टीले की ऊंचाई से
घाटी को देखा करता था
श्वेत तम्बुओं से जो थी सारी ढकी हुई,
सागर को भी जिसमें द्रुतगति पोत और जलयान तैरते।
इसी तरह से मैं भी मुट्ठी भर भर लाया
तहख़ाने में थोड़ा-थोड़ा सोना जब-तब,
ऊंचा होता चला गया यों मेरा टीला –
इसकी ऊंचाई से मैं भी
दृष्टि वहां दौड़ा सकता हूं,
जो कुछ अब मेरे अधीन है।
मेरे नहीं अधीन भला क्या?
मैं दानव की तरह
इशारों पर संसार नचा सकता हूं।
यदि चाहूं, तो महल खड़े हो जायें सम्मुख
अनुपम बाग़-बगीचों से वे घिर-घिराये,
परियों की भी भीड़ यहां भारी लग जाये

कला-देवियां आयें,
मुझपर कला-पुष्प वे सभी चढ़ायें,
और स्वतन्त्रता-प्रेमी, ज्ञानी,
सब मेधावी, प्रतिभाशाली
मेरे तलुओं को सहलायें,
नेकी के पुतले, रातों की
नींद-नयन में खोनेवाले
बड़े मेहनती
विनित भाव से राह ताकेंगे,
पुरस्कार कब मुझसे पायें,
पा मेरा संकेत डरी-सी, सहमी-सहमी
रक्त-रंजिता बदी-बुराई
सिर पर पांव धरे आयेगी,
मेरा हाथ चूमकर
मेरी आंखों में वह तो ताकेगी
मेरी इच्छा के चिह्नों को
वह बरबस उनमें ढूंढ़ेगी,
मेरा हुक्म बजायेंगे सब,
लेकिन नहीं किसी का मैं तो।
मैं हूं मुक्त सभी इच्छाओं,
सभी कामनाओं से मैं तो, और शान्त हूं;
ज्ञान मुझे अपनी ताक़त का,
हूं सन्तुष्ट चेतना से मैं
इस ताक़त की...

(अपने सोने पर नज़र दौड़ाता है)

लगता है, यह बहुत नहीं है,
पर कितनी मानव-चिन्ताओं
छल-कपटों, आंसू-धाराओं,

विनय और अनुनय, शापों का
ठोस रूप यह भारी सोना!
कहीं फ़्रांस की एक पुरानी
सोने की मुद्रा रखी थी इसी जगह पर...
यह रखी है,
इसे एक विधवा ने मुझको आज दिया है
पर, ऐसा करने के पहले
तीन बालकों के संग अपने
वह मेरी खिड़की के नीचे
रही देर तक मिन्नत करती,
बारिश होती रही, थमी, बरसा फिर पानी,
पर वह ढोंगी, नहीं वहां से हिली ज़रा भी,
अगर चाहता, तो मैं उसको
दूर भगा देता तत्क्षण ही,
किन्तु आत्मा में मेरी यह कोई कहता था धीमे-से,
अपने पति का ऋण लौटाने आयी है वह,
नहीं जेल में अगले दिन वह जाना चाहे।
औ' यह सिक्का?
टीबो ने ला दिया मुझे यह –
उस काहिल को और धूर्त्त को
भला, कहां मिल सकता था यह?
वह अवश्य ही इसे चुराकर लाया होगा,
या फिर उसने बड़ी सड़क पर
वृक्षों के झुरमुट में छिपकर
किसी व्यक्ति को लूटा होगा...
अगर सभी वे आंसू, सारा ख़ून, पसीना,
जो इस सब के लिये बहाये गये
यहां पर जो संचित है,
अगर अचानक धरती तल से
फूट निकल यदि बाहर आयें,
जल-प्रवाह फिर से हो जाये

और डूब जाऊंगा मैं तो
निश्चय ही इस तहख़ाने में। पर काफ़ी है !

(सन्दूक़ खोलना चाहता है)

चाहूं जब सन्दूक़ खोलना
तब हर बार पसीने मुझको आ जाते हैं,
दिल धक-धक करने लगता है।
डर के कारण ? (नहीं, नहीं, डर किसका
मुझको हो सकता है ?)
मेरा खड्ग साथ में मेरे,
है इसका इस्पात बहुत ही बढ़िया, असली,
यह मेरे सोने का रक्षक।
पर दबोचती दिल को मेरे
अनजानी, अज्ञात भावना ...
हमें चिकित्सक यह विश्वास दिलाते बहुधा :
लोग इस तरह के भी होते,
हत्या करके जिन्हें दूसरों की सुख मिलता।
चाबी जब-जब मैं ताले में डाला करता,
ऐसा ही बस, अनुभव करता,
जैसा अनुभव करते होंगे लोग
दूसरों के तन में जो छुरा भोंकते,
ख़ुशी और डर एकसाथ ही !

(सन्दूक़ खोलता है)

मेरा स्वर्गिक सुख है बस, यह !

(सिक्कों को उसमें डालता है)

बहुत दिनों तक दौड़-धूप कर ली दुनिया में
लोगों की चाहों-इच्छाओं को यों पूरा करते-करते।

अब इसमें आराम करो तुम
गहरी और चैन की निंदिया अब सो जाओ,
उसी तरह से जैसे देव-लोक में सोयें देव-देवता।
आज पर्व का रंग जमाना यहां चाहता,
जितने भी सन्दूक़ यहां हैं
खोलूंगा मैं सबके ताले
और जलाकर मोमबत्तियां
मैं सबके सम्मुख रखूंगा,
इनके बीच खड़े होकर ख़ुद
चमचम करते इन ढेरों को
जी भर आज निहारूंगा मैं।

(मोमबत्तियां जलाकर एक के बाद
एक सन्दूक़ को खोल देता है)

मैं राजा-अधिराज यहां का!.. कैसी जादू भरी चमक यह!
बहुत शक्तिशाली है यह तो
और सर्वथा मेरे वश में।
मेरा सुख-सौभाग्य इसी में,
मेरा यश भी, कीर्ति और सम्मान इसी में
मैं राजा-अधिराज यहां पर...
लेकिन मेरे बाद यहां का
कौन बनेगा सत्ता-स्वामी? मेरा वारिस?
जिसके सिर में केवल भूसा?
खाऊ और लुटाऊ लम्पट,
आवारों का संगी-साथी?
मेरे प्राण-पखेरू के उड़ते ही वह तो
शान्त और इन मौन-मूक
मेहराबों के नीचे आयेगा,
संग लालची और खुशामद करनेवाले पिट्ठू लेकर,
मेरे शव से चाबी लेकर

अट्टहास कर सन्दूक़ों को वह खोलेगा।
मेरे कोश-ख़जाने तब तो
बड़े सुराख़ों-छेदोंवाली
पहुंच रेशमी जेबों में जायेंगे तत्क्षण।
चूर-चूर कर डालेगा वह
इन पवित्र पात्रों को मेरे,
सम्राटों, राजाओं की सुषमा-शोभा को,
धूल, गन्दगी पर न्योछावर वह कर देगा
सारी दौलत,
बेदर्दी से उसे उड़ा डालेगा वह तो,
लेकिन क्या अधिकार उसे ऐसा करने का?
क्या यह सब कुछ
आसमान से आ टपका है
या फिर जैसे सफल दांव चल कहीं जुआरी
दौलत ढेरों-ढेर जीतता,
मैंने क्या यह ऐसे ही पाई है दौलत?
है किसको यह ज्ञात
कि कितनी चीज़ों से इन्कार किया है,
मैंने अपना मन मारा है,
अपनी कितनी इच्छाओं को
मैंने कुचला और दबाया,
कैसे-कैसे बोझल मन में ख़्याल बसाये,
दिन की चिन्ताओं को पाला
जाग-जागकर बहुत उनींदी रातों में है
मैंने इसका मूल्य चुकाया?
या शायद फिर
बेटा मेरा, यही कहेगा,
मेरे दिल पर
मानो काई ही छाई थी,
चाह हृदय में मेरे मानो सांस न लेती,
नहीं कभी धिक्कारा मुझको

मेरे अन्तर, या कि आत्मा ने फिर मेरी?
मेरे अन्तर की ध्वनि वह तो
मानो ख़ूनी पंजोंवाला एक दरिन्दा
हृदय खरोंचे,
घायल कर दे
एक उबानेवाली संगिनी,
वह मेहमान बहुत अनचाहा,
वह ऋणदाता
जली-कटी जो मुझे सुनाये,
वह चुड़ैल है, वह पिशाचिनी
जो जाती है हड़प चांदनी,
करे नाक में दम, क़ब्रों के
मुर्दे होते विवश वहां से निकलें-भागें...
नहीं, नहीं,
दुख-कष्ट सहनकर
तुम धन-दौलत ज़रा कमाओ,
तब देखेंगे,
तुम क़िस्मत के मारे कैसे
दौलत बड़ी लुटाओगे वह,
ख़ून-पसीना जिसे एक कर
बेटा, जिसे कमाओगे तुम?
काश, लालची नज़रों से मैं
छिपा अगर पाता यह अपना तहख़ाना!
काश, क़ब्र से निकल यहां पर मैं आ सकता
रक्षा करनेवाली मानो छाया बनकर
और जिस तरह अब बैठा हूं
बैठ यहां सन्दूक़-तिजोरी पर मैं अपनी
रक्षा करता
अपने प्यारे इसी कोश की!..

तीसरा दृश्य

(महल में)

(एल्बर्ट और ड्यूक)

एल्बर्ट

आप करें विश्वास, बहुत दिन मैंने
कड़ुवे, विषमय घूंट पिये हैं,
सहा बहुत अपमान विषैला।
अगर न आती अति की सीमा
कभी नहीं सुन पाते मेरे
मुंह से शिकवा और शिकायत।

ड्यूक

करता हूं विश्वास, सूरमा, नेक सूरमा,
अगर न आती अति की सीमा
व्यक्ति आप-सा
कभी नहीं ठहराता दोषी पूज्य पिता को।
ऐसे पतित बहुत कम जग में...
आप रहें निश्चिन्त,
आपके पूज्य पिता को
मैं चुपके से
आज अकेले में यह सब कुछ समझा दूंगा।
देख रहा मैं राह उन्हीं की,
बहुत दिनों से नहीं मिले हम।
मेरे दादा के घनिष्ठ वे मित्र कभी थे।
याद मुझे है
तब मैं छोटा बच्चा ही था,

पिता आपके
मुझे बिठा लेते थे
वे अपने घोड़े पर,
रख देते थे मेरे सिर पर
शिरस्त्राण वह अपना भारी, घण्टे जैसा।

(ड्यूक खिड़की से बाहर झांकता है)

कौन, वहां वह इधर आ रहा?
नहीं आपके पिता, वही तो?

एल्बर्ट

जी हुज़ूर, हैं वही आ रहे।

ड्यूक

तो फिर आप उधर कमरे में चले जाइये,
तभी आइये जब आवाज़ आपको मैं दूं।

(एल्बर्ट जाता है और बैरन प्रवेश करता है)

ड्यूक

बहुत ख़ुशी है मुझे आपको
स्वस्थ और सानन्द देखकर।

बैरन

है प्रसन्नता मुझे बहुत ही
मिला मुझे आदेश आपका
और उपस्थित हुआ यहां मैं।

ड्यूक

बहुत समय से नहीं मिले हम,
है कुछ याद आपको मेरी ?

बैरन

मुझे आपकी, मेरे मालिक ?
ऐसे ही है याद, जिस तरह देख रहा हूं
अपने सम्मुख, मैं हुज़ूर को।
आप बड़े ही चुस्त और चंचल बालक थे,
कभी आपके दादा, जो परलोक सिधारे,
मुझसे यह पूछा करते थे,
कहो, फ़िलिप (मुझे फ़िलिप ही वे
कहते थे), क्या ख़्याल तुम्हारा ?
कोई बीस बरस बीतेंगे, इसके
सम्मुख (अभिप्राय आपसे ही था)
क्या हम बुद्धू नहीं लगेंगे ?

ड्यूक

बहुत पुराने इस परिचय को
एक नया जीवन हम देंगे,
आप महल का मार्ग सर्वथा भूल गये हैं।

बैरन

मैं हुज़ूर अब तो बूढ़ा हूं,
करूं भला क्या
आकर यहां युवा लोगों में,
हैं पसन्द आपको तीरों-तलवारों के
खेल-तमाशे औ' मुक़ाबले,

बढ़िया, बढ़िया भोज-दावतें,
मैं इन सब के लायक़ अब तो नहीं रहा हूं।
हां, लेकिन यदि छिड़ी लड़ाई,
हाय-वाय करता तब तो मैं
फिर सवार हो जाऊंगा अपने घोड़े पर
औ' बटोर कर पूरी ताक़त
सिर्फ़ आपकी ख़ातिर ही मैं
कांप रहे अपने हाथों से
खींचूंगा तलवार म्यान से वही पुरानी!

ड्यूक

हमें ज्ञात है लगन आपकी,
जोश और उत्साह आपका,
रहे मित्र मेरे दादा के और पिता भी
बहुत आपका आदर सदा किया करते थे,
मैंने सदा आपको माना निष्ठावान सूरमा सच्चा,
कृपया यहां पधारें, बैठें,
हैं बच्चे तो? यह बतलायें।

बैरन

सिर्फ़ एक बेटा है मेरा।

ड्यूक

वह क्यों नहीं महल में आता?
ऊब आपको अनुभव होती,
किन्तु उसे तो शोभा देता
आयु और बैरन की ऊंची पदवी
के अनुसार यहां पर
उसका आना बहुत उचित है।

बैरन

पर हुज़ूर, उसको तो बिल्कुल नहीं सुहाता
शोर-शराबा, भोज-दावतें उसे न रुचतीं,
कुछ सनकी है, कटा-कटा-सा,
अलग-थलग-सा वह रहता है,
सिर्फ़ दुर्ग के गिर्द जंगलों में वह घूमे
युवा हिरन-सा।

ड्यूक

उसका ऐसे सनकी होना
हम लोगों से दूर भागना बुरी बात है,
बहुत जल्द ही
हम उसको अभ्यस्त बनायें
नाच-रंग का,
खेल-तमाशों औ' मुकाबलों की दुनिया का।
मेरे पास भेज दें उसको, उसके पद-अनुरूप
व्यवस्था आप करें सारी चीज़ों की ...
माथे पर बल पड़े आपके,
शायद आप थके-हारे हैं?
शायद सफ़र बहुत लम्बा था?

बैरन

नहीं हुज़ूर थका-हारा मैं,
लेकिन सुनकर बात आपकी
मुझे परेशानी ने घेरा।
नहीं चाहता था मैं उसकी
चर्चा करूं आपके सम्मुख,
किन्तु आप तो विवश कर रहे वह कहने को,

जिसे गुप्त ही रखना मैं तो चाह रहा था।
यह मेरा दुर्भाग्य,
नहीं वह योग्य आपकी अनुकम्पा के।
अपना यौवन बिता रहा वह
सभी अधर्मी कृत्यों और कुकर्मों में ही ...

ड्यूक

बैरन, ऐसा इसीलिये है,
क्योंकि सभी लोगों से रहता दूर, कटा वह,
एकाकीपन, आलस ये तो
नष्ट युवा लोगों को करते।
उसे भेजिये पास हमारे,
उसे भूल जायेंगी वे सब बुरी आदतें,
एकाकीपन के ही कारण
जिनका जन्म हुआ है उसमें।

बैरन

क्षमा चाहता मैं हुज़ूर से,
किन्तु नहीं ऐसा कर सकता ...

ड्यूक

क्या कारण है?

बैरन

मुझ बूढ़े को करें नहीं मजबूर कि
खोलूं मैं मुंह अपना ...

ड्यूक

मैं करता हूं मांग, बतायें आप मुझे यह,
किस कारण इन्कार कर रहे।

बैरन

बहुत क्रुद्ध हूं मैं बेटे से।

ड्यूक

सो किस कारण?

बैरन

उसने एक कुकर्म किया है।

ड्यूक

क्या कुकर्म है, यह बतलायें।

बैरन

नहीं करें मजबूर, यही बस, अच्छा होगा...

ड्यूक

अजब बात है,
शायद शर्म आपको आती उसके कारण?

बैरन

हां, हां, शर्म मुझे आती है...

ड्यूक

ऐसा उसने किया भला क्या?

बैरन

मेरी हत्या कर डाले, यह यत्न किया था।

ड्यूक

यत्न किया हत्या का उसने?
दण्ड कड़ा मैं दिलवाऊंगा
इस काली करनी का उसको।

बैरन

दूंगा नहीं सबूत,
जानता हूं मैं बेशक,
वह तो पूरे मन से मेरी मौत चाहता,
है मुझको मालूम कि कोशिश की है उसने...

ड्यूक

कैसी कोशिश?

बैरन

मुझे लूट ले, ऐसी कोशिश।

(एल्बर्ट तेज़ी से कमरे में आता है)

एल्बर्ट

बिल्कुल झूठ बात यह बैरन!

ड्यूक

(एल्बर्ट से)

कैसे जुर्रत की यह तुमने!

बैरन

अरे, यहां तुम। ऐसे तुम अपमान कर रहे!
ऐसे शब्द पिता से अपने तुम कहते हो!
मैं झूठा हूं! ऐसा कहो ड्यूक के सम्मुख,
उनके सम्मुख, जो हैं स्वामी हम दोनों के!..
मुझसे, मेरे बारे में ये शब्द
कह रहे... याकि तुम्हें भ्रम,
शक्ति भुजाओं में अब मेरी शेष नहीं है
एक सूरमा जैसी ताक़त।

एल्बर्ट

आप बहुत, बिल्कुल झूठे हैं।

बैरन

अब भी नहीं हुआ है इसपर
वज्रपात प्रभु न्याय-धर्म का!
तो तलवार करेगी निर्णय हम दोनों का!
लो, मैं फेंक रहा दस्ताना।

(दस्ताना फेंकता है जिसे बेटा झपट लेता है)

एल्बर्ट

आभारी हूं। यह पहला
उपहार मिला है मुझे पिता से।

ड्यूक

क्या देखा मेरी आंखों ने?
क्या यह हुआ सामने मेरे?
वृद्ध बाप से बेटा लड़ने को तत्पर है?
कैसे बुरे ज़माने में मैं ड्यूक बना हूं!
बस, अब आप न मुंह से कोई शब्द निकालें,
है दिमाग़ में ख़लल आपके।
और शेर के बच्चे, तुम भी
ख़बरदार, जो अब कुछ बोले।

(एल्बर्ट से)

ख़त्म कीजिये इस क़िस्से को,
मुझे दीजिये यह दस्ताना।

(ड्यूक दस्ताना छीन लेता है)

एल्बर्ट

(एक ओर हटकर)

बड़ा खेद है !

ड्यूक

दस्ताने में इसने अपने
खूनी पंजे गड़ा दिये हैं ! हिंसक, ज़ालिम !
चले जाइये और न तब तक यहां आइये,
जब तक नहीं बुलाऊं मैं खुद !

(एल्बर्ट बाहर जाता है)

अरे, अभागे बूढ़े,
आती है कुछ शर्म आपको ?
बात हुई कितनी बेहूदा !

बैरन

क्षमा कीजिये, मुझको मालिक ...
पांव लड़खड़ाते हैं मेरे ... घुटने साथ नहीं देते हैं ...
दम घुटता है ... मेरा दम घुटता जाता है ...
कहां चाबियां ? कहां चाबियां मेरी,
मेरे सन्दूक़ों की ! ..

ड्यूक

अरे, चल बसा यह दुनिया से !
ईश्वर मेरे ! कैसा बुरा ज़माना आया !
कैसे काले और बुरे हैं दिल लोगों के !

१८३०

मोज़ार्ट और सालेरी

पहला दृश्य

(कमरा)

सालेरी

लोग सभी ऐसा कहते हैं – न्याय
नहीं है इस धरती पर,
किन्तु नहीं है न्याय वहां भी – उस दुनिया में।
मेरे लिये स्पष्ट बात यह
वैसे ही, जैसे स्वर सरगम।
कला-पुजारी बनकर मैंने जन्म लिया था;
याद मुझे है, मैं बच्चा था
और पुराने गिरजाघर में जब बजता था
आर्गन-बाजा ऊंचे-ऊंचे
सुध-बुध खोकर मैं सुनता था,
डूब-डूब उसमें जाता था
बरबस ही बहने लगते थे
मेरी आंखों से तब आंसू सुखद हर्ष के।
सभी तरह के खेल-तमाशे,
मनबहलाव सभी बेमानी
बचपन में ही सब ठुकराये,
ज्ञान सभी, सारी विद्यायें,
नहीं जिन्हें संगीत-कला से कोई मतलब
मेरे लिये परायी थीं वे और घृणित थीं सभी विधायें।
मैंने दृढ़ता और दम्भ से
उन सब से अपना मुंह मोड़ा,

बस केवल संगीत-कला में
डूब गया मैं,
केवल उससे नाता जोड़ा।
मुश्किल था पहला डग भरना
प्रथम मार्ग भी सूना-सूना,
किन्तु शुरू की सभी मुश्किलों
की दी मैंने मोड़ कलाई।
मैंने बस, संगीत-शिल्प को
मुख्य कला-आधार बनाया
और रह गया शिल्पी बनकर।
मुक्त, किन्तु बेशक नीरस ही
दौड़ें अंगुलियां बाजे पर
हो अचूक स्वर-ज्ञान, यही बस, ध्येय बनाया
इसी तरह से साध लिया अपने कानों को,
मैंने प्राणहीन ध्वनियों को
मैंने सब संगीत-स्वरों को
मानो शव की भांति
खूब चीरा-फाड़ा था,
बीजगणित की भांति
कभी परखी सुस्वरता।
ऐसे पूरी तैयारी कर
नियम-शास्त्र पारंगत होकर
सृजन, कल्पना के अपने डैने फैलाये
तभी लगा स्वर-रचना करने।
किन्तु बहुत चुपके-चुपके से, छिपे-छिपे ही
गुप्त रूप से यह करता था
रोशन होगा नाम
ख्याति मैं पा जाऊंगा,
सोच न ऐसा मैं सकता था।
बहुत बार यों भी होता था –
खाना-पीना और नींद को भूल अकेला

मौन-मूक बैठा रहता था मैं एकाकी,
दो या तीन दिवस तक अपनी
मधुर प्रेरणा के उल्लास, अश्रु में डूबा,
इसके बाद जला देता था स्वर-रचना को
उदासीनता से जलते देखा करता था
अपने भाव, हृदय से उमड़ी उन ध्वनियों को
होते लुप्त लपट में हल्के धूम्र-धुएं में।
इतना ही क्यों? प्रकट हुआ वह
जब ग्ल्यूक हमारे ऊंचे कला-क्षितिज पर
और किये उद्घाटित नये रहस्य कला के
उसने, उस महान ने सहसा।
(वे रहस्य थे बहुत गहन, सुन्दर, आकर्षक),
नहीं तजा था क्या मैंने वह
तब तक था मालूम मुझे जो,
जिससे मुझको प्यार बहुत था
और आस्था जिसके प्रति थी गहरी मन में?
नहीं भला अनुकरण किया था बड़ी खुशी से
उसका ऐसे, जैसे कोई भटका राही
चुपके-चुपके चल देता है उसके पीछे,
जो है उसको उसकी सीधी राह दिखाता?
बड़े जतन से, बड़ी लगन से औ' दृढ़ता से
सीमाहीन, अपार कला के बृहद क्षेत्र में
ऊंचाई पर पहुंचा आखिर
और खिल उठी मधुर-मधुर मुस्कान ख्याति की;
स्पन्दित करने लगीं दिलों को
मेरी सर्जित स्वर रचनायें।
बहुत सुखी था – आनन्दित होता था अपने
शान्त सृजन से बड़ी सफलता और ख्याति से।
बहुत खुशी होती थी मुझको
अद्भुत कला-जगत के साथी
जब करते थे सृजन नये कुछ

और सफलता थी जब उनके पांव चूमती।
नहीं। ईर्ष्या नहीं कभी मैंने जानी थी
नहीं कभी भी! ईर्ष्या से अनजान रहा मैं
जब बर्बर पेरिसवालों पर
मानो जादू बन छाया था
पीचीनी का वह रचना-स्वर,
तब भी नहीं हुई थी ईर्ष्या
इफ़ीगेनी की रचना के प्रारम्भिक स्वर
मैंने पहली बार सुने जब।
कौन भला यह कह सकता है
मैं गर्वीला सालेरी भी
कभी तिरस्कृत जलन-व्यथा से
व्यथित हुआ था,
ईर्ष्या का असहाय सांप रेंगा था मन में,
जिसे लोग पैरों के नीचे
रौंद, कुचलकर धूल मिलाते?
नहीं, नहीं, कोई कह सकता!..
लेकिन मैं ख़ुद आज कह रहा,
स्वयं कह रहा – मैं ईर्ष्या से जला जा रहा,
मुझको बेहद जलन हो रही,
बड़ी यातना सहता हूं मैं। – मेरे इश्वर!
कहां भला है न्याय तुम्हारा,
जब तुमने पावन प्रतिभा का
तुमने अजर-अमर मेधा का
नहीं दिया वरदान मुझे, जो
अपनी सुध-बुध भूल कला की पूजा करता,
जिसने उसपर अपना सारा प्यार लुटाया,
कला-साधना में ही सारी शक्ति लगायी,
जिसने तुमसे बार-बार इसका वर मांगा,
मुझे पुरस्कृत नहीं किया
पर, तुमने यह वरदान दे दिया

उस पागल को,
उस काहिल को, आवारा को?..
ओ मोज़ार्ट, मोज़ार्ट!

(मोज़ार्ट प्रवेश करता है)

मोज़ार्ट

अरे! तुमने देख लिया था मुझको!
मैंने चाहा था मैं तुमको
मज़ेदार कुछ चीज़ दिखाऊं।

सालेरी

तुम हो यहां! बहुत देर से?

मोज़ार्ट

मैं तो अभी-अभी आया हूं।
रचना नई दिखाऊं तुमको, सोच यही बस
क़दम तुम्हारी ओर बढ़ाता आता था मैं,
पर मदिरालय के सम्मुख जिस क्षण पहुंचा मैं
सहसा मैंने सुनी वायलिन ...
सच कहता हूं दोस्त, सालेरी!
इससे बढ़कर हास्यास्पद कुछ भी तो मैंने
नहीं सुना अब तक जीवन में ...
मदिरालय में अंधा वायलिन-वादक कोई
बजा रहा था मेरी रचना
voi che sapete*

---

* ओह आप, किसे ज्ञात (इतालवी)। —सं०

बस, कमाल है!
नहीं रख सका ख़ुद को वश में,
ले आया हूं संग उसे मैं
ताकि कराऊं तुम्हें तनिक
आस्वादन उसकी इसी कला का।
भीतर आओ!

(वायलिन लिये हुए अंधा बूढ़ा भीतर आता है)

तुम मोज़ार्ट की कोई रचना हमें सुनाओ!

(बूढ़ा 'डोन जुआन' का एक प्रेम-गीत बजाता है। मोज़ार्ट ठठाकर हंसता है)

सालेरी

और इस तरह हंसते हो तुम?

मोज़ार्ट

अरे, सालेरी! नहीं तुम्हें क्या हंसी आ रही?

सालेरी

नहीं आ रही।
नहीं हंसी तब आती मुझको,
जब रफ़ेल की मादोना का कोई
रंगसाज़ है चित्र बनाता,
नहीं हंसी तब आती मुझको
कोई तुकबन्दी करनेवाला जब
दांते की शैली में रचना करने लगता।
जाओ, बूढ़े।

मोज़ार्ट

रुको ज़रा तुम — ये लो पैसे,
जाओ, जाकर एक जाम
मेरी सेहत का अब तुम पी लो।

(अंधा बूढ़ा बाहर चला जाता है)

तुम सालेरी
नहीं रंग में, आज मूड में,
किसी दूसरे वक़्त यहां पर
मैं आऊंगा।

सालेरी

क्या लाये थे मुझे दिखाने ?

मोज़ार्ट

ख़ास नहीं कुछ। पिछली
रात अनिद्रा ने फिर मुझे सताया
और भाव दो-तीन आ गये
मेरे मन में।
मैंने आज उन्हें रच डाला,
चाहा, उनके बारे में मैं राय तुम्हारी
तुम से सुन लूं,
किन्तु इस समय देख रहा हूं
मूड तुम्हारा बहुत बुरा है।

सालेरी

ओह, मोज़ार्ट, मोज़ार्ट !
कभी तुम्हारे लिये बुरा हो मूड,

भला यह हो सकता है?
बैठो मेरे दोस्त,
सुनाओ, मैं सुनता हूं।

मोज़ार्ट

(पियानो पर जा बैठता है)

करो कल्पना एक व्यक्ति की… लेकिन किसकी?
बेशक मेरी – पर अब की तुलना में
जब मैं कुछ जवान था;
प्रेम-रंग में रंगा हुआ
पर, थोड़ा-थोड़ा –
किसी सुन्दरी, किसी मित्र की संगत में हूं,
कह लो, मैं हूं साथ तुम्हारे
मैं प्रफुल्ल मन… तभी अचानक
होता है: आभास क़ब्र का
छा जाता है घुप्प अंधेरा
या ऐसा कुछ और समझ लो…
और सुनो अब।

(रचना बजाता है)

सालेरी

लिये आ रहे थे यह रचना
और निकट मदिरालय के रुक
सुनने लगे वायलिन तुम बूढ़े, अंधे की!
हे मेरे भगवान!
तुम तो अपना मूल्य
स्वयं ही नहीं समझते।

मोज़ार्ट

अच्छी लगी न रचना मेरी?

सालेरी

ओह, कितनी गहराई इसमें!
ओतप्रोत कितनी साहस से
कितनी सुन्दर है यह रचना!
मोज़ार्ट, तुम भगवान, जानते नहीं स्वयं यह,
लेकिन यह है ज्ञात मुझे तो,
सच, मुझको तो।

मोज़ार्ट

भई वाह! सच? हो सकता है...
लेकिन यह भगवान तुम्हारा
अब तो विकल भूख का मारा।

सालेरी

बात अगर तुम मेरी मानो—
'स्वर्ण सिंह' मदिरालय में हम
आज करेंगे दोनों भोजन।

मोज़ार्ट

बड़ी ख़ुशी से।
लेकिन तब मैं घर हो आऊं,
बीवी को इतना बतलाऊं
भोजन नहीं करूंगा घर पर,
राह नहीं वह मेरी देखे।

(चला जाता है)

सालेरी

इन्तज़ार मैं यहां करूंगा, भूल न जाना!
नहीं! नहीं, वह बदल सकूं मैं
जो कुछ मेरे भाग्य बदा है:
लिखा गया मेरी क़िस्मत में
बाधा इसके लिये बनूं मैं, इसको रोकूं –
वरना नाश हमारा सब का,
हम जो हैं संगीत-पुजारी,
इसके सेवक निश्चित समझो,
प्रश्न नहीं है केवल मेरा
मैं जो थोड़ा ख्याति प्राप्त हूं...
और अगर जीता ही जायेगा यह मोज़ार्ट,
अगर कला के नये शिखर को वह छू लेगा,
लाभ भला क्या इससे होगा?
क्या वह ऊंचा कर देगा
संगीत-कला को? नहीं, नहीं।
जैसे ही वह इस दुनिया से ग़ायब होगा,
वैसे ही संगीत-कला का
स्तर फिर नीचे आ जायेगा:
वारिस अपना नहीं यहां कोई छोड़ेगा।
लाभ भला क्या उससे हमको?
स्वर्गदूत चेरब-सा वह तो
स्वर्गिक गीत धरा पर
कुछ सपने ले आया,
ताकि हमारे मन में
हम, जो मानव नश्वर इस धरती के,
जागृत कर दे
पंखहीन इच्छायें, चाहें
और स्वर्ग को ख़ुद उड़ जाये।
तो अच्छा है उड़ जाओ तुम!
जितनी जल्दी, उतना बेहतर।

यह है विष,
जो मेरी ईज़ोरा का है
उपहार आखिरी।
वर्ष अठारह मैंने इसे सम्हाला
संग सहेजे रक्खा –
तब से अब तक
कितनी बार लगा है मुझको
जीवन ऐसा घाव,
जिसे सहना है मुश्किल,
बहुधा मैंने अपने उस निश्चित
दुश्मन के साथ बैठकर
एक मेज़ पर खाना खाया,
किन्तु प्रलोभन, उसकी
धीमी खुसुर-फुसुर पर
मैंने कभी न कान दिया था,
मैं कायर हूं, बात न ऐसी,
बेशक मन पर लगी ठेस को
मैं बेहद अनुभव करता हूं
बेशक मुझको जीवन के प्रति मोह न ज़्यादा,
फिर भी ऐसे क्षण को मैं तो गया टालता।
कैसे मर जाने की इच्छा व्यथित
मुझे करती रहती थी,
मर जाऊं मैं? तब यह भाव हृदय में आता –
शायद जीवन ले आयेगा अनजाने उपहार अचानक,
शायद मुझपर छा जायेगा
उन्मादी, उल्लास अनूठा,
निशा प्रेरणा और सृजन की आ जायेगी;
यह भी सम्भव हेडन कोई
नया जन्म लेगा धरती पर
और करेगा सृजन अनूठा,
सुख-विभोर हो जाऊंगा तब ...

घृणित अतिथि के संग कभी जब
मैं दावत का लुत्फ़ उठाता,
शायद तब यह भाव हृदय में मेरे आता,
बहुत भयानक किसी शत्रु से भेंट अभी होनेवाली है,
शायद किसी ठेस घातक का
उस गर्वीले दूर गगन से
वज्र अभी गिरनेवाला है,
बहुत काम आओगे तब तुम
ईज़ोरा के विष-उपहार।
और बात सच मेरी निकली!
आख़िर मेरा शत्रु मिला है,
एक नया हेडन यह मुझको,
अनुभव मैंने स्वर्गिक सुख-उल्लास किया है!
आया वह क्षण! ओ, प्यारे उपहार प्यार के
मैत्री-चषक में आज तुम्हें ही जाना होगा।

दूसरा दृश्य

(मदिरालय का विशेष कक्ष; पियानो रखा है,
मोज़ार्ट और सालेरी मेज़ पर बैठे हैं।

सालेरी

क्यों तुम आज उदास और उखड़े-उखड़े हो?

मोज़ार्ट

मैं? नहीं, नहीं!

सालेरी

निश्चय ही हो किसी बात से खिन्न आज तुम ?
बढ़िया खाना, बढ़िया मदिरा,
लेकिन तुम हो ऐसे गुमसुम,
माथे पर अपने बल डाले।

मोज़ार्ट

सच बतलाऊं,
मैं अन्त्येष्टि-गीत के कारण चिन्तित,
मैं आतुर हूं।

सालेरी

क्या कहते हो!
कब से तुम कर रहे सृजन
ऐसी रचना का?

मोज़ार्ट

बहुत दिनों से, बीत गये सप्ताह तीन
उसकी रचना में।
पर अजीब-सी यह घटना है...
मैंने नहीं सुनाई तुमको?

सालेरी

नहीं सुनाई।

मोज़ार्ट

तब तुम सुनो, मीत, यह घटना!
हफ़्ते तीन हुए मैं घर पर
बहुत देर से वापस आया,

बीवी ने मुझको बतलाया –
कोई मुझको पूछ रहा था।
कौन भला वह हो सकता था?
क्यों आया था? काम उसे
क्या हो सकता था?
नहीं जानता क्यों मैं सारी रात
यही कुछ रहा सोचता।
वह अगले दिन फिर से आया
किन्तु न मुझको घर पर पाया,
और तीसरे दिन मैं अपने बेटे के संग खेल रहा था,
नीचे बैठा हुआ फ़र्श पर,
तभी किसीने मुझे पुकारा,
बाहर गया और क्या देखा –
पहने काले वस्त्र व्यक्ति है दरवाज़े पर,
उसने अपना शीश झुकाया
और किया अनुरोध, रचूं
अन्त्येष्टि गीत मैं उसकी ख़ातिर।
वह इतना कह, लुप्त न जाने कहां हो गया।
मैं तो उसी समय रचना करने जा बैठा।
तब से अब तक
काले वस्त्रोंवाला व्यक्ति न आया
मुझसे रचना लेने;
वैसे तो मैं ख़ुश हूं मन में:
निश्चय ही मुझको दुख होता रचना देते
यद्यपि वह तैयार सर्वथा।
लेकिन मुझको...

सालेरी

क्या है तुमको?

मोज़ार्ट

शर्म आ रही इसे मानते ...

सालेरी

किसे मानते ?

मोज़ार्ट

चैन नहीं लेने देता है मुझे
रात को, और न दिन को
व्यक्ति वही तो,
काले वस्त्र पहन जो आया।
छाया बनकर मेरे पीछे
जैसे हर क्षण वह फिरता है।
इस पल भी ऐसे लगता है,
हम दोनों के साथ तीसरा वह बैठा है।

सालेरी

अरे, हटाओ! यह तो बच्चों जैसा डर है!
ऐसे व्यर्थ विचारों को तुम दूर भगाओ।
मेरा एक दोस्त बोमार्चेस अक्सर यही कहा करता था –
बुरे ख़्याल जब उलटे-सीधे मन में आयें,
खोलो तुम शेम्पेन और बस, जाम उठा लो
या फिर बैठो और
'फ़िगारो की शादी' का
पाठ करो तुम।

मोज़ार्ट

हां, बोमार्चेस तो था प्यारा दोस्त तुम्हारा,
तुमने उसके लिये रचा 'तारार' ऑपेरा।
सुन्दर रचना। उसमें धुन है
एक बहुत ही मुझको प्यारी...
जब मैं होता ख़ूब रंग में
उसको ही बस, दोहराता हूं...
ला, ला, ला, ला... क्या यह
सच है बोमार्चेस ने
किसी व्यक्ति को ज़हर दिया था?

सालेरी

व्यर्थ बात है। उस जैसा दिल्लगीबाज़
कब कर सकता था ऐसी हरकत।

मोज़ार्ट

वह तो प्रतिभावान, विभूति था
हम-तुम जैसा। प्रतिभा और
नीचता दोनों – संग न रहतीं।

सालेरी

क्या ऐसा ही ख़्याल तुम्हारा?

(मोज़ार्ट के गिलास में ज़हर डाल देता है)

पी लो इसको!

मोज़ार्ट

मैं पीता हूं जाम स्वास्थ्य का, दोस्त, तुम्हारे,
बना रहे यह मन का बन्धन बीच हमारे,
ध्वनियों का, संगीत-स्वरों का।

(जाम पीता है)

मोज़ार्ट

ज़रा रुको तो
रुको, रुको तो! मेरे बिना...
अकेले अपना जाम पी गये?

मोज़ार्ट

(नेप्किन को मेज़ पर फेंक देता है)

बहुत हो गया खाना-पीना।

(पियानो की ओर जाता है)

मेरा यह अन्त्येष्टि गीत
अब सुनो दोस्त तुम।

(पियानो पर धुन बजाता है)

तुम रोते हो?

सालेरी

ऐसे कड़वे, मीठे आंसू
ये तो पहली बार आज आंखों में आये,
मानो मैंने बहुत कठिन कर्त्तव्य निभाया,

मानो नश्तर चला अंग वह मैंने काटा,
जो दुखता था, टीस रहा था!
मोज़ार्ट, मेरे दोस्त...
नहीं करो परवाह आंसुओं की तुम मेरे,
कृपया जारी रखो वादन,
भरते जाओ जल्दी-जल्दी
तुम ध्वनियों से
मेरा अन्तर, तुम मेरा मन...

मोज़ार्ट

काश, कि सब यों अनुभव करते
शक्ति स्वरों की!
किन्तु नहीं, तब इस जग का अस्तित्व न रहता,
जीवन की साधारण, दैनिक इच्छाओं की
चिन्ता नहीं किसी को रहती,
सब ही हो जाते दीवाने मुक्त कला के।
हम जैसे निश्चिंत और ख़ुशक़िस्मत प्राणी
इस दुनिया में इने-गिने हैं,
तुच्छ समझते लाभ और उपयोग-
मूल्य को जो जीवन के,
ऐसे प्राणी
जो हैं केवल कला-पुजारी।
मेरी बात नहीं क्या सच है?
किन्तु तबीयत मेरी कुछ ढीली-ढीली है
मन भारी-भारी है मेरा;
मैं अब घर जाकर सोता हूं।
मीत, विदा!

सालेरी

विदा, विदा।

(स्वगत)

बहुत समय तक नींद तुम्हारी नहीं
खुलेगी, ओ मोज़ार्ट!
पर उसने जो बात कही थी,
क्या वह सच थी? क्या मैं
प्रतिभावान नहीं हूं? प्रतिभा
और नीचता दोनों संग न रहतीं।
झूठ बात क्या – उसकी, उस बोनारोट्टी की?
या कि बनाया अपने मन से
लोगों ने यह झूठा क़िस्सा –
वैटीकान का जो निर्माता
कभी नहीं था वह हत्यारा?

१८३०

पाषाणी अतिथि

लेपोरेल्लो। ओ भव्य मूर्ति महान कमांडर
की !.. ओह, स्वामी !
'डोन जुआन' (इतालवी से अनूदित)

पहला दृश्य

(डोन जुआन और लेपोरेल्लो)

डोन जुआन

हो जाने तक रात यहीं हम ठहरेंगे,
ओह, आख़िर तो पहुंच गये हम
मेड्रिड के इस फाटक पर। और जल्द ही
जानी-पहचानी गलियों में
मैं सड़कों पर घूमूंगा,
ढांप लबादे से मूंछों को
और टोप से ढककर भौंहें।
बोलो, क्या है ख़्याल तुम्हारा
कोई मुझे जान पायेगा ?

लेपोरेल्लो

हां, हां, यह है कठिन तुम्हें पहचाने कोई,
तुमको, डोन जुआन को !
क्योंकि तुम्हारे जैसे लोगों की है बाढ़
यहां, इस दुनिया में !

डोन जुआन

क्यों मज़ाक़ तुम करते हो ?
बतलाओ तो, कौन मुझे पहचानेगा ?

लेपोरेल्लो

पहरेदार मिले जो पहला,
हर जिप्सी, हर गायक-वादक धुत्त नशे में,
या कि तुम्हारे जैसा कोई ढीठ सूरमा,
जो कि बग़ल में खड्ग दबाये
और लबादे से हो अपना बदन छिपाये।

डोन जुआन

इसमें भी क्या बड़ी मुसीबत, बेशक
लें पहचान मुझे वे,
बस, इतना ही सिर्फ़ चाहता, स्वयं
बादशाह मुझे न देखे,
वैसे नहीं किसी से भी डरता-दबता मैं
मेड्रिड में।

लेपोरेल्लो

और अगर कल
ख़बर बादशाह के कानों में
पहुंच गयी यह तुम निर्वासित
अपनी ही इच्छा से वापस मेड्रिड आये,
तो वह कैसा हाल करेगा, बतलाओ तो?

डोन जुआन

निर्वासित कर देगा, लेकिन वह सिर ही
मेरा कटवा दे, है विश्वास, न ऐसा होगा।
नहीं राज्य के सम्मुख तो मैं हूं अपराधी,

मेरे प्रति बस स्नेह दिखाकर
उसने किया मुझे निर्वासित,
ताकि चैन की सांस ले सकूं,
करें न मुझको परेशान सब प्रियजन उसके,
जिसकी मैंने हत्या की थी...

लेपोरेल्लो

ऐसा है तो अच्छा होता
वहीं मज़े से बैठे रहते!

डोन जुआन

बैठा रहता वहां मज़े से! बस,
इतना ही शुक्र करो तुम – नहीं,
ऊब से निकली मेरी जान वहां पर।
जाने कैसे लोग, वहां की धरती कैसी
और गगन भी? ..
मानो बिल्कुल धुआं धुआं-सा।
और नारियां? मेरे बुद्धू लेपोरेल्लो,
सच कहता हूं, अन्दालूज़ी की मामूली
हर किसान औरत को उनकी
सबसे रूपवती नारी से बढ़कर मानूं।
शुरू-शुरू में वे कुछ मेरे मन को भायीं,
नीली आंखें, गोरा तन औ'
सहज नम्रता, थी नवीनता,
किन्तु भला हो ईश्वर का जल्दी ही मैंने
समझ लिया यह –
नहीं मुझे है उनसे कुछ भी लेना-देना,
उनमें नारी जैसी कोई बात नहीं है
वे तो मानो मोम-पुतलियां।

और हमारी ! .. किन्तु सुनो तो
जगह हमें यह परिचित लगती,
क्या तुमने पहचाना इसको ?

लेपोरेल्लो

कैसे नहीं भला मैं इसको पहचानूंगा –
सन्त एन्थनी का मठ है यह,
नहीं भूल सकता मैं इसको।
कभी यहां पर हम आये थे,
और आपने मुझको घोड़े इस जंगल में पकड़ाये थे।
कहूं साफ़ ही काम बड़ा था वह बेहूदा।
किन्तु किये थे मज़े आपने
मुझसे कहीं मधुर था अपना समय बिताया।

डोन जुआन

(सोच में डूबते हुए)

मेरी बेचारी ईनेज़ा !
नहीं रही वह इस दुनिया में !
कितना प्यार मुझे था उससे !

लेपोरेल्लो

वह ईनेज़ा – काली-काली
आंखोंवाली ... याद मुझे है।
तीन महीने आप घूमते रहे उसी के पीछे-पीछे,
किसी तरह से तभी हुआ शैतान सहायक।

डोन जुआन

मास जुलाई ... और रात थी। उसकी
करुण-दृष्टि में मुझको, जड़ होंठों में
एक अजब माधुर्य, सुखद अनुभव
होता था। यह विचित्र-सी बात।
याद मुझे पड़ता है, तुमको
वह तो सुन्दर नहीं लगी थी। है भी ऐसा
सही अर्थ में, वह तो नहीं बहुत थी सुन्दर,
आंखें, केवल आंखें ही उसकी सुन्दर थीं।
और नज़र भी ... नहीं नज़र,
अन्दाज़ किसी में ऐसा देखा।
फिर उसकी आवाज़ – बहुत ही
धीमी-धीमी और क्षीण सी रोगी जैसी –
उसका पति था बड़ा दुष्ट, पत्थर दिल वाला,
मुझे बाद में पता चला यह ...
मेरी बेचारी ईनेज़ा ! ..

लेपोरेल्लो

किन्तु और भी कई बाद में उसके आयीं।

डोन जुआन

यह भी सच है।

लेपोरेल्लो

जिन्दा अगर रहेंगे और कई आयेंगी।

डोन जुआन

बात सही यह।

लेपोरेल्लो

किसको अब मेड्रिड में हम जाकर खोजेंगे ?

डोन जुआन

लौरा को ही !
मैं तो सीधा उसके पास भाग जाऊंगा।

लेपोरेल्लो

यह तो हुई बात काम की।

डोन जुआन

घुस जाऊंगा सीधा उसके दरवाज़े में
और किसी को अगर वहां पर मैं पाऊंगा,
वह खिड़की से बाहर कूदे,
मैं यह उसको बतलाऊंगा।

लेपोरेल्लो

बेशक, बेशक। फिर से आयें रंग, लहर में।
जो दुनिया में नहीं रहीं,
हम उनकी अधिक न चिन्ता करते।
कौन हमारी ओर आ रहा ?

(मठवासी साधु प्रवेश करता है)

साधु

अभी यहां पर वह आयेगी।
यहां कौन है? नहीं लोग डोना आन्ना के?

लेपोरेल्लो

अजी नहीं। हम तो ख़ुद अपने ही स्वामी हैं
और यहां पर सैर कर रहे।

डोन जुआन

आप प्रतीक्षा में हैं किसकी?

साधु

अभी यहां आनेवाली है डोना आन्ना
वह समाधि पर अपने पति की।

डोन जुआन

डोना आन्ना दे सोल्वा! क्या कहते हैं!
पत्नी उसी कमांडर की...
याद नहीं है, किसने उसकी
हत्या की थी?

साधु

डोन जुआन नाम है जिसका,
उस लंपट ने, उसी दुष्ट ने, धर्महीन ने
हत्या उसके पति की की थी।

लेपोरेल्लो

ओहो! ख़ूब रही यह!
यहां शान्त मठ में भी
डोन जुआन नाम की महिमा पहुंची,
संन्यासी औ' साधु भी उसका यश गायें।

साधु

शायद आप जानते उसको?

लेपोरेल्लो

हम उसको? नहीं, नहीं।
कहां आजकल वह रहता है?

साधु

नहीं यहां पर।
बहुत दूर निर्वासित है वह।

लेपोरेल्लो

शुक्र ख़ुदा का
उतना ही अच्छा है,
जितना दूर रहे वह।
ऐसे सारे बदमाशों को
किसी एक बोरे में भरकर
फेंक दिया जाये सागर में।

डोन जुआन

क्या बकते हो?

लेपोरेल्लो

चुप रहिये जी –
झूठ-मूठ मैं ऐसे कहता ...

डोन जुआन

इसी जगह क्या दफ़न कमांडर?

साधु

इसी जगह पर। यहां स्मारक
पत्नी ने उसका बनवाया,
और यहां हर दिन आती वह,
ताकि प्रार्थना करे
आत्मा चैन पा सके उसके पति की
और कर सके हल्का रोकर मन को अपने।

डोन जुआन

क्या अजीब विधवा है यह भी?
और देखने में भी सुन्दर?

साधु

नारी के सौन्दर्य, रूप की ओर ध्यान दें
हमें साधुओं को यह वर्जित,
किन्तु पाप है झूठ बोलना,
उसका रूप अनूठा अद्भुत,
कोई संन्यासी भी इससे
कर इन्कार नहीं सकता।

डोन जुआन

अब समझा मैं, क्यों था पति यों ईर्ष्या करता,
डोना आन्ना को था घर में बन्दी रखता,
हममें से कोई भी उसको
नहीं आज तक देख सका है।
मेरा मन यह चाहे, उससे बात करूं मैं।

साधु

क्या कहते हैं, डोना आन्ना किसी मर्द से
नहीं कभी भी बोले-चाले।

डोन जुआन

किन्तु आपसे, पिता महोदय?

साधु

मेरी तो है बात दूसरी – मैं मठवासी।
लो, वह आई।

(डोना आन्ना भीतर आती है)

डोना आन्ना

पिता महोदय, द्वार खोलिये।

साधु

अभी खोलता हूं, सेनोरा, राह
आपकी देख रहा मैं।

(डोना आन्ना साधु के पीछे-पीछे आती है)

लेपोरेल्लो

क्यों, कैसी है?

डोन जुआन

विधवा के इस काले बड़े लबादे में तो
बिल्कुल नज़र नहीं वह आती,
बस, छोटी-सी एड़ी की ही झलक मिली है।

लेपोरेल्लो

वही आपके लिये बहुत है।
शेष कल्पना से ही अपनी
उसे आप चित्रित कर लेंगे,
क्योंकि कल्पना-शक्ति आपकी
चित्रकार से भी बढ़कर है
और आपके लिये बराबर
आप करें आरम्भ कहां से
भौंहों से या फिर पैरों से।

डोन जुआन

लेपोरेल्लो, तुम से कहता
परिचय इससे मैं कर लूंगा।

लेपोरेल्लो

ख़ूब रही यह! कौन भला ऐसा करता है!
उसके पति की हत्या कर दी
अब निहारना चाह रहे विधवा के आंसू।
कोई शर्म-हया है बाक़ी!

डोन जुआन

किन्तु झुटपुटा, हुआ अंधेरा।
इससे पहले चांद चमकने लगे गगन में
और अंधेरा बने उजाला
हमें पहुंचना है मेड्रिड में।

(बाहर जाता है)

लेपोरेल्लो

यह कुलीन, अभिजात स्पेनी
किसी चोर की तरह रात की बाट जोहता,
डरे चांद से – मेरे ईश्वर!
यह अभिशाप भरा जीवन है।
कब तक मुझको इसका साथ निभाना होगा?
सच कहता हूं, शक्ति नहीं अब।

दूसरा दृश्य

(कक्ष। लौरा के यहां रात का भोजन हो रहा है)

पहला मेहमान

खाता हूं मैं क़सम और यह कहता लौरा,
सचमुच इतना बढ़िया अभिनय
तुमने अब तक नहीं किया था।
और भूमिका की अपनी
गहराई में तुम कितनी उतरीं!

दूसरा मेहमान

और उसे विकसित भी कैसे, ख़ूब किया है!

तीसरा मेहमान

कलापूर्ण भी वह कितनी थी!

लौरा

हां, कुछ ऐसा आज हो गया,
मेरी हर गति और शब्द भी
मानो था वरदान प्रेरणा का स्वाभाविक,
शब्द इस तरह उमड़ रहे थे
मानो नहीं कहीं मस्तक से,
मेरे दिल से वे तो निकलें...

पहला मेहमान

बिल्कुल सच है,
चमक तुम्हारी आंखों में अब भी दिखती है,
गालों पर है अब भी लाली,
अब भी तुम तो सिक्त प्रेरणा से पूरित हो।
लौरा, ऐसे प्रेरित क्षण को व्यर्थ नहीं अब तुम जाने दो,
तुम कुछ गाओ।

लौरा

तो गिटार तुम मेरा लाओ।

(गाती है)

सभी

वाह, वाह, वाह, वाह! लाजवाब है!
क्या गाया है!

पहला मेहमान

हम आभारी जादूगरनी ! हृदय
हमारे जादू में बंध जाते तेरे।
जीवन में जितनी ख़ुशियां हैं
सिर्फ़ प्यार ही बढ़कर है
संगीत-गीत से,
किन्तु प्यार संगीत स्वयं है ... देखो तो तुम –
यह उदास मेहमान तुम्हारा
डोन कारलोस
वह भी कैसा मुग्ध हो रहा।

दूसरा मेहमान

कैसे सुर, कैसी ध्वनियां हैं !
कितनी दिल की धड़कन, स्पन्दन !
लौरा, किसके शब्द भला ये ?

लौरा

डोन जुआन के।

डोन कारलोस

क्या कहती हो ? डोन जुआन के ?

लौरा

हां, उसने ही कभी रचा था इन शब्दों को
मेरे सच्चे मित्र प्रवर ने, मेरे उस चंचल प्रेमी ने।

डोन कारलोस

धर्म, आस्थमहीन तुम्हारा डोन जुआन है,
नीच, कमीना,
तुम हो, तुम हो बिल्कुल उल्लू!

लौरा

क्या दिमाग़ चल निकला तेरा?
मैं आदेश नौकरों को दे दूंगी अभी बुलाकर
कर डालें वे तेरे टुकड़े
बेशक तुम कुलीन हो स्पेनी।

डोन कारलोस

(उठकर खड़ा हो जाता है)

उन्हें बुलाओ!

पहला मेहमान

लौरा, यह क्या पागलपन है,
डोन कारलोस, बुरा न मानो। भूल गयी वह...

लौरा

भूल गयी क्या? यही कि न्यायिक द्वन्द्व-युद्ध में
हत्या की इसके भाई की
मेरे डोन जुआन ने।
सचमुच इसका खेद मुझे है—
नहीं मौत के घाट उतारा उसने इसको।

डोन कारलोस

बेवकूफ़ मैं, भड़क उठा जो।

लौरा

अहा, मानते हो यह ख़ुद ही – बेवकूफ़ हो।
तो हो जाये सुलह हमारी।

डोन कारलोस

मैं ही अपराधी हूं, लौरा,
क्षमा चाहता। किन्तु नाम वह
सुनकर शान्त न रह पाता हूं...

लौरा

पर मेरा अपराध भला क्या,
यदि हर पल ही मेरे मुंह पर
नाम वही बरबस आ जाता?

मेहमान

अब बिल्कुल नाराज़ नहीं हो
यही दिखाने की ख़ातिर तुम, प्यारी लौरा,
गाना कोई और सुनाओ।

लौरा

तो यह होगा आज शाम का
अन्तिम गाना।
रात हो गयी, विदा समय अब।
पर, क्या गाऊं?
ख़ैर, सुनो यह।

(गाती है)

सभी

कितना बढ़िया, ओह, कितना अच्छा गाया है!

लौरा

विदा, आप अब जा सकते हैं।

मेहमान

लौरा, विदा, विदा, हम जाते।

(मेहमान बाहर जाते हैं। लौरा डोन कारलोस को रोक लेती है)

लौरा

तुम रुक जाओ, ओ, मेरे जलते अंगारे।
तुम तो अच्छे मुझे लगे हो;
डोन जुआन की याद दिला दी तुमने मुझको,
उसी तरह से तुमने मुझको फटकारा था,
उसकी तरह दांत पीसे थे।

डोन कारलोस

खुशक़िस्मत वह !
तो तुम प्यार उसे करती थीं।

(लौरा सिर झुकाकर हामी भरती है)

बेहद ?

लौरा

बेहद।

डोन कारलोस

अब भी प्यार उसे करती हो ?

लौरा

इस क्षण ?
इस क्षण प्यार नहीं करती हूं। एकसाथ
मैं दो को प्यार नहीं कर सकती।
इस क्षण प्यार तुम्हें करती हूं।

डोन कारलोस

लौरा, यह बतलाओ,
कितनी उम्र तुम्हारी ?

लौरा

वर्ष अठारह।

डोन कारलोस

तुम जवान हो...
और पांच-छः वर्ष रहेगी यही जवानी।
छः वर्षों तक तेरे इर्द-गिर्द घूमेंगे तेरे प्रेमी,
वे सब तुझको सहलायेंगे, दुलरायेंगे
देंगे वे उपहार बहुत से,
प्रणय-प्रदर्शन करते हुए गीत गायेंगे,
रात्रि समय चौराहों पर भी
तेरी ख़ातिर, एक-दूसरे को मारें, छाती चीरेंगे।
किन्तु वर्ष जब ये बीतेंगे
और जवानी ढल जायेगी,
आंखें तेरी धंस जायेंगी,
तेरी पलकों के ऊपर जब
स्याही छाये और झुर्रियां पड़ जायेंगी,
तार सफ़ेदी के बालों में जब झलकेंगे,
बुढ़िया जब वे तुम्हें कहेंगे तब –
तब क्या होगा हाल तुम्हारा?

लौरा

तब? मैं किसलिये
भला यह सोचूं? कैसी तुम
बातें करते हो? या कि तुम्हारे
मन में हर दम भाव सदा ही ऐसे आते?
जाओ, जाकर छज्जे का दरवाज़ा खोलो।
देखो, कैसा नीरव नभ है,
ठहरा-ठहरा मधुर पवन है,
नीबू, तेज पत्तों की उसमें महक बसी है,
गगन नीलिमा घनी-घनी है,
जिसमें स्याही घुली-मिली है,

उसमें उजला चांद चमकता,
चौकीदारों की आवाज़ें गूंज रही हैं – "रहो जागते!"
दूर कहीं पर उत्तर में, पेरिस में इस क्षण
शायद नभ में बादल छाये,
ठण्डा-ठण्डा पानी बरसे,
तेज़ हवा के झोंके चलते।
किन्तु हमें क्या इससे मतलब?
सुनो कारलोस, मैं तुमसे यह मांग कर रही –
तुम मुस्काओ, हां, हां, ऐसे!

डोन कारलोस

मधुर पिशाची!

(दरवाज़े पर दस्तक)

डोन जुआन

ऐ! लौरा!

लौरा

कौन वहां है? यह किसकी आवाज़ भला है?

डोन जुआन

दरवाज़ा तो अपना खोलो।

लौरा

क्या है वही! ईश्वर मेरे!

(दरवाज़ा खोलती है, डोन जुआन भीतर आता है)

डोन जुआन

लौरा प्यारी ...

लौरा

डोन जुआन ! ..

(लौरा उसके गले में बांहें डाल देती है)

डोन कारलोस

क्या ! डोन जुआन !

डोन जुआन

लौरा, मेरे दिल की रानी !

(उसे चूमता है)

कौन यहां है, मेरी लौरा ?

डोन कारलोस

मैं हूं, डोन कारलोस।

डोन जुआन

ख़ूब अचानक भेंट हुई यह !
मुझको अपनी सेवा में तुम कल पाओगे।

डोन कारलोस

नहीं ! अभी, इस वक़्त हाथ दो-दो हो जायें।

लौरा

डोन कारलोस, व्यर्थ न उलझो!
नहीं सड़क पर तुम दोनों हो – मेरे घर में –
कृपया चलते बनो यहां से।

डोन कारलोस

(लौरा की बात पर कान नहीं देता)

देख रहा मैं राह तुम्हारी।
देर किसलिये, खड्ग पास में।

डोन जुआन

अगर नहीं है सब्र तुम्हें
तो आओ सम्मुख।

(दोनों लड़ते हैं)

लौरा

हाय! हाय! यह फिर
जुआन कैसी हरकत है!..

(बिस्तर पर जा गिरती है। डोन कारलोस नीचे गिरता है)

डोन जुआन

लौरा, उठो, ख़त्म है क़िस्सा।

लौरा

यह क्या हुआ ?
मार ही डाला ? बहुत ख़ूब !
मेरे कमरे में !
मैं क्या करूं, बताओ अब शैतान कहीं के ?
कहां इसे अब मैं फेंकूंगी ?

डोन जुआन

हो सकता है, अब भी शायद वह ज़िन्दा हो।

लौरा

(शव का ध्यान स देखती है)

हां, ज़िन्दा है ! दुष्ट कहीं के,
सीधे दिल पर वार किया है,
वार तुम्हारा कभी न चूके
किया तिकोना घाव कि जिससे रक्त न बहता
और सांस भी शेष नहीं है – अब बोलो तो ?

डोन जुआन

मैं क्या करता ?
उसने ही ऐसा चाहा था।

लौरा

हाय, हाय, ज़ालिम जुआन,
तुम चैन नहीं लेने देते हो।
सदा शरारत कोई तुम करते रहते हो –
और न अपराधी भी ख़ुद को कभी मानते ...
कहो, कहां से टपक पड़े हो ?
बहुत दिनों से भला यहां तुम ?

डोन जुआन

मैं तो अभी-अभी आया हूं
सो भी चोरी-चोरी, छिपकर,
अब तक माफ़ी नहीं मिली है।

लौरा

और यहां आते ही तुमने याद किया
अपनी लौरा को?
कहना होगा, अच्छा बहुत किया यह तुमने।
लेकिन नहीं, नहीं, तुमपर विश्वास मुझे है,
शायद योंही इसी राह से गुज़र रहे थे
और दिखाई दिया सामने यह घर मेरा।

डोन जुआन

बात न ऐसी, मेरी लौरा,
यदि चाहो तो लेपोरेल्लो से
तुम पूछ कभी भी लेना।
दूर नगर से मैं सराय गन्दी में ठहरा
और यहां मेड्रिड में आया
केवल तुमसे मिलने, लौरा।

(लौरा को चूमता है)

लौरा

मेरे प्रियतम!..
किन्तु रुको तो... शव के सम्मुख?
कहां ठिकाने इसे लगायें?

डोन जुआन

इसकी मत परवाह करो तुम – पौ फटते ही
मैं चोग़े से ढककर इसको ले जाऊंगा,
चौराहे पर जा रख दूंगा।

लौरा

लेकिन सावधान तुम रहना
कोई तुमको देख न पाये।
कितना अच्छा हुआ देर से कुछ तुम आये।
खाने पर थे मित्र तुम्हारे कई उपस्थित।
कुछ ही पहले गये यहां से।
अगर भेंट हो जाती उनसे, तो क्या होता!

डोन जुआन

बहुत समय से प्यार इसे तुम करतीं, लौरा?

लौरा

किसको? लगता है, तुम बहक रहे हो।

डोन जुआन

और करो स्वीकार
कि कितनी बार दिया है मुझको धोखा
मैं जिस दिन से निर्वासित हूं?

लौरा

पहले तो तुम ही बतलाओ, लम्पट मेरे?

डोन जुआन

बतलाओ तो ... ख़ैर, बाद में
इसकी चर्चा हम कर लेंगे।

तीसरा दृश्य

(कमांडर का बुत)

डोन जुआन

जो भी होता है, अच्छा ही :
अनचाहे ही हत्या मैंने
डोन कारलोस की कर डाली
और तपस्वी बनकर अब मैं
यहां छिपा बैठा रहता हूं,
हर दिन देख उसे पाता हूं,
उस प्यारी, सुन्दर विधवा को।
मुझको लगता, वह भी मुझे ध्यान में लाती।
एक-दूसरे से हम अब तक
दूर रहे हैं; किन्तु आज मैं
चाहे कुछ हो, बात करूंगा उस ललना से।
पर, आरम्भ करूंगा कैसे? "मैं इतना
साहस करता हूं" ... नहीं, इस तरह –
"ओ सेनोरा" ... नहीं बात यह भी कुछ बनती!
जो भी मन में आ जायेगा
वही कहूंगा, बिना किसी भी तैयारी के,
उसी तरह से, तुरत-फुरत मैं
गीत प्रीत के जैसे रचता ...
आ ही जाना उसे चाहिये आख़िर अब तो।

उसके बिना मुझे लगता है
ऊब कमांडर अनुभव करता।
कैसे उसे दिखाया गया यहां पर हट्टा-कट्टा
कितने चौड़े-चौड़े कंधे! हरकुलीस ही वह तो जैसे!..
लेकिन वह तो नाटा-सा था, दुबला-पतला,
पंजों के बल यहां खड़ा हो जाता तो भी
नाक न अपनी वह छू पाता
एस्ककूरियल मठ के पीछे
जब हम दोनों हुए सामने,
खड्ग-नोक पर मेरी उसने तोड़ दिया दम,
जैसे कोई टिड्डा पिन से बिंध जाता है –
लेकिन था वह बड़ा साहसी
औ' गर्वीला ... और कड़ा था उसका दिल भी ...
लो! वह आई।

(डोना आन्ना भीतर आती है)

डोना आन्ना

वह है फिर से यहां उपस्थित। पिता तपस्वी,
मैंने डाला विघ्न आपके ध्यान-ज्ञान में,
क्षमा कीजिये।

डोन जुआन

मुझे चाहिये क्षमा आपसे
मैं ही मांगूं, ओ सेनोरा।
शायद मैं बाधा बनता हूं,
मेरे कारण दुख को अपने मुक्त रूप से
व्यक्त नहीं कर पाती होंगी।

डोना आन्ना

बात न ऐसी, पिता तपस्वी,
मेरा दुख है मेरे मन में
और आपके सम्मुख भी तो
दूर गगन तक, मेरी नम्र प्रार्थना पहुंचे।
मैं अनुरोध आप से करती
मेरे स्वर में आप मिला दें अपना स्वर भी।

डोन जुआन

करूं आपके संग प्रार्थना, डोना आन्ना!
मैं तो इसके योग्य नहीं हूं।
पाप भरे अपने होंठों से
दोहराऊं मैं उन शब्दों को आप कहें जो –
मैं तो केवल यहां, दूर से
श्रद्धा से देखा करता हूं,
जिस क्षण धीरे-धीरे झुककर
काले-काले बालोंवाला सिर अपना
पीले-पीले मरमर पत्थर पर जब आप टिका देती हैं,
मुझको उस क्षण ऐसे लगता
एक फ़रिश्ता चुपके-चुपके
इस समाधि पर ज्यों आया हो।
मेरे विह्वल-विकल हृदय में
नहीं प्रार्थना तब आती है,
मूक-मौन मैं चकित-चकित सोचा करता हूं,
वह ख़ुशक़िस्मत, जिसका ठण्डा मरमर पत्थर
इसकी स्वर्गिक सांसों से गर्माया जाता
और भिगोते जिसको इसके
प्यार, प्रेम के कोमल आंसू।

डोना आन्ना

ये अजीब-सी बातें कैसी !

डोन जुआन

सेनोरा ?

डोना आन्ना

मुझसे कहते ... लगता है, यह भूल गये हैं आप कौन हैं।

डोन जुआन

भूल गया मैं ? यही, तुच्छ-सा
मैं सन्यासी ? पापयुक्त स्वर मेरा ऐसे,
नहीं गूंजना यहां चाहिये ?

डोना आन्ना

मुझको ऐसे लगा ... नहीं मैं शायद समझी ...

डोन जुआन

देख रहा हूं – आप सभी कुछ जान गयी हैं !

डोना आन्ना

जान गयी क्या ?

डोन जुआन

यही, कि मैं तो नहीं तपस्वी –
पड़ूं आपके पैरों पर, मैं क्षमा चाहता।

डोना आन्ना

ईश्वर मेरे! उठें, उठें... तो कौन आप हैं?

डोन जुआन

मैं बदक़िस्मत, मैं बलि आशाहीन प्रणय की।

डोना आन्ना

ईश्वर मेरे! यहां, इस समाधि के सम्मुख!
चले जाइये अभी यहां से।

डोन जुआन

सिर्फ़ एक पल, डोना आन्ना
सिर्फ़ एक क्षण!

डोना आन्ना

अगर यहां कोई आ जाये!..

डोन जुआन

ताला लगा हुआ जंगले में। सिर्फ़ एक पल!

डोना आन्ना

तो जल्दी से वह कह डालें,
जो कुछ कहना आप चाहते।

डोन जुआन

मृत्यु चाहता। यही चाहता, यहां
आपके पैरों में ही मैं मर जाऊं,
मेरी बेचारी मिट्टी को यहीं कहीं दफ़नाया जाये,
नहीं इस जगह, जहां दफ़न वह
जिसको आप प्यार करती हैं,
नहीं निकट भी, कहीं दूर ही,
वहां द्वार के पास, निकट बिल्कुल देहरी के,
ताकि क़ब्र का पत्थर मेरा
स्पर्श आपके पांव या कि आंचल का पाये
जब आयेंगी आप यहां पर
इस समाधि पर, गर्वीली पर,
घुंघराली अलकों से छूकर नीर बहाने।

डोना आन्ना

कुछ पगलाये ऐसा लगता।

डोन जुआन

मृत्यु चाहता
पागलपन का चिह्न यही क्या?
होता पागल, जीवित रहने की
तब इच्छा होती मन में
आशा यही संजोये रहता,
अपने कोमल प्रेम-भाव से
हृदय आपका मैं छू लूंगा;

होता पागल, तो रातों को
प्रेम-गीत में गाता नित खिड़की के नीचे
और आपकी सुखद नींद में ख़लल डालता,
ख़ुद को ऐसे नहीं छिपाता,
उल्टे, मैं तो कोशिश करके
सभी जगह सम्मुख आ जाता,
होता पागल, तो मैं ऐसे मौन साधकर
नहीं यातना मन में सहता...

डोना आन्ना

इसको ही शायद कहते हैं
मौन साधना?

डोन जुआन

ऐसा कुछ संयोग हो गया, डोना आन्ना,
वरना मेरे छिपे हुए दुख के भावों का
कभी न होता ज्ञान आपको।

डोना आन्ना

बहुत समय से आप प्यार करते हैं मुझको?

डोन जुआन

बहुत समय या अल्प समय से,
यह तो मैं ख़ुद नहीं जानता,

किन्तु उस समय से ही मैंने
अपने क्षण-भंगुर जीवन का
मूल्य, अर्थ समझा है असली
केवल उस क्षण से ही मैं
यह समझ सका हूं,
सुख के क्या मानी होते हैं।

डोना आन्ना

चले जाइये दूर यहां से –
ख़तरनाक हैं आप बहुत ही।

डोन जुआन

ख़तरनाक हूं! वह किस कारण?

डोना आन्ना

सुनते हुए आपकी वाणी, मैं डरती हूं।

डोन जुआन

यदि ऐसा, ख़ामोश रहूंगा,
किन्तु न मुझको दूर भगायें
उसको, जिसके लिये देख लेना ही सिर्फ़ आपको,
बड़ी ख़ुशी है।
उद्धत, बड़ी-बड़ी आशायें
नहीं हृदय में मैंने पालीं,
नहीं आपसे कुछ भी मांगूं,
किन्तु भोगना दण्ड अगर मुझको जीने का
नहीं आपको देखे बिन मैं रह सकता हूं।

डोना आन्ना

चले जाइये – नहीं जगह यह
ऐसे शब्द जहां पर कोई कहे,
दिखाये यह पागलपन।
कल आ जायें मेरे घर पर,
किन्तु क़सम यह खानी होगी
मेरे प्रति सम्मान-भाव को
आप सहेजेंगे आगे भी,
मिलन आपसे होगा मेरा, किन्तु
रात को, बहुत देर से – जब से
विधवा हुई, नहीं मैं मिली किसी से ...

डोन जुआन

आप फ़रिश्ता, डोना आन्ना!
चैन आपके मन को ईश्वर उसी तरह दे,
जैसे मेरे व्यथित हृदय को
चैन आपने आज दिया है।

डोना आन्ना

अब तो आप यहां से जायें।

डोन जुआन

एक मिनट बस, और चाहता।

डोना आन्ना

ऐसे लगता, मुझको ही अब जाना होगा...
और प्रार्थना में भी मन अब नहीं लगेगा।
दुनियावी बातों में मेरा मन भटकाया,
जिनको मैंने एक समय से है बिसराया।
कल आ जायें मेरे घर पर।

डोन जुआन

नहीं मुझे विश्वास अभी भी यह होता है,
नहीं अभी जुर्रत होती है ख़ुश होने की...
होगा मेरा मिलन आपसे कल, यह सम्भव !
सो भी नहीं यहां पर
और नहीं छिप-छिपकर !

डोना आन्ना

हां, कल होगा।
नाम आपका क्या है, कहिये ?

डोन जुआन

डीयेगो डे कलवादो कह मुझे पुकारें।

डोना आन्ना

नमस्कार है, डोन डीयेगो।

(चली जाती है)

डोन जुआन

लेपोरेल्लो !

(लेपोरेल्लो भीतर आता है)

कहिये, क्या आदेश आपका ?

डोन जुआन

मेरे प्यारे लेपोरेल्लो ! बेहद ख़ुश मैं !..
"बहुत देर से, रात ढले कल ..."
मेरे प्यारे लेपोरेल्लो, कल के लिये करो तैयारी ...
मैं बच्चे की तरह बहुत ख़ुश !

लेपोरेल्लो

डोना आन्ना से क्या बात
आपने की है ? शायद उसने शब्द
कहे दो-चार स्नेह के
या असीस आपने उसको कुछ दे दी है।

डोन जुआन

ऐसा कुछ भी नहीं, नहीं है, लेपोरेल्लो !
प्रेम-मिलन कल होगा उससे
प्रेम-मिलन के लिये बुलाया !

लेपोरेल्लो

क्या कहते हैं !
हाय, एक जैसी होती हैं सब विधवायें।

डोन जुआन

बेहद ख़ुश मैं!
मेरा मन होता मैं गाऊं, बांहों में
भर लूं अग-जग को।

लेपोरेल्लो

किन्तु कमांडर? होगी उसकी राय
भला क्या इस बारे में?

डोन जुआन

तुम क्या सोच रहे हो ईर्ष्या उसको होगी?
कभी नहीं, वह समझदार है,
निश्चय ही वह शान्त हो गया होगा अब तक
जब से धरती में सोया है।

लेपोरेल्लो

नहीं, देखिये उसके बुत को।

डोन जुआन

ख़ास बात क्या?

लेपोरेल्लो

लगता, नज़र आप पर उसकी ज़मी हुई है
और बहुत गुस्से में है वह।

डोन जुआन

जाओ उसके निकट और यह उससे कह दो –
कल वह मेरे पास पधारे –
मेरे पास नहीं, डोना आन्ना के
घर पर आकर वह दर्शन दे।

लेपोरेल्लो

बुत से कहूं वहां आने को! भला किसलिये?

डोन जुआन

निश्चय ही इसलिये नहीं
मैं उससे बातें करना चाहूं,
उससे कहो कि रात ढले वह
कल डोना आन्ना के दरवाज़े पर
पहरेदारी करने आये।

लेपोरेल्लो

क्या मज़ाक आपको सूझा, सो भी किससे?

डोन जुआन

जाओ, जाकर उससे कह दो!

लेपोरेल्लो

लेकिन ...

डोन जुआन

जाओ भी तो।

लेपोरेल्लो

बात सुनो यह बहुत ध्यान से
भव्य मूर्ति तुम,
मेरे स्वामी, डोन जुआन अनुरोध कर रहे,
कृपया आयें... हे भगवान, नहीं कह सकता
कहते मेरा दिल डरता है।

डोन जुआन

कायर! लूंगा ख़बर तुम्हारी!

लेपोरेल्लो

कह देता हूं।
मेरे स्वामी डोन जुआन अनुरोध कर रहे,
आप पधारें बड़ी रात कल
बनकर चौकीदार खड़े हों
पत्नी के दरवाज़े पर आ...

(मूर्ति सहमति प्रकट करते हुए सिर झुकाती है)

हाय, हाय!

डोन जुआन

क्या क़िस्सा है?

लेपोरेल्लो

हाय, हाय!.. हाय, हाय...
जान निकल जायेगी मेरी!

डोन जुआन

तुम्हें हुआ क्या?

लेपोरेल्लो

(सिर झुकाते हुए)

यह बुत... हाय, हाय!..

डोन जुआन

शीश झुकाते हो तुम इसको?

लेपोरेल्लो

नहीं, मैं नहीं,
बुत ने शीश झुकाया अपना!

डोन जुआन

क्या बकते हो!

लेपोरेल्लो

स्वयं वहां पर जाकर देखें।

डोन जुआन

अक़्ल तुम्हारी ठीक करूंगा, अभी सिरफिरे!

(मूर्ति से)

सुनो, कमांडर, मैं अनुरोध करूं यह तुमसे,
अपनी विधवा के घर पर तुम कल आ जाना,
मुझे वहीं पर तुम पाओगे,
पहरेदारी उसके दरवाज़े पर करना।
आओगे क्या?

(मूर्ति फिर से सिर झुकाती है)

ईश्वर मेरे!

लेपोरेल्लो

क्यों? क्या मैंने झूठ कहा था...

डोन जुआन

चलो यहां से।

चौथा दृश्य

(डोना आन्ना का कमरा)

(डोन जुआन और डोना आन्ना)

डोना आन्ना

मैं मिल रही आपसे घर पर, डोन डियेगो;
किन्तु मुझे यह डर है, मेरे दुख की बातें
सुनकर ऊब आपको होगी – मैं बेचारी विधवा,
अपने दुख को भूल नहीं पाती हूं। आंसू संग मुस्कान मिलाती।
आप भला क्यों ऐसे चुप हैं?

डोन जुआन

मेरे लिये मौन ही सुखकर
रूपवती डो़ना आन्ना के
संग और एकान्त जगह यह,
गहन भाव से चिन्तन करता
यहां, नहीं उस जगह,
जहां पर है समाधि उस भाग्यवान की
और न देखूं यहां आपको घुटनों के बल
शीश झुकाये पति के पत्थर-बुत के सम्मुख।

डोना आन्ना

डोन डियेगो, आप ईर्ष्या अनुभव करते। दफ़न
क़ब्र में भी पति मेरा,
व्यथित आपको वह करता है?

डोन जुआन

मुझे ईर्ष्या करने का अधिकार नहीं है,
उसे आपने स्वयं चुना था।

डोना आन्ना

नहीं, मुझे आदेश दिया था
मेरी मां ने उसकी पत्नी बन जाने का,
हम ग़रीब थे और डोन अलवार धनी था!

डोन जुआन

खुशक़िस्मत था ! अपने सारे कोश, खज़ाने,
देवी के पैरों पर उसने लाकर रखे,
इसके बदले उसने स्वर्गिक सुख पाया !
काश, आपसे मैं कुछ पहले परिचित होता,
तो कितने उल्लास-हर्ष से
अपनी पदवी, अपनी दौलत
भेंट आपको सब कर देता,
अगर प्यार की एक नज़र से
मुझे आपने देखा होता,
दास आपकी पावन इच्छा का मैं बनता,
ध्यान आपकी सारी चाहों का मैं रखता,
उनके बारे में पहले से
मैं मन में अनुमान लगाता
ताकि आपका सारा जीवन लगातार ही
एक मधुर जादू-सा होता।
किन्तु नहीं ! था किया नियति ने मेरे लिये अन्य ही निर्णय।

डोना आन्ना

डोन डियेगो, ऐसी बातें नहीं कीजिये,
सुनना ऐसी बातें – मेरे लिये पाप है
और आपको प्यार नहीं कर सकती हूं मैं,
यह विधवा के लिये अपेक्षित
निष्ठावान रहे पति के प्रति
वह उसके मर जाने पर भी।
काश, आपको होता यह मालूम
कि कितना अधिक प्यार करता
था मुझको मेरा वह पति बेहद प्यारा !
यदि हो जाता विधुर,

किसी भी महिला से वह
है मुझको विश्वास, प्यार वह कभी न करता,
नहीं किसी से मिलने को वह राज़ी होता,
पति के नाते मेरे प्रति नित
निष्ठावान सदा वह रहता।

डोन जुआन

बार-बार पति की चर्चा कर
नहीं इस तरह मेरे दिल को
आप दुखायें, डोना आन्ना।
बहुत दे दिया दण्ड आपने अब तक मुझको
बेशक दण्ड मिले मैं शायद इसके लायक़।

डोना आन्ना

यह किस कारण?
मेरी तरह किसी के भी संग
नहीं आप पावन बन्धन में बंधे हुए हैं – सही बात यह?
प्यार मुझे कर, मेरे सम्मुख
औ' ईश्वर के सम्मुख भी तो
नहीं आपने कोई भी अपराध किया है।

डोन जुआन

नहीं आपके सम्मुख मैंने? ईश्वर मेरे!

डोना आन्ना

आप भला मेरे सम्मुख क्या अपराधी
हैं? क्या अपराध किया, बतलायें।

डोन जुआन

नहीं, नहीं, मैं ऐसा कभी न कर पाऊंगा।

डोना आन्ना

यह क्या क़िस्सा, डोन डियेगो?
मेरे सम्मुख अपराधी हैं? क्या
अपराध आपका, कहिये।

डोन जुआन

नहीं बताऊंगा मैं हरगिज़!

डोना आन्ना

यह तो बड़ी अजीब बात है।
मैं अनुरोध, मांग करती हूं।

डोन जुआन

नहीं, नहीं।

डोना आन्ना

तो ऐसे ही आप करेंगे मेरी हर इच्छा का पालन!
कुछ क्षण पहले यही आपने मुझे कहा था?
चाह रहे थे आप दास मेरा बन जाना।
बिगड़ आपपर मैं जाऊंगी, वरना
मुझको यह बतलायें, मेरे सम्मुख
आप क्यों अपराधी?

डोन जुआन

साहस मुझे नहीं होता है बतलाने का।
घृणा आपको मुझसे तब तो हो जायेगी।

डोना आन्ना

नहीं, नहीं। मैं क्षमा आपको पहले से ही करदेती हूं,
किन्तु जानना चाह रही हूं...

डोन जुआन

नहीं, नहीं, ऐसा मत चाहें
यह रहस्य है बहुत भयानक, बेहद घातक।

डोना आन्ना

बहुत भयानक! आप यातना मुझको देते,
जिज्ञासा से विह्वल करते – क्या क़िस्सा है?
कैसे भला लगा सकते थे ठेस
आप ही मेरे दिल को?
नहीं आपसे मैं परिचित थी – नहीं
शत्रु थे पहले मेरे, और न अब हैं।
पति का हत्यारा ही केवल एक शत्रु है।

डोन जुआन

(अपने आप से)

गांठ अभी खुलनेवाली है!
कृपया मुझको यह बतलायें – क्या
बदक़िस्मत डोन जुआन को आप जानतीं?

डोना आन्ना

नहीं कभी भी उसको देखा।

डोन जुआन

उसके प्रति तो आप हृदय में
शत्रुभाव अनुभव करती हैं?

डोना आन्ना

मर्यादा के प्रति अपना कर्त्तव्य निभाती।
किन्तु आप तो कोशिश करते
प्रश्न टाल दें जैसे भी हो सम्भव मेरा,
डोन डियेगो – मैं करती हूं मांग आपसे...

डोन जुआन

भेंट आपकी डोन जुआन से यदि हो जाये?

डोना आन्ना

तो मैं अपना घातक खंजर
उसके सीने में उतार दूं।

डोन जुआन

डोना आन्ना, लाओ, कहां तुम्हारा खंजर?
यह हाज़िर है मेरा सीना।

डोना आन्ना

डोन डियेगो !
यह क्या आप भला कहते हैं ?

डोन जुआन

नहीं डियेगो, मैं जुआन हूं।

डोना आन्ना

मेरे ईश्वर ! नहीं, नहीं ऐसा हो सकता,
मैं विश्वास नहीं कर सकती।

डोन जुआन

डोन जुआन मैं।

डोना आन्ना

झूठ बात यह।

डोन जुआन

तेरे पति का मैं हत्यारा
किन्तु न इसका दुख है मुझको
और न पश्चाताप तनिक भी।

डोना आन्ना

क्या सुनती हूं ? नहीं, नहीं, यह
कभी न सम्भव।

डोन जुआन

मैं हूं डोन जुआन, प्यार मैं
तुमको करता।

डोना आन्ना

(गिरते हुए)

मैं हूं कहां?.. किस जगह हूं मैं?
मैं बेहोश हुई जाती हूं।

डोन जुआन

ईश्वर मेरे! इसे हुआ क्या?
तुम्हें हुआ क्या, डोना आन्ना?
उठो, उठो, तुम होश में आओ,
आंखें खोलो – तेरा डोन डियेगो,
तेरा दास तुम्हारे क़दमों पर है।

डोना आन्ना

मुझे हाल पर मेरे छोड़ो!

(धीमी आवाज़ में)

ओ, तुम मेरे शत्रु – तुम्हीं ने
छीना वह सब
जो कुछ था मेरे जीवन में...

डोन जुआन

मेरी प्यारी !
हर क़ीमत पर, मैं हूं तत्पर
पश्चाताप करूंगा उसका
ठेस तुम्हें है जो पहुंचाई,
तेरे क़दमों पर, तेरा आदेश सुनूं,
यह इन्तज़ार है – हुक्म मिले तो मैं मर जाऊं,
हुक्म मिले मैं जीता जाऊं
सिर्फ़ तुम्हारी ही ख़ातिर, बस ...

डोना आन्ना

तो यह डोन जुआन ऐसा है ...

डोन जुआन

जिसे आपके सम्मुख चित्रित किया गया है
दुष्ट, दरिन्दा – ठीक बात यह, डोना आन्ना –
मेरी ऐसी ख्याति सर्वथा ग़लत नहीं है,
थकी आत्मा पर है मेरी
शायद बेहद बोझ भयंकर।
बहुत समय तक मैं व्यभिचारी बना रहा हूं,
किन्तु आपको देखा जब से
नया जन्म मैंने पाया यह मुझको लगता।
प्यार आपको कर, मैं नेकी को भी
प्यार लगा हूं करने, विनय भाव से
उसके सम्मुख श्रद्धा से नत-मस्तक होता।

डोना आन्ना

ज्ञात मुझे यह – बहुत वाक-पटु डोन जुआन है,
और सुना यह – बहुत धूर्त्त वह फुसलाने में।
कहते हैं यह लोग – बहुत ही लम्पट है वह,
नहीं आपका दीन-धर्म या ख़ुदा, ईश्वर,
एक तरह से दानव ही हैं। नष्ट
आपने कर डाली हैं, कितनी ही लाचार नारियां।

डोन जुआन

नहीं किसी को भी उनमें से
मैंने मन से प्यार किया था।

डोना आन्ना

और भरोसा मैं यह कर लूं,
अब ही पहली बार किया है
डोन जुआन ने प्यार किसी को
और नहीं वह खोज रहा है
मुझमें नया शिकार, शिकारी !

डोन जुआन

धोखा ही यदि मुझे आपको देना होता,
क्यों करता स्वीकार नाम वह
जिसको आप न सुन सकती हैं ?
कहां धूर्त्तता, इसमें छल है ?

डोना आन्ना

कौन आपके छल-बल जाने? किन्तु यहां पर
आप भला आये ही क्यों हैं? यहां
आपको पहचाना भी जा सकता है,
तब तो मृत्यु आपकी बिल्कुल निश्चित समझें।

डोन जुआन

मृत्यु अर्थ ही क्या रखती है?
मिले प्यार का एक मधुर क्षण
तो मैं हंसते-हंसते अपने प्राण लुटा दूं।

डोना आन्ना

किन्तु आपने ख़तरा मोल लिया है भारी,
बाहर आप यहां से कैसे अब जायेंगे?

डोन जुआन

(उसके हाथ चूमता है)

इस बेचारे डोन जुआन के जीवन के
बारे में चिन्तित आप हो रहीं! इसका
मतलब, नहीं फ़रिश्ते जैसे दिल में
घृणा भाव मेरे प्रति कोई?

डोना आन्ना

ओ मैं नफ़रत काश, आपसे कर सकती!
ख़ैर, आपके जाने का अब समय हो गया।

डोन जुआन

मिलन हमारा फिर कब होगा?

डोना आन्ना

नहीं जानती। हो जायेगा कभी, किसी दिन।

डोन जुआन

और अगर कल?

डोना आन्ना

किन्तु कहां पर?

डोन जुआन

इसी जगह पर।

डोना आन्ना

कितना मेरा दिल दुर्बल है, डोन जुआन।

डोन जुआन

क्षमा कर दिया — इसके लिये
मुझे दो चुम्बन, मेरी प्यारी...

डोना आन्ना

बस, काफ़ी है, अब तुम जाओ।

डोन जुआन

सिर्फ़ एक ही, शीतल और शान्तिमय चुम्बन ...

डोना आन्ना

तुम कैसे धुन के पक्के हो! मैं इन्कार
नहीं कर सकती, ले लो चुम्बन।
यह क्या खटखट दरवाज़े पर?..
डोन जुआन, कहीं छिप जाओ।

डोन जुआन

मेरी प्यारी, विदा,
मिलेंगे हम-तुम फिर से।

(जाता है और भागता हुआ फिर लौटता है)

ओह!..

डोना आन्ना

तुम्हें हुआ क्या? क्या क़िस्सा है? ओह ...

(कमांडर का बुत भीतर आता है।
डोना आन्ना बेहोश होकर गिर जाती है)

बुत

तुमने मुझे बुलाया था, लो, मैं हूं हाज़िर।

डोन जुआन

ईश्वर मेरे! डोना आन्ना!

बुत

अब तुम उसकी चिन्ता छोड़ो,
सब समाप्त है। कांप रहे हो, डोन जुआन तुम।

डोन जुआन

कांप रहा मैं? नहीं, नहीं। मैंने
तुम्हें बुलाया था, मैं बेहद ख़ुश हूं तुम्हें देखकर।

बुत

लाओ, अपना हाथ मुझे दो।

डोन जुआन

यह लो... ओ, है कितना
सख़्त, कड़ा, इसका पाषाणी पंजा!
अरे, छोड़ दो, छोड़ो मेरा हाथ, छोड़ दो...
मेरा दम निकल जाता है, हाय,
मरा मैं – डोना आन्ना!

(दोनों ग़ायब हो जाते हैं)

१८३०

जलपरी

द्नेपर नदी का किनारा, पनचक्की

(चक्कीवाला और उसकी बेटी)

चक्कीवाला

ओह, तुम तो बुद्धू होती हो
सारी, सभी जवान युवतियां।
अगर साथ दे जाये क़िस्मत
और तुम्हें मिल जाये कोई ऊंचे पद का
व्यक्ति धनी-मानी, सम्मानित, तुम्हें चाहिये
उसे पाश में अपने कस लो।
सो भी कैसे? समझ-बूझ से
सच्चा, अच्छा तुम अपना व्यवहार दिखाकर
कभी कड़ाई, कभी प्यार के तीर चलाकर
कभी-कभी तुम कर सकती हो
हल्का-सा संकेत सगाई-शादी का भी।
लेकिन बहुत ज़रूरी है यह –
लड़की की अपनी इज़्ज़त को
सदा सुरक्षित उसको रखो
वह अमूल्य निधि,
जैसे मुंह से निकला शब्द न वापिस आता,
वैसे ही लड़की की इज़्ज़त
कभी नहीं वापिस आ सकती।
और अगर यह समझो उससे कभी न शादी हो पायेगी,

तो कम से कम
अपने या रिश्तेदारों की ख़ातिर ही कुछ
लाभ उठाना तुम्हें चाहिये।
उचित ध्यान में यह भी रखना –
"नहीं करेगा प्यार सदा वह
और न मेरी इच्छाओं को तुष्ट
करेगा!" किन्तु न ऐसा! कहां
भला तुम सोचोगी ये बातें
निजी भलाई की सब!
है महत्त्व भी इनका कोई?
तुम तो फ़ौरन अपनी अक़्ल गंवा देती हो,
बड़ी ख़ुशी से, बदले में कुछ लिये बिना ही
पूरी करती हो तुम उसकी सारी सनकें,
तत्पर रहती हो तुम दिन भर
बांहें अपनी डाले रहो गले में प्रिय के,
किन्तु तुम्हारा प्रीतम-प्यारा
सहसा लुप्त कहीं हो जाता
और चिह्न भी नज़र न आता।
ख़ाली हाथ सदा रह जातीं,
ओह, तुम सब की सब बुद्धू हो!
नहीं सैकड़ों बार कहा क्या मैंने तुमसे –
देखो बिटिया, तुम ऐसी बुद्धू मत बनना,
नहीं गंवा देना तुम इतना
बढ़िया अवसर,
नहीं प्रिंस को तुम खो देना,
व्यर्थ नष्ट मत ख़ुद को करना। –
मगर नतीजा क्या निकला है?..
अब तुम बैठी नीर बहाती रहो
निरन्तर जीवन भर यों
उसके लिये, न जो लौटेगा।

बेटी

तुम क्यों ऐसा सोच रहे हो –
क्या उसने मुझको ठुकराया ?

चक्कीवाला

क्यों मैं ऐसा सोच रहा हूं ? वह
इसलिये कि पहले कितनी बार यहां पर
हफ़्ते में वह आ जाता था ?
बतलाओ तो ? हर दिन, और कभी तो दिन में
दो-दो बार चला आता था।
लेकिन इसके बाद लगा वह
कम, कम आने – अब तो नौ दिन
बीत चुके हैं उसको देखे। बोलो,
क्या तुम कह सकती हो ?

बेटी

व्यस्त बहुत वह। क्या हैं उसको कम चिन्तायें ?
प्रिंस न चक्कीवाला, वह तो जिसके लिये करेगा
पानी उसका काम-काज सब, सारा धंधा।
वह अक्सर यह कहता रहता
उसका काम सभी कामों से
ज़्यादा मुश्किल।

चक्कीवाला

सुना करो तुम उसकी बातें।
राजकुमार कहां पर काम भला करते हैं ?
है मालूम, काम क्या उनको ? यही,

शिकार खेलने जायें लोमड़ियों का, ख़रगोशों का,
और दावतें, मौज उड़ायें,
आस-पास के राजा, राजकुमारों को नीचा दिखलायें,
तुम जैसी युवतियां ढूंढ़कर बुद्धू-भोली,
उनको फुसलायें-बहकायें।
वह ख़ुद काम करे हाथों से,
बड़ा, बहुत अफ़सोस मुझे है!
तुम यह कहतीं, मेरे लिये
काम करता है पानी!..
किन्तु मुझे तो, चैन न
दिन को, नहीं रात को:
यहां ध्यान दो, वहां ध्यान दो,
यहां मरम्मत, वहां मरम्मत,
यहां गल गया, वहां रिस रहा –
अच्छा होता, अगर प्रिंस से
तुम ले लेतीं कुछ पैसे ही
ताकि ढंग से ठीक-ठाक
इसको कर लेते
हम अपनी इस पनचक्की को।

बेटी

अरे!

चक्कीवाला

क्या है बिटिया?

बेटी

सच! मैं सुनती हूं टापें उसके घोड़े की...
वही, वही है!

चक्कीवाला

देखो बिटिया, भूल न जाना,
मैंने जो तुमको समझाया,
उसे ध्यान में अपने रखना...

बेटी

बस, वह अभी यहां आयेगा,
लो, वह आया!

(प्रिंस अन्दर आता है। सईस
उसका घोड़ा ले जाता है)

प्रिंस

नमस्कार है, मेरी प्यारी,
नमस्कार, चक्की के स्वामी।

चक्कीवाला

प्रिंस कृपानिधि,
स्वागत, स्वागत। बहुत दिनों से
देख नहीं पाये हम दोनों
ये चमकीले नयन तुम्हारे,
मैं जाता हूं, खाने को कुछ ले आता हूं।

(बाहर जाता है)

बेटी

ओह, आख़िर तो याद आ गयी तुमको मेरी,
नहीं शर्म है आती तुमको,
इतने दिन तक मुझे यातना दी है तुमने
क्रूर प्रतीक्षा ऐसे आशाहीन कराकर?
क्या-क्या ख़्याल न दिल में आये?
कैसी-कैसी शंकाओं से हृदय न कांपा?
कभी ख़्याल यह आया मन में,
शायद गिरा दिया घोड़े ने
किसी खड्ड में या दलदल में,
शायद किसी घने जंगल में
हत्या भालू ने कर डाली,
शायद तुम बीमार, प्यार से मेरे ऊबे?
शुक्र ख़ुदा का! तुम हो बिल्कुल सही-सलामत,
और प्यार भी
तुम पहले की तरह मुझे अब
भी करते हो; सच कहती मैं?

प्रिंस

पहले ही की तरह, फ़रिश्ते, मेरे प्यारे।
पहले से भी ज़्यादा प्यार तुम्हें करता हूं।

युवती

किन्तु दुखी-से तुम दिखते हो,
क्या क़िस्सा है?

प्रिंस

मैं हूं दुखी ?
तुमको यों ही ऐसे लगता – मैं प्रफुल्ल मन,
जब भी तुम्हें देख लेता हूं
रोम-रोम पुलकित हो उठता।

युवती

बात न ऐसी।
जब तुम होते हो प्रफुल्ल चित्त,
मेरी ओर भागते आते
और दूर से चिल्लाते हो – मेरी प्यारी,
कहां और तुम क्या करती हो ? इसके
बाद चूमते मुझको और पूछते –
मेरे आने पर तुम खुश हो ?
इतनी जल्दी मैं आऊंगा,
क्या तुमने यह आशा की थी ?
किन्तु आज तो – गुमसुम मेरी बात सुन रहे,
नहीं मुझे बांहों में भरते
और न मेरे नयन चूमते,
निश्चय ही तुम आज किसी कारण हो चिन्तित।
पर, किस कारण ? मुझसे तो नाराज़ नहीं हो ?

प्रिंस

नहीं चाहता ढोंग करूं मैं।
बात तुम्हारी सही – हृदय पर
आज बोझ मेरे भारी है,
जिसे न अपने प्यार-प्रेम से कर सकती हो तुम छू-मंतर
जिसे नहीं हल्का कर सकतीं, बांट न सकतीं।

युवती

पर, यह मेरे लिये बात है गहरे दुख की,
भागीदार न बन पाऊं यदि दर्द, तुम्हारे मैं इस दुख की,
तुम रहस्य अपने मन का मुझको बतलाओ।
अनुमति दोगे – तो रो लूंगी; अगर
नहीं ऐसा चाहोगे – हृदय तुम्हारा नहीं दुखाऊं,
एक बूंद भी नीर बहाकर
तो मैं ऐसा नहीं करूंगी।

प्रिंस

भला किसलिये देर करूं मैं?
जितनी जल्दी, उतना अच्छा।
मेरी प्यारी, है यह तुमको ज्ञात –
नहीं है शाश्वत कोई सुख इस जग में –
ऊंचा कुल, सुन्दरता, दौलत, शक्ति – सभी पर
पड़ जाती है छाया दुख की।
मेरी रानी, तुम मानोगी,
हम दोनों को मिला बहुत सुख,
कम से कम, मुझको तो तेरे साथ
तुम्हारे प्यार-प्रणय में
हुआ निरन्तर यह सुख अनुभव।
कुछ भी मेरे साथ न बीते अब भविष्य में
रहूं कहीं भी, मेरी रानी,
याद रहोगी मुझे सदा तुम।
मेरी क्षति की किसी तरह भी
पूर्ति न हो पाये इस जग में।

युवती

अर्थ तुम्हारे इन शब्दों का
नहीं अभी मैं समझ सकी हूं,
किन्तु अभी से हृदय धड़कता।
भाग्य हमारे लिये मुसीबत, किसी
अजाने दुख की है तैयारी करता,
शायद आई निकट जुदाई।

प्रिंस

भांप गयीं तुम
हम हों जुदा – यही भाग्य का अब निर्णय है।

युवती

कौन अलग कर सकता हमको?
क्या न तुम्हारे पीछे-पीछे
मैं जा सकती सभी जगह पर?
मैं लड़के का भेस बनाकर
रस्तों-राहों, कूच, युद्ध में,
सेवा मैं हर जगह तुम्हारी सदा करूंगी सच्चे मन से,
तुम्हें देखने का सुख पाऊं
तो न डरूंगी युद्ध, जंग से।
नहीं, मुझे विश्वास न आये,
मेरे भावों को तुम या तो परख रहे हो
या फिर केवल तुम मज़ाक़ मुझसे करते हो।

प्रिंस

मैं मज़ाक़ की आज बात भी सोच न सकता,
तुमको परखूं — नहीं ज़रूरत इसकी मुझको,
नहीं सफ़र पर जानेवाला,
नहीं युद्ध की तैयारी है —
घर पर ही मुझको रहना है,
किन्तु सदा के लिये जुदा तुमसे होना है।

युवती

हां, हां, अब मैं समझ गयी सब...
तुम शादी करनेवाले हो।

(प्रिंस चुप रहता है)

तुम शादी करनेवाले हो।

प्रिंस

क्या चारा है?
ख़ुद ही सोचो। प्रिंस नहीं आज़ाद,
न अपनी इच्छा के अनुसार चुन सकें
जीवन-साथी, जैसे तुम युवतियां चुन सको,
उन्हें दूसरों के हित में ही
और दूसरों की इच्छा से
अपनी शादी करनी पड़ती।
समय और भगवान तुम्हारे
मन के दुख को दूर करेंगे।
नहीं भुला देना तुम मुझको।
ले लो यह सिंगार की पट्टी,

याद दिलायेगी जो मेरी।
लाओ, ख़ुद तुमको पहना दूं।
और मोतियों की
माला भी मैं लाया हूं – वह भी
ले लो। यह भी ले लो – इसके
लिये पिता को तेरे वचन दिया
था। इसे सौंप देना तुम उसको।

(सोने से भरी थैली उसके हाथ में देता है)

विदा, नमस्ते।

युवती

ज़रा रुको तो – मुझको कुछ तुमसे
कहना है। पर क्या कहना,
याद न आता।

प्रिंस

याद करो तो।

युवती

तत्पर सदा तुम्हारे हित कुछ
भी करने को ... नहीं, नहीं यह ...
ज़रा रुको तुम – यह तो अच्छा
नहीं, ज़िन्दगी भर के लिये मुझे
तुम त्यागो ... किन्तु न यह भी ...
हां, हां! .. याद आ गया मुझको –
आज तुम्हारा बच्चा पहली बार
पेट में हिला-डुला था।

प्रिंस

ओह, बेचारी! लेकिन अब क्या हो सकता है?
और नहीं, तो उसकी ख़ातिर तुम
सहेजकर रखना ख़ुद को। नहीं
तुम्हें मैं और तुम्हारे बच्चे को
ही त्याग रहा हूं। कुछ अरसे
के बाद, बहुत मुमकिन है मैं
ख़ुद ही आऊंगा, तुमसे – मां-
बेटे, दोनों से मिलने। अपने मन को शान्त
करो तुम, छोटा नहीं करो मन ऐसे,
आओ, अन्तिम बार तुम्हें मैं गले लगा लूं।

(बाहर जाते हुए)

ओह! ख़त्म मामला – राहत-सी
महसूस हो रही दिल को मेरे,
थी यह शंका मुझे बड़ा तूफ़ान उठेगा,
किन्तु शान्ति से, धीरे से सब बात टल गयी।

(चला जाता है। युवती बुत बनी खड़ी रहती है)

चक्कीवाला

(भीतर आता है)

नहीं करेंगे कृपा आप भीतर चलने की...
कहां गया वह?
कहां गया वह प्रिंस हमारा, बतलाओ
तो? अरे, वाह, वाह, वाह!
क्या सिंगार की पट्टी बढ़िया!

यह हीरों से जड़ी हुई है! चमचम
करती! और मोतियों की यह
माला!.. सच कहता हूं, शाही
तोहफ़ा। बड़ा कृपानिधि प्रिंस
हमारा! यह क्या? यह क्या थैली?
क्या यह भरी हुई मुद्रा से?
तुम क्यों गुमसुम खड़ी हुई हो,
शब्द न मुंह से एक निकालो?
या अप्रत्याशित हर्ष-खुशी से
तुम तो सकते में आई हो? तुम्हें
काठ ही मार गया क्या?

बेटी

मैं विश्वास नहीं कर सकती,
ऐसा कभी नहीं हो सकता। इतना
प्यार उसे करती थी। या तो
निरा दरिन्दा है वह? या फिर उसका
दिल जंगली है?

चक्कीवाला

किसकी बात कर रही हो तुम?

बेटी

बापू मुझे बतायें, कैसे क्रुद्ध उसे मैं
कर सकती थी? या कि एक
हफ़्ते में मेरा रूप लुट गया?
या फिर किया किसी ने उसपर
जादू-टोना, औ' बहकाया?

चक्कीवाला

कैसी बातें तुम करती हो ?

बेटी

बापू मेरे, चला गया वह।
सुनते हो घोड़े की टापें !
मैं भी पगली, उसे न रोका,
लिपटी नहीं छोर, दामन से उसके,
नहीं लगामों से घोड़े के उसके लटकी।
अच्छा होता वह झल्लाकर
कुहनी तक मेरी बांहों को काट गिराता
घोड़े के पैरों के नीचे रौंद मिटाता !

चक्कीवाला

तुम पगलों-सी बातें करती !

बेटी

तुम तो नहीं जानते बापू,
प्रिंस नहीं आज़ाद, जिस तरह
हमें युवतियों को आज़ादी,
नहीं हृदय, मन की इच्छा
से शादी करते ... पर
ज़रूर आज़ादी उनको
यह तो, हमको वे बहकायें,
कसमें खायें, नीर बहायें और
कहें यह – तुमको ले जाऊंगा
अपने दुर्ग, महल में, उजले-उजले

गुप्त कक्ष में, और
सजा दूंगा मैं तुमको लाल-लाल
मख़मल, गोटे से और ज़री से।
उनको है आज़ादी हमें सिखायें यह सब —
अर्ध-रात्रि को उनकी सीटी सुन हम जागें
और भोर होने तक उनके संग बैठ चक्की पर
प्रेमालाप करें पगली-सी
उनको है आज़ादी पीड़ा-दर्द हमें दे,
राजकुमारों के वे अपने दिल बहलायें,
और कहें फिर, जाओ प्यारी,
जहां तुम्हारा अब मन चाहे
प्यार करो, जिसको भी चाहो।

चक्कीवाला

मैं अब समझा, यह क़िस्सा है।

बेटी

लेकिन कौन मंगेतर उसकी?
किसके लिये मुझे अब उसने
त्याग दिया है? मैं सब यह मालूम
करूंगी और कहूंगी उस दुष्टा से
रहो प्रिंस से दूर, परे ही
एक म्यान में दो तलवारें नहीं समातीं।

चक्कीवाला

तुम उल्लू हो!
प्रिंस अगर शादी ही करना चाह रहा है,
कौन रोक सकता है उसको? मज़ा मिल गया।
नहीं कहा था क्या तुमसे यह मैंने पहले...

बेटी

और हुआ यह साहस उसको
भले व्यक्ति की भांति विदा वह मुझसे ले ले,
दे मुझको उपहार – कि सो भी कैसे-कैसे !
वह नक़दी भी ! दोष-मुक्त अपने को उसने करना चाहा,
चांदी-सोने से ज़बान मेरी बन्द करना,
ताकि युवा पत्नी तक उसकी पहुंच न पाये
उसके बारे में बदनामी।
और अरे हां, भूल गयी मैं तुमको देना
यह चांदी, जो उसने कहा तुम्हें मैं दे दूं,
क्योंकि बहुत नेकी का उसके साथ रहा व्यवहार तुम्हारा।
नहीं कड़ाई से रोका अपनी बेटी को
खुली छूट दी उसके चक्कर में पड़ने की...
मेरा नाश बनेगा अब वरदान तुम्हारा।

(उसे थैली देती है)

पिता

(आंसू बहाते हुए)

यह दिन भी था बदा भाग्य में मुझे देखना।
क्या सुनने को विवश हुआ मैं।
शर्म करो कुछ, ऐसी बातें कहो पिता से, लाज न आती।
एक तुम्हीं तो मेरी बिटिया इस दुनिया में,
सिर्फ़ तुम्हीं तो खुशी बुढ़ापे की मेरी हो।
लाड़-प्यार से तुम्हें बिगाड़े बिना भला मैं कैसे रहता ?
दण्ड इसी का अब ईश्वर ने मुझे दिया है,
क्योंकि निभाया बुरी तरह कर्त्तव्य पिता का।

बेटी

ओह, घुटा जाता दम मेरा!
एक सांप ठण्डा-सा मेरी मानो गर्दन घोंट रहा है...
नहीं मोतियों की यह माला
एक सांप गर्दन में मेरी रेंग रहा है।

(मोतियां की माला तोड़कर फेंकती है)

चक्कीवाला

होश करो तुम।

बेटी

ऐसे ही कर देती टुकड़े-टुकड़े तेरे, अरी कमीनी नागिन,
जिसने छीन लिया है मुझसे मेरा प्रियतम-प्यारा।

चक्कीवाला

सच, दिमाग़ चल निकला तेरा।

बेटी

(सिंगार-पट्टी उतारती है)

यह है मेरा मुकुट,
मुकुट मेरी लज्जा का! धूर्त्त शत्रु ने
मुकुट यही रखा था उस क्षण मेरे सिर पर,
जब मैंने इन्कार किया था
उस सब से, जो मुझे बहुत पहले प्यारा था।

अब वे रिश्ते टूट चुके हैं –
मेरे ताज-मुकुट अब जाओ, तुम भी जाओ! सदा-सदा को!

(सिंगार-पट्टी को द्नेपर नदी में फेंक देती है)

अब तो सब कुछ ख़त्म हो गया ...

(नदी में कूद जाती है)

बूढ़ा

(गिरते हुए)

हाय, कहीं का नहीं रहा मैं,
नहीं रहा मैं, हाय कहीं का।

राज महल

(शादी हो रही है। दूल्हा-दुलहन दावत की
मेज़ पर बैठे हैं। मेहमान। युवतियों का सहगान)

बिचवइया

बड़ी धूम से शादी अभी मनायी हमने।
नवदम्पति का करती हूं मन से अभिनन्दन।
बहुत प्यार से, हेल-मेल से, जीती रहे जुगों यह जोड़ी,
और दावतें हम भी अक्सर यहां उड़ायें।
री सुन्दरियो, गाना बन्द किया क्यों तुमने?
क्यों है तुमने चुप्पी साधी?
या फिर गीत तुम्हारे सारे ख़त्म हो गये?
या गा-गाकर कण्ठ तुम्हारे सूख गये हैं?

सहगान

बिचवइया, री, बिचवइया
ओ री बुद्धू बिचवइया!
दुलहन जब लाने गये
बागीचे में जा घुसे,
पीपा रखा बियर भरा
वह बग्घी ने दिया गिरा,
भीग गयी क्यारी-क्यारी
यों पत्तागोभी सारी,
किया बाड़ को भी टेढ़ा
फाटक से अनुरोध किया –
फाटक-खम्भे राह बता
दुलहन लाने का रस्ता,
बिचवइया अनुमान लगा
कर थैली की ओर बढ़ा,
उसमें सिक्कों की खन-खन
करे हमारा व्याकुल मन।

बिचवइया

अरी दुष्ट लड़कियो, ख़ूब यह गीत चुना!
ये लो पैसे और न तुम मुझको कोसो।

(लड़कियों को पैसे देती है)

एक स्वर

कंकड़ियों में, पीले-पीले बालू में
नदिया एक बहे कल-छल,
तेज़ नदी में छोटी-छोटी दो मीनें,

छोटी-छोटी घूमें दो मीनें चंचल।
एक दूसरी से यह पूछे, बहन बता
जो कुछ हुआ नदी में, उसका तुम्हें पता?
एक सुन्दरी कल नदिया में डूब मरी
मरते-मरते वह प्रेमी को कोस रही?

बिचवइया

री सुन्दरियो! यह भी क्या गाना गाया?
यह शादी का गीत नहीं है, नहीं, नहीं।
किसने ऐसा गीत चुना है? बतलाओ।

लड़कियां

मैंने नहीं—नहीं, मैंने भी—
नहीं किसी ने हममें से तो...

बिचवइया

किसने गाया है इसको?

(लड़कियों में खुसर-फुसर और घबराहट)

प्रिंस

ज्ञात मुझे यह।

(मेज़ से उठकर धीरे से सईस से बात करता है)

वह चोरी से यहां आ गयी।
जल्दी उसे खदेड़ो बाहर।
और करो मालूम कि किसने
की हिम्मत, दी अनुमति उसको भीतर आये।

(सईस लड़कियों के पास जाता है)

पुश्किन बचपन में। लघु-चित्र।
१९वीं शताब्दी का आरम्भ।

पुश्किन के जन्म-वर्ष में मास्को ऐसा था। क्रेमलिन के चूदोव मठ की झांकी। उत्कीर्णन चित्र। १७६६।

सेर्गेई पुश्किन (१७७०–१८४८)। कवि के पिता। रंगीन खड़ियों द्वारा बनाया गया चित्र। १८१०।

नदेज्दा पुश्किना, गन्निबाल की पोती (१७७५–१८३६)। कवि की मां। लघु-चित्र। १९वीं शताब्दी का आरम्भ।

१३ वर्ष की आयु में पुश्किन। उत्कीर्णन चित्र, जो 'काकेशिया का क़ैदी' खण्ड-काव्य के प्रथम संस्करण के साथ छापा गया। १८२२।

वसीली पुश्किन (१७६७–१८३०)। कवि। अलेक्सान्द्र के चाचा। १८११ में वे पुश्किन को कुलीनों के विशेष विद्यालय में शिक्षा पाने के लिये मास्को से पीटर्सबर्ग ले आये।
लियोग्राफ़। १८१०-२०।

येकातेरीना बाकूनिना (१७९५–१८६९)। कुलीन विद्यालय में पुश्किन के मित्र की बहन। कवि का प्रथम प्रणय। विद्यालय के समय की तीस से अधिक कवितायें इसी को समर्पित हैं। १८१०-२० का चित्र।

पीटर्सबर्ग के निकट त्सारस्कोये सेलो में येकातेरीनीन्स्की महल। इसके बायें बाजू में वह कुलीन विद्यालय स्थित था, जहां पुश्किन पढ़ते थे। लिथोग्राफ़। १८२२।

अन्तोन देल्विग (१७६८–१८३१)। कुलीन विद्यालय का एक साथी। कवि। पुश्किन के एक सबसे घनिष्ठ और प्रिय मित्र। लिथोग्राफ़। १८३१।

इवान पूश्चिन (१७६६–१८५६)। कुलीन विद्यालय में पुश्किन का एक घनिष्ठतम मित्र – "मेरे सबसे पहले, मेरे सबसे प्यारे मित्र।" दिसम्बर-वादियों के विद्रोह में भाग लेने के कारण पूश्चिन को साइबेरिया में निर्वासित किया गया। लिथोग्राफ़। १८२०-३०।
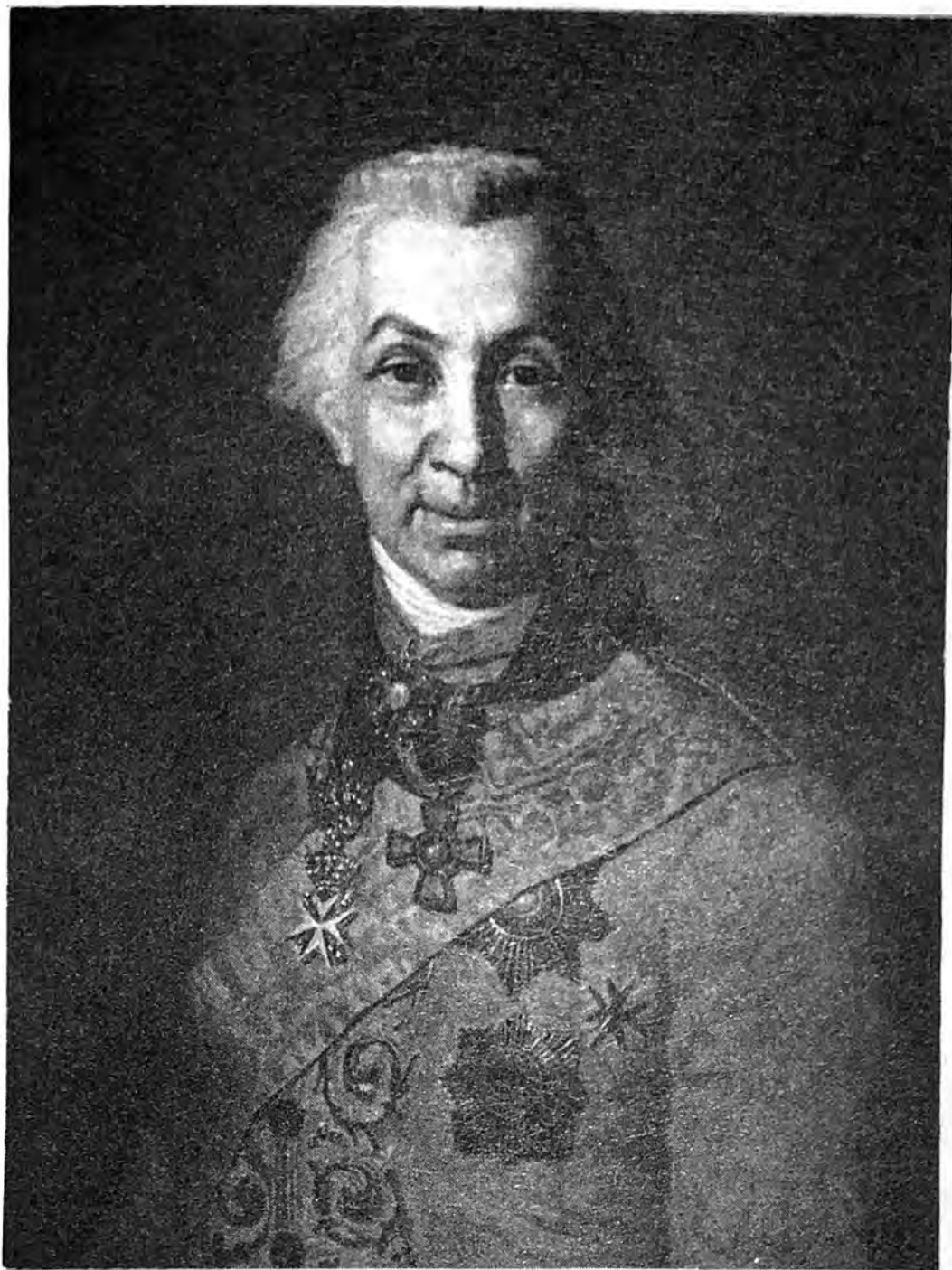
गावरिईल देर्जाविन (१७४३–१८१६)। १८वीं शताब्दी के प्रसिद्ध रूसी कवि। १८१५ में कुलीन-विद्यालय की अन्तिम परीक्षा में उन्होंने युवा पुश्किन को "आशीर्वाद" दिया। बोरोविकोव्स्की द्वारा बनाया गया छविचित्र। १८११।

१८१५ में कुलीन विद्यालय की अन्तिम परीक्षा में कविता-पाठ करते हुए पुश्किन। रेपिन द्वारा बनाया गया चित्र। १९११।

कोन्स्तान्तीन बात्युश्कोव (१७८७-१८५६)। कवि, जिन्होंने युवा पुश्किन के कृतित्व को प्रभावित किया। उत्कीर्णन चित्र। १८२१।

वासीली जुकोव्स्की (१७८३–१८५२)। कवि, पुश्किन से उम्र में बड़े उनके समकालीन और मित्र। १८२० में उन्होंने पुश्किन को अपना छविचित्र भेंट किया जिसपर लिखा हुआ था – "विजित गुरु से विजेता शिष्य को।" लिथोग्राफ़। १८२०।

बेटे को गोद में लिये हुए मारिया वोल्कोन्स्काया (१८०५–१८६३)। जनरल रायेव्स्की की बेटी और दिसम्बरवादियों के विद्रोह में भाग लेनेवाले प्रिंस सेर्गेई वोल्कोन्स्की की पत्नी। मारिया वोल्को-न्स्काया ने १८२६ में अपने अभिजातीय अधिकारों को त्याग दिया और पति के पीछे-पीछे साइबेरिया चली गयी। पुश्किन युवा मारिया को प्यार करते थे और इस नारी के नागरिक पराक्रम के बड़े प्रशंसक थे। चित्रकार प० सोकोलोव द्वारा जलरंगों द्वारा १८२६ में बनाया गया चित्र।

येलीज़ावेता वोरोन्त्सोवा (१७९२–१८८०)। काउंट वोरोन्त्सोव की पत्नी। पुश्किन ने तीसरे दशक में अपनी अनेक प्रेम-कवितायें इसी को समर्पित करते हुए रचीं। उत्कीर्णन चित्र। १८२९।

वेरा व्याज़ेम्स्काया (१७९०–१८८६)। प्रिंस व्याज़ेम्स्की की पत्नी। कवि की बड़ी मित्र। लघु-चित्र। १८०९।
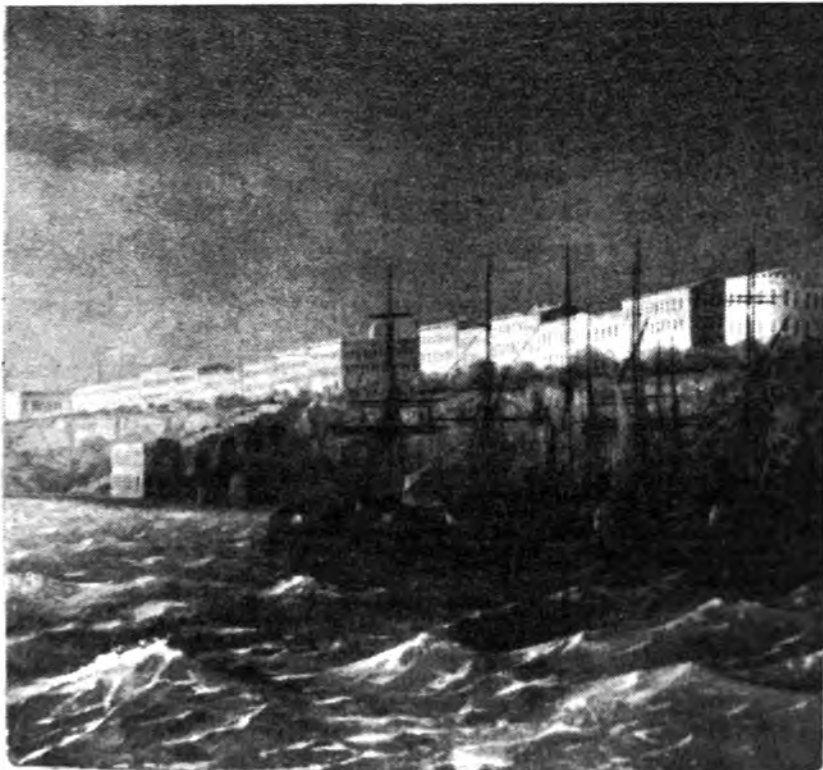
ओदेस्सा। पुश्किन यहां १८२३–१८२४ में रहे। चित्रकार आइवाज़ोव्स्की द्वारा बनाया गया चित्र। १८४०-५०।

मिख़ाइलोव्स्कोये गांव, यहीं कवि की मां की जागीर थी। पुश्किन दो साल से अधिक समय तक यहां निर्वासित रहे। लिथोग्राफ़। १८३७।

पुश्किन की आया अरीना रोदिओनोव्ना (१७५८-१८२८) गन्निबाल परिवार की भू-दास किसान-नारी, जिसे १७९९ में भू-दासता से मुक्ति मिली थी। साधारण लोगों के बीच मे आयी इस गुणवती नारी को अनेक गीत, दन्तकथायें और क़िस्से-कहानियां याद थे, जिनका कवि ने अपने कृतित्व में उपयोग किया। पुश्किन ने उसे "मेरे बुरे दिनों की माथी, मधुर मंगिनी बुढ़िया प्यारी, जीर्ण-जरा" कहा है। उद्‌भृत चित्र। १८४०-५०।

१८२६ में इवान पूश्चिन कवि के यहां मिखाइलोव्स्कोये में।
गे द्वारा बनाया गया चित्र। १८७५।

आन्ना केर्न (१८००-१८७६)। सुन्दरी, जिसपर पुश्किन मुग्ध हो गये थे। पुश्किन द्वारा १८२६ में बनाया गया रेखाचित्र।
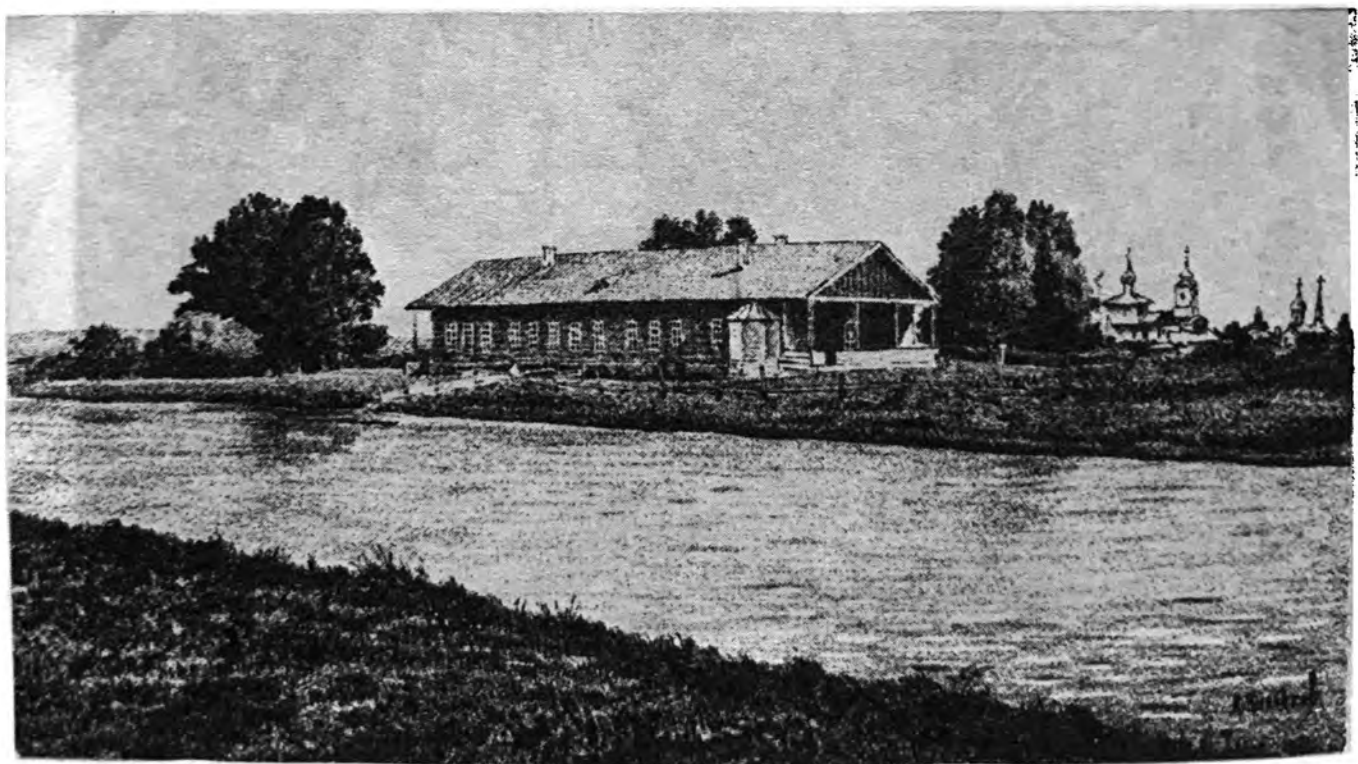
त्रिगोर्स्कोये में ओसिपोव परिवार का घर। पुश्किन यहां अपने मित्रों के पास अक्सर आते थे। लिथोग्राफ़। १८६६।

विल्हेल्म क्यूखेलबेकर (१७६६–१८४६)। कवि, कुलीन विद्यालय के दिनों से पुश्किन का मित्र। दिसम्बरवादियों के विद्रोह में भाग लेने के कारण दस साल तक दुर्ग-जेल में रहा और बाद में उसे साइबेरिया में निर्वासित कर दिया गया, जहां अन्धा होकर मर गया। १८१४ में पुश्किन की पहली प्रकाशित कविता 'कवि मित्र के प्रति' इसी को सम्बोधित थी। उत्कीर्णन चित्र। १६वीं शताब्दी का अन्त।

कोन्द्राती रिलेयेव (१७६५–१८२६)। कवि। दिसम्बरवादियों के गुप्त संगठन के नेता के रूप में उसे फांसी पर लटकाया गया। लघु-चित्र। १८२०-३०।

१४ दिसम्बर १८२५ को पीटर्सबर्ग के सिनेट चौक में दिसम्बर-वादियों का विद्रोह। जलरंग। १८२५।

पुश्किन की हस्तलिपि का काग़ज़, जिसपर दिसम्बरवादियों के रेखाचित्रों के साथ ये शब्द लिखे हुए हैं – "मैं भी ऐसे ही हो सकता था..." १८२६।

ज़िनाईदा वोल्कोन्स्काया (१७९२–१८६२)। कवयित्री, स्वरकार और गायिका। तीसरे दशक में पुश्किन अक्सर मास्को के इसके प्रसिद्ध सैलून में जाया करते थे। उत्कीर्णन चित्र। १८१४।

मास्को। त्वेरस्कोई बुलवार। लिथोग्राफ़। १८३०-४०।

मास्को। बोल्शाया निकीत्स्काया सड़क। लिथोग्राफ़। १८३०-४०।

अलेक्सान्द्रा मुराव्येवा (१८०४–१८३२)। दिसम्बरवादी निकीता मुराव्योव की पत्नी, जो निर्वासित जीवम बिताने के लिये पति के पीछे-पीछे साइबेरिया चली गयी। पुश्किन ने उसी के हाथ अपनी प्रसिद्ध कविता 'साइबेरिया को सन्देश' भेजी। लिथोग्राफ़। १८२६।

पुश्किन के रेखाचित्रों सहित 'जिप्सी' खण्ड-काव्य की पाण्डुलिपि। १८२३।

पीटर्सबर्ग में १८२४ की बाढ़, जिसका पुश्किन ने अपने 'तांबे के घुड़सवार' में वर्णन किया है। उत्कीर्णन चित्र। १८२४।

पीटर्सबर्ग। पीटर प्रथम के स्मारक के दृश्य के साथ सिनेट चौक। रंगीन उत्कीर्णन चित्र। १८०६।

पुश्किन के रेखाचित्रों सहित उनकी 'पाषाणी अतिथि' काव्य-नाटिका की पाण्डुलिपि। १८३०।

पुश्किन के रेखाचित्रों सहित 'सोने का मुर्ग़ा' काव्य-कथा का मुखावरण। १८३४।

प्रिंस

(बैठ जाता है, अपने आप से कहता है)

ऐसा हल्ला-गुल्ला वह तो शायद यहां करेगी,
डूब शर्म से मैं जाऊंगा,
जगह न छिपने की पाऊंगा।

सईस

मैं तो उसको ढूंढ़ न पाया।

प्रिंस

ढूंढ़ो उसको। मुझको यह मालूम,
यहां वह। उसने ही यह गाना गाया।

अतिथि

बढ़िया-मदिरा!
सिर से पैरों तक जो देती है मस्ती –
लेकिन यह अफ़सोस कि कड़वी –
बुरा नहीं, यदि यह कुछ मीठी हो जाये।

(नवदम्पति एक-दूसरे को चूमते हैं।
धीमी-सी चीख़ सुनाई देती है)

प्रिंस

ठीक, वही है! जलन भरी यह
चीख़ उसी की!

(सईस से)

लगा पता कुछ?

सईस

नहीं मिली वह मुझे कहीं भी।

प्रिंस

तुम उल्लू हो।

दूल्हे का मित्र

(उठते हुए)

क्या न समय हो गया कि दूल्हा-दुलहन अब आराम करें,
शयन-कक्ष के दरवाज़े पर
हॉप-पत्तियां हम बिखरा दें?

(सब उठकर खड़े हो जाते हैं)

बिचवइया

सचमुच इसका समय हो गया।
मुर्ग़ परोसा जाये अब तो।

(युवा दम्पति के सामने तला हुआ मुर्ग़ परोसा जाता है,
इसके बाद दरवाज़े पर हॉप-पत्तियां बिखरायी जाती
हैं और उन्हें शयन-कक्ष में ले जाया जाता है)

बिचवइया

प्रिंसेस प्यारी, तुम मत रोओ और डरो मत,
बात प्रिंस की सदा मानना।

(नवदम्पति शयन-कक्ष को जाते हैं,
अतिथि अपने घरों को चले जाते हैं,
केवल बिचवइया और दूल्हे का मित्र ही रह जाते हैं)

दूल्हे का मित्र

जाम कहां है मेरा ?
सारी रात मुझे घोड़े पर
चढ़कर देना होगा पहरा इनकी ही खिड़की के नीचे,
इसीलिये पी सुरा स्वयं को गर्माना कुछ नहीं बुरा है।

बिचवइया

(जाम में सुरा भरती है)

लो तुम पियो, मज़े से इसको।

दूल्हे का मित्र

ओह ! धन्यवाद है।
बहुत ढंग से, सच है, सारा काम हो गया ?
खूब रही बढ़िया दावत भी।

बिचवइया

ईश कृपा से सब कुछ अच्छा रहा –
बात बस, एक खटकती।

दूल्हे का मित्र

वह क्या ?

बिचवइया

गाना एक किसी ने गाया यहां बुरा-सा,
नहीं ब्याह-शादी का गाना,
ईश्वर जाने, क्या गाना था।
बुरा शकुन।

दूल्हे का मित्र

ये चंचल, शैतान लड़कियां – सदा
शरारत करने को तत्पर रहती हैं!
यह भी कोई बात प्रिंस की शादी में ये
जान-बूझकर हरकत कोई बुरी करें यों!
ख़ैर, चलूं मैं, घोड़े पर होता सवार हूं।
तो अब विदा, सहेली प्यारी।

(बाहर जाता है)

बिचवइया

ओह, दिल बैठा जाता मेरा!
नहीं शुभ घड़ी में सम्पन्न हुई यह शादी।

प्रिंसेस का कमरा

(प्रिंसेस और उसकी आया)

प्रिंसेस

मुझको लगता, बिगुलों की आवाज़ सुनाई देती मुझको,
नहीं, अभी तक नहीं लौटकर वह आया है।
आया प्यारी, जब तक मेरी शादी
उससे नहीं हुई थी
वह हर समय निकट तब मेरे ही रहता था
मुझे देखते हुए नहीं थी दृष्टि अघाती,
शादी होते ही मानो सब बदल गया है।
मुझे जगा देता है अब वह सुबह-सुबह ही
और हुक्म देता सईस को ज़ीन कसा जाये घोड़े पर;
रात्रि समय तक ईश्वर जाने
कहां-कहां फिरता रहता है;
घर आता है, भूले-भटके

औ' वह मुझसे शब्द प्यार का
कोई कहता, शायद ही वह
कभी प्यार से मेरा गोरा मुख सहलाता।

आया

मेरी प्यारी राजकुमारी, मर्द कि जैसे मुर्ग़ा होता –
कुकड़ूं-कूं कह, पंख हिलाता
दूर कहीं पर वह उड़ जाता।
पर नारी, बेचारी मुर्ग़ी
बैठी-बैठी अंडे सेती, चूज़े अपने पाला करती।
शादी होने से पहले वह
घण्टों-घण्टों बैठा रहता
खाने-पीने का भी उसको होश न रहता,
देख-देखकर उसकी नज़रें नहीं अघातीं:
शादी होते ही कामों की बाढ़ उमड़ती।
हमसायों के घर जाना भी बहुत ज़रूरी,
लेकर बाज़ कहीं जंगल में
वह शिकार को भी जायेगा,
या फिर भूत युद्ध का मानो
उसके सिर पर चढ़ जायेगा,
यहां, वहां भटकेगा, घर में टिककर
मगर, नहीं बैठेगा वह तो।

प्रिंसेस

क्या है ख़्याल तुम्हारा? उसकी
नहीं प्रेमिका गुप्त कहीं पर?

आया

होगा पाप सोचना ऐसा –
किससे वह तुमको बदलेगा ?
सभी तरह के गुण हैं तुममें –
अनुपम रूप, मिलनसारी, औ' सूझ-बूझ भी।
ख़ुद ही सोचो –
तुम्हें छोड़कर कहां मिलेगी
उसको ऐसी खान गुणों की ?

प्रिंसेस

जाने कब भगवान सुनेगा बिनती मेरी
और मुझे वह देगा बच्चे !
तब मैं फिर से अपने पति को
कस लूंगी नूतन बन्धन में...
अरे ! अहाते में दिखते हैं जमा शिकारी।
पति मेरा घर पर लौटा है।
नज़र न लेकिन वह क्यों आता ?

(एक शिकारी भीतर आता है)

प्रिंस कहां हैं ?

शिकारी

हमें दिया यह हुक्म कि हम सब
घर को लौटे।

प्रिंसेस

स्वयं कहां हैं प्रिंस, बताओ ?

शिकारी

स्वयं अकेले रुके द्नेपर तट पर, वन में।

प्रिंसेस

और आप लोगों ने उनको
वहां अकेले छोड़ दिया है;
अच्छे स्वामी-भक्त आप हैं!
इसी समय, फ़ौरन सरपट
घोड़ा दौड़ाते वापस जायें!
उन्हें बतायें, मैंने भेजा वहां आपको।

(शिकारी बाहर जाता है)

ईश्वर मेरे! रात्रि समय वन में होते हैं
हिंसक पशु, औ' चोर-लुटेरे,
भूत-प्रेत भी – किसी घड़ी भी
वहां मुसीबत आ सकती है।
शीघ्र जलाओ दीप देव-प्रतिमा के सम्मुख।

आया

अभी जला देती हूं, प्यारी, अभी, अभी...

द्नेपर नदी। रात का समय

जलपरियां

हम प्रफुल्ल मन बाहर आतीं
रजनी में तल से,
शशि-किरणें हमको गर्मातीं

अपने अंचल से।
कभी रात्रि को अच्छा लगता
नद-तल से बाहर आना,
अच्छा लगता शान्त सतह को
चीर-चीर बढ़ते जाना,
एक-दूसरी को जब टेरें
और हवा को गुंजाना,
हरे-हरे नम बाल सुखाना
उन्हें झाड़ना, फटकाना।

एक जलपरी

सावधान, सब। वहां झाड़ियों के नीचे तो
कोई छिपा हुआ है मुझको ऐसा लगता।

दूसरी जलपरी

चांद और जल-बीच धरा पर
कोई सचमुच घूम रहा है।

(छिप जाती हैं)

प्रिंस

ये उदास-से स्थान बहुत ही परिचित मेरे,
आस-पास का सब कुछ मैं पहचान रहा हूं—
यह मेरे सम्मुख पनचक्की! अब
जर्जर है, खण्ड-खण्ड है,
मधुर शोर इसके पहियों का मूक हो गया,
पाट नहीं चलता चक्की का—
शायद बूढ़ा भी दुनिया में नहीं रहा अब।

और शोक में बेटी के भी बहुत दिनों तक
आंसू नहीं बहा पाया वह।
एक यहां पर पगडंडी थी – वह भी ग़ायब,
शायद एक ज़माने से इस जगह नहीं कोई आया है;
था छोटा-सा यहां बग़ीचा
जिसके चारों ओर बाड़ थी –
घने झाड़-झंखाड़ उगे क्या इसी जगह पर?
आह, बलूत का पेड़ यही वह; जिससे स्मृतियां जुड़ी हुई हैं,
यहीं मुझे बांहों में भरकर
शिथिल-शिथिल वह मूक हुई थी...
क्या ऐसा सब हुआ कभी था?..

(वृक्ष की ओर जाता है। पत्ते झड़कर गिरते हैं)

पत्ते सहसा पीले होकर मुड़े-मुड़ाये
सरसर करते मेरे ऊपर गिरे राख की भांति सभी वे,
पातहीन, काला-सा अब यह वृक्ष खड़ा है
यह मानो अभिशप्त अकेला मेरे सम्मुख।

(चिथड़े पहने अध-नंगा बूढ़ा आता है)

बूढ़ा

नमस्ते,
नमस्ते, दामाद।

प्रिंस

कौन हो तुम?

बूढ़ा

मैं यहां रहनेवाला कौवा।

प्रिंस

क्या यह सम्भव? यह तो चक्कीवाला।

बूढ़ा

कैसा चक्कीवाला!
उन भुतनों को बेची चक्की,
जो रहते अलाव के पीछे,
बेटी जिसको मैं कहता हूं,
उसी जलपरी को सब पैसे दिये, सहेजे।
द्नेपर के बालू में वे सब दबे हुए हैं
एक आंख वाली मछली रखवाली उनकी करती है।

प्रिंस

यह क़िस्मत का मारा तो विक्षिप्त हो गया।
इसके भाव-विचार इस
तरह बिखरे-बिखरे, जैसे
मेघ बिखर जाते हैं प्रबल बवंडर के आने पर।

बूढ़ा

कल क्यों यहां नहीं तुम आये?
हमने बढ़िया दावत की थी, बहुत
देर तक देखी हमने राह तुम्हारी।

प्रिंस

किसने देखी राह यहां पर मेरी?

बूढ़ा

किसने? ज़ाहिर है, मेरी बेटी ने।
है तुमको मालूम, नहीं है कुछ भी
मुझसे छिपा यहां पर
देता हूं आज़ादी तुमको दोनों, बेशक
बैठे रहो यहीं रात भर, पौ फटने तक,
नहीं कहूंगा एक शब्द भी।

प्रिंस

ओह, बेचारा चक्कीवाला!

बूढ़ा

अरे, नहीं मैं चक्कीवाला!
कह तो दिया कि मैं कौवा हूं,
और नहीं हूं चक्कीवाला।
वह अजीब-सी बात हुई थी –
जब वह कूदी (तुम्हें याद है?)
नदी-धार में, मैं भी उसके
पीछे भागा, मैंने चाहा कूदूं
मैं चट्टान उसी से, किन्तु
किया यह सहसा अनुभव,
दो सशक्त डैने उग आये
मेरी बग़लों के नीचे से
और उन्हींने मुझे हवा में
थामे रक्खा। उस दिन से
मैं कभी यहां, तो कभी वहां
उड़ता फिरता हूं, कभी चोंच
से मरी गाय को नोचा करता,
कांय-कांय करता रहता हूं
बैठ क़ब्र पर कभी-कभी मैं।

प्रिंस

यह तो बात बहुत ही दुख की !
कौन तुम्हारी चिन्ता करता ?

बूढ़ा

देख-भाल मेरी की जाये, बुरा नहीं यह।
मैं बूढ़ा हो गया, शरारत भी करता हूं।
धन्यवाद है, मेरी
चिन्ता करती है जलपरी बालिका !

प्रिंस

कौन ?

बूढ़ा

मेरी नातिन।

प्रिंस

सम्भव नहीं समझ पाना तो इसकी बातें।
बूढ़े, या तो इस जंगल में,
तुम भूखे ही मर जाओगे या
फिर कोई दुष्ट दरिन्दा
तुम्हें चीरकर खा जायेगा।
नहीं चाहते मेरे साथ चलो,
औ' मेरे साथ रहो तुम ?

बूढ़ा

साथ तुम्हारे रहूं महल में? नहीं, नहीं! आभारी हूं मैं!
फुसलाकर ले जाओगे, फिर,
शायद डाल गले में मेरे मोती-माला
मेरा गला घोंट डालोगे।
जबकि यहां पर मैं जीवित हूं,
पेट भरा है, मैं स्वतंत्र हूं।
नहीं चाहता महल तुम्हारे में मैं जाना।

(चला जाता है)

प्रिंस

मैं ही इस सारे क़िस्से की जड़ हूं! अपराधी हूं!
बड़ी भयानक बात किसी का पागल होना।
मर जाना ही उससे अच्छा।
मृतकों के प्रति हम
सब ही आदर दिखलाते,
उनके लिये प्रार्थना करते।
मौत बराबर सबको करती।
किन्तु बुद्धि से वंचित व्यक्ति
न मानव रहता।
वाक्-शक्ति भी उसके लिये व्यर्थ
ही होती, शब्दों पर अधिकार
नहीं उसका रहता है।
उसे दरिन्दे अपने जैसा अनुभव करते,
लोगों का उपहास-पात्र
वह बन जाता है, मनमाना
व्यवहार लोग उससे करते हैं,
ईश्वर भी उसकी बातों का बुरा न माने।

बदक़िस्मत बूढ़ा बेचारा! उसे
देखकर पश्चाताप-व्यथा से
मेरा हो उठता संतप्त हृदय है!

शिकारी

आप यहां हैं। खोज आपको कितनी
मुश्किल से हम पाये।

प्रिंस

आप यहां पर क्यों आये हैं?

शिकारी

प्रिंसेस ने भेजा है हमको,
वे चिन्तित हो रहीं आपके लिये बहुत ही।

प्रिंस

उसकी ऐसी चिन्ता तो
असह्य हो रही। क्या वह
मुझे समझती बालक?
एक क़दम भी जो आया के
बिना नहीं चल सकता है?

(जाता है। जलपरियां पानी के ऊपर
दिखाई देती हैं)

जलपरियां

क्या विचार है, बोलो बहनो! घेर न लें
क्या अब हम उनको
जल्दी-जल्दी आगे जाकर?
और डरायें घोड़े उनके, छप-छप
करके, अट्टहास से
और सीटियां तेज़ बजाकर?

देर हो चुकी अब तो बहनो।
हुआ अंधेरा वन-कुंजों में
जल-तल ठण्डा होता जाता,
निकट गांव में मुर्ग़े अब देते हैं बांगें
और चांद भी सोता जाता।

एक जलपरी

बहन, यहां पर और रुकें हम।

दूसरी जलपरी

नहीं, नहीं, चलना ही हितकर
जोहे रानी बाट हमारी
बहुत कड़ी वह बहन हमारी।

(लुप्त हो जाती हैं)

द्नेपर नदी का तल

(जलपरियों का महल।
जलपरियां अपनी सम्राज्ञी के
निकट बैठी सूत कात रही हैं)

बड़ी जलपरी

बहनो, छोड़ो सूत कातना। सूरज डूबा।
एक स्तम्भ-सी, जल के ऊपर
अब शशि-किरणें चमक रही हैं।
बहुत हो चुका कामकाज भी,
ऊपर जाओ, नभ-छाया में
खेलो-कूदो, मौज मनाओ।
किन्तु किसी को कष्ट न देना आज तनिक भी,
राहगीर से छेड़-छाड़ तुम करो,
न ऐसी हिम्मत करना,
नहीं जाल में मछुओं के तुम
पनझाड़ी या घास फंसाना
नहीं किसी बालक को तुम
मीनों के क़िस्से सुनासुनाकर
भरमाकर जल में ले आना।

(जलपरी-बाला भीतर आती है)

कहां गयी थीं?

बेटी

बाहर थल पर, मैं अपने
नाना से मिलने। हर दिन
वे अनुरोध यही करते रहते हैं,

नद-तल से मैं उन्हें ढूंढ़ सब पैसे ला दूं,
कभी उन्होंने जो फेंके थे पास हमारे।
बहुत देर तक रही ढूंढ़ती मैं तो उनको,
क्या होते हैं पैसे, मैं यह नहीं जानती,
लेकिन मैंने उनको ला दीं
मुट्ठी भरकर, रंग-बिरंगी, चमचम करती हुई सीपियां।
बहुत हुए ख़ुश वे पा उनको।

जलपरी

वह कंजूस, लालची पागल!
बिटिया, मेरी बात सुनो तुम।
बस, तुमसे ही आशा करती। एक पुरुष आयेगा
आज हमारे तट पर। राह देखना उसकी,
उससे मिलने जाना।
उससे बहुत निकट का है सम्बन्ध हमारा,
जानो, वह है पिता तुम्हारा।

बेटी

यह है वही, कि जिसने तुमको त्याग दिया था
और किसी नारी से जिसने ब्याह किया था?

जलपरी

ठीक वही है। बड़े स्नेह से
तुम उसका अभिवादन
करना और बताना वह सब कुछ ही,
मुझसे अपने जन्म-विषय में
तुम जो कुछ भी जान सकी हो;

मेरी जीवन-गाथा भी तुम उसे सुनाना।
और अगर वह पूछे, उसको भूल गयी
हूं या कि नहीं मैं, तो यह
कहना – मेरे मन में सदा बसे वह,
प्यार उसे अब भी करती हूं
और बाट मैं जोह रही
उसके आने की। समझ गयीं तुम?

बेटी

समझ गयी, मां।

जलपरी

तब तुम जाओ।

(स्वगत)

उस दिन से,
जब मैं तो अपनी सुध-बुध खोकर
अति हताश, अपमानित युवती
कूद गयी थी गहरे जल में,
और होश आया था मुझको द्नेपर तल में
एक जलपरी बन कठोर औ' साहसवाली
सात बरस का लम्बा अर्सा बीत चुका है –
हर दिन ही यह रही सोचती –
कैसे उससे मैं बदला लूं...
मुझको लगता, आखिर आज घड़ी वह आयी।

तट

प्रिंस

मुझे एक अज्ञात शक्ति अनजाने खींच यहां
लाती है, दुखी तटों पर।
सब कुछ याद दिलाता मुझको
मेरे जीवन के अतीत की
स्मरण मुझे हो आती अपनी
वह स्वतंत्र, सुख भरी जवानी,
बेशक दुख में डूबी, फिर भी
बेहद प्यारी, मधुर कहानी।
कभी यहां पर मुझको मेरा प्यार मिला था,
मुक्त, सर्वथा मुक्त, दहकता हुआ ज्वाल-सा;
मैं था बेहद सुखी, मगर कितना पागल था!..
ऐसे सुख को मैंने जाने दिया हाथ से, आसानी से।
कल जो भेंट हुई थी उससे, मेरे मन में
कैसे बोझल, कितने दुखमय भाव जगाये।
वह बदक़िस्मत बाप! भयानक है वह कितना!
शायद उससे आज भेंट फिर मेरी होगी,
और मान वह जाये आख़िर वन को छोड़े
साथ चले घर पर रहने को...

(जलपरी-बाला तट पर आती है)

देख रहीं क्या मेरी आंखें!
अरे, कहां से तुम आई हो, प्यारी बच्ची?
१८३२

टिप्पणियां

चादायेव के नाम (पृ० ६)

पुश्किन के एक घनिष्ठ मित्र, रूसी लेखक और दार्शनिक प्योत्र चादायेव (१७६४–१८५६) को सम्बोधित।

"धीरे-धीरे लुप्त हो गया दिवस उजाला..." (पृ० १०)

यह शोक-गीत, जैसा कि पुश्किन द्वारा अपने भाई को लिखे गये पत्र से स्पष्ट है, कवि ने फ़ेओदोसिया से गुर्ज़ूफ़ की यात्रा के समय रचा। "गुर्ज़ूफ़ तक धूप नहाये तवरीदा* के तटों के साथ-साथ समुद्र-यात्रा की... रात को जहाज़ पर मैंने शोक-गीत लिखा।

बन्दी (पृ० १२)

यह कविता कवि की मानसिक स्थिति को अभिव्यक्त करती है। कविता कुछ वास्तविक घटनाओं के प्रभाव का परिणाम थी। ये घटनायें थीं – पुश्किन के मित्र, दिसम्बरवादी** व्लादीमिर रायेव्स्की

---

* क्रीमिया। **– अनु०**

** दिसम्बरवादी – कुलीन क्रान्तिकारी (फ़ौजी अफ़सर, जिनमें अनेक लेखक, कवि और समालोचक शामिल थे), जिन्होंने पूरी चेतना और संगठित रूप से १८२५ में निरंकुश शासन और भूदास-प्रथा के विरुद्ध विद्रोह किया। यह विद्रोह १४ दिसम्बर को हुआ था और इसीलिये विद्रोहियों को दिसम्बरवादी कहा जाता है। **– सं०**

की गिरफ़्तारी ; किशिनेव की जेल में बन्दियों से बातचीत और फिर तीन सप्ताह तक घर में बन्दी रखे गये पुश्किन का व्यक्तिगत अनुभव। 'बन्दी' एक लोकप्रिय लोक-गीत बन गया है।

सागर से (पृ० १३)

यह कविता पुश्किन के ओदेस्सा से विदा लेने से सम्बन्धित है, जहां उन्होंने एक साल बिताया और इसके बाद वे अपने नये निर्वास-स्थान मिख़ाइलोव्स्कोये गांव के लिये रवाना हुए।

है इसमें चट्टान, समाधि है एक अमर – यहां सेंट हेलेना द्वीप की ओर संकेत है, जहां नेपोलियन १८१५ से बन्दी रहा और जहां १८२१ में उसका देहान्त हुआ।

एक अन्य मेधावी ने हमको छोड़ा ... उसके शव पर बेहद रोई आज़ादी ... – प्रमुख अंग्रेज़ कवि बायरन, जो १६ अप्रैल १८२४ को यूनान में इस दुनिया से चल बसे। यूनान में उन्होंने यूनानी जनता के स्वतन्त्रता-आन्दोलन में भाग लिया।

*** **के नाम** (पृ० १६)

यह कविता आन्ना पेत्रोव्ना केर्न (१८००–१८७६) को समर्पित है। १८१६ में पीटर्सबर्ग में पुश्किन का उससे प्रथम परिचय हुआ। मिख़ाइलोव्स्कोये गांव में अपने निर्वासकाल के समय १८२५ की गर्मियों में पुश्किन की उससे फिर भेंट हुई, जब वह पड़ोस के त्रिगोर्स्कोये गांव में किसी के यहां मेहमान के रूप में आई थी।

जाड़े की शाम (पृ० १७)

यह कविता मिख़ाइलोव्स्कोये गांव में पुश्किन के जीवन का चित्र प्रस्तुत करती है। कवि ने अपनी आया अरीना रोदिओनोव्ना को इसे समर्पित किया है, जिसके बारे में उन्होंने लिखा था – "शामों को अपनी आया से क़िस्से-कहानियां सुनता हूं ... वही मेरी एकमात्र मित्र है – और केवल उसी के साथ मुझे ऊब अनुभव नहीं होती।"

बाख़ुस का स्तुति-गान (पृ० १८)

मुन्दरियां – ऐसा माना जा सकता है कि ये गुप्त संगठनों के सदस्यों द्वारा पहनी जानेवाली ऐसी अंगूठियां या मुन्दरियां थीं, जिनपर विशेष चिह्न बने रहते थे। पुश्किन मुक्ति-समाज 'हरा लैम्प' (१८१९) के सदस्य थे। यह समाज दिसम्बरवादी समाज 'कल्याण संघ' की शाखा था। 'हरा लैम्प' समाज के सदस्य ऐसी अंगूठियां पहनते थे जिनपर प्राचीन दीपक का चिह्न अंकित रहता था जो 'हरा लैम्प' का प्रतीक था।

पैग़म्बर (पृ० १९)

पैग़म्बर के रूप में पुश्किन का अभिप्राय कवि से है। पुश्किन के एक समकालीन के कथनानुसार उन्होंने 'पैग़म्बर' शीर्षक के अन्तर्गत चार कवितायें रची थीं और वे १४ दिसम्बर १८२५ की घटनाओं को समर्पित थीं। इस संग्रह में शामिल की गयी कविता पांच दिसम्बरवादियों के फांसी पर चढ़ाये जाने की सूचना मिलने के फ़ौरन बाद लिखी गयी थी। शेष तीन कवितायें सुरक्षित नहीं रहीं।

"**साइबेरिया की उन गहरी खानों में भी ...**" (पृ० २२)

यह कविता साइबेरिया में निर्वासित दिसम्बरवादियों को सम्बोधित करके रची गयी थी। दिसम्बरवादी कवि अलेक्सान्द्र ओदोयेव्स्की ने इसके जवाब में एक कविता लिख भेजी थी, जिसकी पहली दो पंक्तियां थीं –

जो भविष्यवाणी करते ऐसे तारों की
गूंज दहकती हम तक पहुंची ...

"**अरी रूपसी, मेरे सम्मुख मत गाओ ...**" (पृ० २३)

विख्यात स्वरकार मिख़ाईल ग्लीन्का के कथनानुसार पुश्किन ने यह कविता "उस जार्जियाई धुन पर रची थी, जिसे उन्होंने संयोगवश" ग्लीन्का की एक शिष्या को गाते सुना था।

दुखी-सी युवती ...

प्यारी, दुख की छाया – सम्भवत: मारिया रायेव्स्काया की ओर संकेत है जिससे पुश्किन १८२० में उत्तरी काकेशिया में मिले थे। दिसम्बरवादी सेर्गेई वोल्कोन्स्की की पत्नी बनकर रायेव्स्काया पति के पीछे-पीछे उसके निर्वास-स्थान यानी साइबेरिया चली गयी थी।

अंतजर (पृ० २४)

अंतजर – एक विष-वृक्ष, जो जावा तथा मलेशिया में उगता है और वहां रहनेवाले क़बीले उसके रस से अपने तीरों को विषैला बनाते थे।

इस कविता के दूसरी बार छपने पर पुश्किन ने "ज़ार" की जगह "प्रिंस" शब्द लिख दिया था। निश्चय ही उन्हें विवश होकर ऐसा परिवर्तन करना पड़ा था, क्योंकि कविता के पहली बार छपने पर जेनदार्मों के संचालक बेनकेनदोर्फ़ ने बहुत नाराज़गी ज़ाहिर की थी।

"जार्जिया के गिरि-टीलों को रात्रि-तिमिर ने घेरा है ..." (पृ० २५)

हस्तलिखित, प्रारम्भिक रूप में उपलब्ध इस कविता की प्रति से स्पष्ट हो जाता है कि वह १८२० की गर्मियों में जनरल रायेव्स्की के परिवार के साथ पुश्किन की प्रथम काकेशिया-यात्रा और मारिया रायेव्स्काया-वोल्कोन्स्काया के प्रति कवि के प्रेम से अनुप्रेरित है।

काकेशिया (पृ० २६)

इस कविता का प्रेरणा-स्रोत वे प्रभाव हैं जो १८२६ के मई से अगस्त महीने की पुश्किन की काकेशिया-यात्रा के समय उनके मन पर पड़े।

"सुघड़, सुडौल सुन्दरी तुमको ..." (पृ० ३०)

कवि की मंगेतर न० न० गोंचारोवा को सम्बोधित।

"क्या रखता है अर्थ तुम्हारे लिये नाम मेरा?" (पृ० ३१)

पुश्किन ने यह कविता प्रसिद्ध पोलैंडी सुन्दरी कारोलीना सोबान्स्काया के एलबम में लिखी थी। पुश्किन की १८२१ में कीयेव में उससे जान-पहचान हुई थी और बाद को ओदेस्सा और पीटर्सबर्ग में भी वे उससे मिले।

"मेरी प्यारी, वह क्षण आया, चैन चाहता मेरा मन..." (पृ० ४१)

पत्नी को सम्बोधित करके लिखी गयी इस कविता में पुश्किन ने इस बात की तीव्राभिलाषा व्यक्त की है कि वह सेवानिवृत हो जायें, पीटर्सबर्ग, राजदरबार और ऊंचे समाज से अपने को अलग करके गांव में जा बसें और वहां स्वतन्त्र सृजनात्मक जीवन व्यतीत करें।

"निर्मित किया स्मारक अपना, नहीं रचा, पर हाथों से..." (पृ० ४३)

यह प्राक्कथा प्राचीन रोम के होरात्सिओ कवि की 'मेल्पोमेना* के प्रति' कविता से लिया गया है।

पुश्किन ने कवित्वपूर्ण सम्बोधन में अपने सृजन का सार निकाला है।

विजय-मीनार सिकन्दर की – ग्रेनाइट के उस स्तम्भ की तरफ़ इशारा है, जो पीटर्सबर्ग के प्रासाद-चौक में सम्राट अलेक्सान्द्र प्रथम की स्मृति में खड़ा किया गया।

जिप्सी (पृ० ४७)

पुश्किन का अन्तिम रोमानी खण्ड-काव्य। १८२४ में रचित।

रोमानी प्रकृति वाले अपने निर्वासित नायक को, जो सभ्य समाज से, जहां शारीरिक और नैतिक दासता का बोलबाला है, मुक्ति पाने

---

* मेल्पोमेना – यूनानी पौराणिक साहित्य की कला-देवियों में से एक। **– सं०**

की चाह लेकर भागता है, पुश्किन ऐसे वातावरण में ले आते हैं जहां न तो कोई क़ानून-कायदे हैं, न किसी तरह की मजबूरियां हैं, और न पारस्परिक दायित्व हैं। यहीं पर यह बात स्पष्ट होती है कि अपने लिये स्वतन्त्रता की मांग करनेवाले अलेको दूसरों को इसी तरह की आज़ादी नहीं देना चाहता, यदि इससे उनके हितों और अधिकारों को क्षति पहुंचती है।

इस तरह पुश्किन ने अपने इस खण्ड-काव्य में परम्परागत रोमानी, स्वतन्त्रता-प्रेमी नायक और निरपेक्ष रोमानी आज़ादी के आदर्श को भी खण्डित किया है।

व्यक्ति और समाज के पारस्परिक विरोधों-असंगतियों पर प्रकाश डालनेवाली ये सभी समस्यायें दिसम्बरवादियों के विद्रोह के पहले के वर्षों में विशेषकर बहुत महत्त्वपूर्ण थीं। इसीलिये उनके क्षेत्रों में पुश्किन की इस लम्बी कविता को बड़ी लोकप्रियता प्राप्त हुई। दिसम्बरवादी कवि रिलेयेव ने २५ मार्च १८२५ के अपने पत्र में पुश्किन को लिखा— "'जिप्सी' पर तो सब दीवाने हैं।"

क़िस्सा एक सुना, वह तुम्हें सुनाता हूं... —सम्राट आगस्तस ने रोम के ओविडी कवि को काले सागर के तटों पर निर्वासित कर दिया था। उसके जीवन के बारे में बेस्साराबिया में दन्तकथाएं प्रचलित हैं (पृ० ५४)

...जहां रूसियों ने तुर्कों को लोहा मनवाया और किया था विस्तृत अपनी सीमा का आंचल—बेस्साराबिया बहुत समय तक रूसी-तुर्की युद्धों का क्षेत्र बना रहा। १८१२ में वहां रूस और तुर्की के बीच सीमा निर्धारित की गयी। (पृ० ७३)

तांबे का घुड़सवार (पृ० ७५)

१८३३ में लिखा गया यह खण्ड-काव्य पुश्किन की एक सबसे गहन, साहसपूर्ण और कलात्मक दृष्टि से परिमार्जित रचना है। इस खण्ड-काव्य में सामान्यीकृत बिम्बात्मक रूप में एक-दूसरी की विरोधी दो

शक्तियां प्रस्तुत की गयी हैं। एक शक्ति तो पीटर प्रथम* के रूप में राज्य-सत्ता का प्रतिनिधित्व करती है (जो बाद में 'तांबे के घुड़सवार' के रूप में प्रतीकात्मक रूप से सजीव है) और दूसरी शक्ति के रूप में है अपने निजी हितों और दुख-दर्दों के साथ मानव। पीटर प्रथम की चर्चा करते हुए पुश्किन किसी भी तरह के अगर-मगर के बिना उसके महान राजकीय कार्य और उसके द्वारा निर्मित भव्य नगर की प्रशंसा करते हैं। किन्तु यही राजकीय सूझ-बूझ एक सीधे-सादे, साधारण और निर्दोष व्यक्ति यानी येव्गेनी की बरबादी का कारण बनती है।

'तांबे का घुड़सवार' खण्ड-काव्य पुश्किन के जीवनकाल में नहीं छपा था, क्योंकि ज़ार निकोलाई प्रथम ने कवि से इसमें ऐसे परिवर्तन करने की मांग की जो उन्होंने नहीं करने चाहे। पुश्किन की मृत्यु के बाद कवि वसीली जूकोव्स्की ने इसे ठीक-ठाक करके प्रकाशित कर-वाया।

इस लम्बी कविता में जिस बाढ़ का वर्णन है, वह ७ नवम्बर १८२४ को पीटर्सबर्ग में आई थी, बहुत ही भयानक थी और उससे बड़ी तबाही हुई थी। पुश्किन उस समय मिख़ाइलोव्स्कोये में रह रहे थे, उन्होंने बाढ़ की सभी तफ़सीलों में बड़ी दिलचस्पी ली और उसके शिकार होनेवालों के प्रति हार्दिक सहानुभूति अनुभव की। "यह बाढ़ मुझे पागल किये दे रही है", उन्होंने ४ दिसम्बर १८२४ के पत्र में अपने भाई को यह मानते हुए कि सरकार द्वारा उठाये गये क़दम पर्याप्त नहीं हैं, लिखा तथा इतना और जोड़ दिया – "अगर तुम किसी बदक़िस्मत की मदद करना चाहो, तो ओनेगिन की रक़म (अर्थात 'येव्गेनी ओनेगिन' के पहले अध्याय के प्रकाशन से प्राप्त) से मदद करो। किन्तु किसी भी तरह का ज़बानी या लिखित रूप में ढोल पीटे बिना।"

---

* पीटर प्रथम (१६७२–१७२५) रूसी ज़ार, महान राजकीय कार्यकर्त्ता। – सं०

मोज़ार्ट और सालेरी (पृ० १४७)

यह काव्य-नाटिका १८३० में लिखी गयी, किन्तु इसका विचार कवि के मस्तिष्क में १८२६ में आया था। यह नाटिका १८३१ में प्रकाशित हुई।

पुश्किन ने इस अफ़वाह को इस विषय-वस्तु का आधार बनाया मानो वियेना के स्वरकार सालेरी ने ईर्ष्यावश मेधावी मोज़ार्ट को ज़हर देकर मार डाला। मोज़ार्ट की १७९१ में पैंतीस वर्ष की आयु में मृत्यु हुई और उसे इस बात का पूरा विश्वास था कि ज़हर देकर उसे मारा गया है। सालेरी (वह मोज़ार्ट से छः वर्ष बड़ा था), काफ़ी बुढ़ापे तक जीता रहा (१८२५ में मरा), जीवन के अन्तिम वर्षों में मानसिक दोष से बहुत खिन्न रहा और इस बात के लिये उसने अनेक बार पश्चाताप प्रकट किया कि मोज़ार्ट को ज़हर दिया। इस चीज़ के बावजूद कि उन्हीं दिनों में इन दोनों स्वरकारों के कुछ परिचितों और बाद में संगीत-इतिहासकारों तथा मोज़ार्ट के जीवनी-लेखकों ने इस अपराध का निर्णायक रूप से खण्डन किया, यह प्रश्न अभी तक पूरी तरह से तय नहीं हुआ है।

मोज़ार्ट को उसके मित्र सालेरी द्वारा ज़हर देने से सम्बन्धित तथ्य को पुश्किन ऐसा मानते थे जिसकी पुष्टि हो चुकी है और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जो सर्वथा सम्भव है। सालेरी के बारे में अपनी टिप्पणी में पुश्किन ने लिखा है:

"'डोन जुआन'* के प्रथम प्रस्तुतीकरण के समय, जब विस्मित संगीत-पारखियों से खचाखच भरा हुआ थियेटर चुपचाप मोज़ार्ट के लयपूर्ण संगीत का रसपान कर रहा था, किसी ने ज़ोर से सीटी बजायी। सभी ने ग़ुस्से से उस तरफ़ देखा और विख्यात सालेरी ईर्ष्या से जला-भुना हुआ पागल की तरह हॉल से बाहर चला गया... कुछ जर्मन पत्र-पत्रिकाओं ने लिखा है कि मृत्यु-शय्या पर मानो उसने महान मोज़ार्ट

---

* मोज़ार्ट का ऑपेरा। **—सं०**

को ज़हर देने के इस भयानक अपराध को स्वीकार किया था। ईर्षालु सालेरी यदि 'डोन जुआन' को सुनते हुए सीटी बजा सकता था, तो वह उसके रचयिता को ज़हर भी दे सकता था।"

इस त्रासदी का मुख्य विषय तो आवेश के रूप में ईर्ष्या की वह भावना है, जो इसका शिकार होनेवाले व्यक्ति को भयानक अपराध की सीमा तक ले जा सकता है। किन्तु मोज़ार्ट के प्रति सालेरी का शत्रुभाव केवल ईर्ष्या के कारण ही नहीं है। मोज़ार्ट की हत्या करने की चाह को वह कला के सम्मुख अपना कर्त्तव्य मानता है। कला और जीवन के प्रति मोज़ार्ट की धारणा के कला के लिये हानिकारक होने का ग़लत विचार सालेरी से अपराध करवाता है, किन्तु उसकी विजय नहीं होती। मोज़ार्ट अनजाने ही एक विचार को व्यक्त करता है, किन्तु वह विचार महान है: "प्रतिभा और नीचता दोनों संग न रहतीं" – जिसे सुनकर सालेरी की चेतना में बिजली-सी दौड़ जाती है, पर अपराध किया जा चुका था...

'मोज़ार्ट और सालेरी' ही पुश्किन की एकमात्र नाटिका है जो कवि के जीवनकाल में रंगमंच पर प्रस्तुत की गयी (पीटर्सबर्ग के बोल्शोई थियेटर में २७ जनवरी और १ फ़रवरी १८३२ को मंचित)।

'इफ़ीगेनी' – जर्मन स्वरकार ग्ल्यूक के एक ऑपेरा से अभिप्राय है। –पृष्ठ १५०

voi che sapete – मोज़ार्ट के 'फ़िगारो की शादी' ऑपेरा में केरूबीनो के प्रेम-गीत की ओर संकेत है। –पृष्ठ १५१

'तारार' – बोमार्चेस के पाठ पर सालेरी का ऑपेरा। –पृष्ठ १६२

झूठ बात क्या – उसकी, उस बोनारोट्टी की? या कि बनाया अपने मन से लोगों ने यह झूठा क़िस्सा – उस झूठी दन्तकथा से अभिप्राय है मानो पुनरुत्थान काल के प्रसिद्ध इतालवी चित्रकार माइकल एंजेलो बोनारोट्टी ने अपने माडेल की खंजर मारकर इसलिये हत्या कर दी थी कि मृत्यु से पूर्व की ईसा मसीह की यातनाओं को अधिक सजीव और अचूक रूप से अभिव्यक्ति दे सके। –पृष्ठ १६५

पाषाणी अतिथि (पृ० १६६)

यह काव्य-नाटिका पुश्किन ने १८३० की पतझर में बोल्दीनो में समाप्त की थी, यद्यपि इसका कथानक उन्होंने कई वर्ष पहले सोच लिया था। पुश्किन के जीवनकाल में यह प्रकाशित नहीं हुई थी।

यह नाटिका मानवीय चित्तवृत्ति के विश्लेषण को समर्पित है– इसमें प्रेम-सम्बन्धी भावावेश या मनोवृत्ति को ऐसे व्यक्ति के भाग्य को केन्द्र-बिन्दु बनाया गया है, जिसने प्रेमावेश को अपने जीवन का मुख्य सार बना लिया था। पुश्किन की इस रचना में डोन जुआन का बिम्ब विश्व-साहित्य में उसके पूर्वगामियों के समान नहीं है। यह निश्छल व्यक्ति है, निस्स्वार्थ भाव से मोह में फंसनेवाला, दृढ़-संकल्पी, साहसी और साथ ही काव्यमय है। नारियों के प्रति उसका रवैया भावनाहीन लम्पट, औरतों को अपने चंगुल में फांसनेवाले का नहीं है, बल्कि उसमें हमेशा सच्चा और आवेशपूर्ण लगाव रहता है। डोना आन्ना उसका अन्तिम और वास्तविक प्रेम है। किन्तु उनका सूत्रबद्ध होना सम्भव नहीं। पुश्किन की नाटिका में कमांडर का बुत वह निठुर और अटल "भाग्य" है जो डोन जुआन को उस समय नष्ट कर देता है, जब वह अपने सुख-सौभाग्य के निकट होता है। डोना आन्ना के प्यार के प्रभाव से डोन जुआन का चाहे कितना भी "पुनर्जन्म" क्यों न हुआ, फिर भी उसके अतीत, उसके चंचल, मस्त-फक्कड़ जीवन, उसके द्वारा की गयी बुराई को नष्ट नहीं किया जा सकता, पत्थर के बुत की तरह वह अभेद्य है।

पुश्किन ने इसकी प्राक्कथा मोज़ार्ट के 'डोन जुआन' ऑपेरा के लिये डा पोन्टे द्वारा लिखे गये काव्य-पाठ से ली है।

जलपरी (पृ० २२१)

पुश्किन ने १८२६ और १८३२ में इस नाटिका को लिखा, किन्तु पूरा नहीं किया। पुश्किन की मृत्यु के बाद 'सोव्रेमेन्निक' (समकालीन) पत्रिका में इसे १८३७ में प्रकाशित किया गया। प्रथम प्रकाशन के समय सम्पादक मण्डल ने इसको 'जलपरी' शीर्षक दिया।

अन्य दुखान्ती नाटिकाओं की तुलना में 'जलपरी' अपने रूसी लोक-स्वरूप की दृष्टि से निराली है। इसकी विषय-वस्तु, पात्रों के बिम्बों, नाटिका की साधारण घटनाओं और भाषा में इस लोक-स्वरूप की अनुभूति होती है। पुश्किन ने जलपरियों के बारे में विस्तृत रूप से प्रचलित इस उपाख्यान को आधार बनाया है जिसके अनुसार तबाह कर दी गयी और डूब जानेवाली लड़कियां मृत्यु के बाद जलपरियां बन जाती हैं।

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिज़ाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी।

हमारा पता है :

प्रगति प्रकाशन, १७, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।

"...पुश्किन उन मेधाओं, ऐति-
हासिक महत्व के उन लोगों में से
हैं, जो वर्तमान के लिये काम करते
हुए भविष्य की ज़मीन तैयार करते
हैं।"

विस्सारिओन बेलीन्स्की

"पुश्किन हमारे साहित्यिक दिग्गज, हमारे महानतम गौरव और रूस की आत्मिक शक्ति की पूर्णतम अभिव्यक्ति हैं।"

म० गोर्की

अलेक्सान्द्र पुश्किन (१७९९–१८३७) की चुनी हुई रचनाओं के इस खण्ड में महाकवि की सर्वोत्कृष्ट गीतिकाओं – १८१८ से १८३६ की कविताओं, काव्य-नाटिकाओं – 'मोज़ार्ट और सालेरी' (१८३०), 'पाषाणी अतिथि' (१८३०), 'कंजूस सूरमा' (१८३०), लोक-नाटिका 'जल-परी' (१८३०), खण्ड-काव्यों – 'जिप्सी' (१८२६) तथा 'तांबे का घुड़सवार' (१८३३), और अद्भुत रूसी लोक-कथाओं के आधार पर रची गयी काव्य-कथाओं को स्थान दिया गया है।

"पुश्किन की कविता जादुई आकर्षण, अविस्मरणीय सौन्दर्य और अवर्णनीय सहजता से परिपूर्ण है। वह बड़ी आसानी से हमारी आत्मा में उतर जाती है और सदा के लिये वहीं अपना घर बना लेती है।"

म० गोर्की